मंडन मिश्र : मीमांसा अद्वैत समागम

सम्पादक : रमेश • विनय कुमार झा • संयोग ठाकुर

मंडन मिश्र

मीमांसा अद्वैत समागम

- ब्रह्मसिद्धि
- स्फोटसिद्धि
- भावना विवेक
- विधि विवेक
- विभ्रम विवेक
- मीमांसानुक्रमणीक
- काशी मोक्ष निर्णय

सम्पादक

रमेश

विनय कुमार झा

संयोग ठाकुर

सम्वाद सूत्र

मिथिलाक प्राचीन आ मध्यकालीन विभूति सभ पर शोधकार्य प्रायः नहिएँ जकाँ भेल अछि। एहिमे विद्यापति बेस कपड़गर आ कर्मसाँढ़ निकललाह। मुदा शेष विभूति सभ एखनहुँ झाम गूड़ैत छथि।

मिथिलाक दार्शनिक परंपराक सर्वाधिक जगजियार नक्षत्र मण्डन मिश्र आ हुनक जीवन-संगिनी भारती, वाचस्पति मिश्र, कुमारिल सभक मूल्यांकनमे सचेष्ट नहि छी आ ने एहि लेल साकांछ छी जे देसक आन कोनसँ ओहि महापुरुषक प्रति कोनो अन्याय नहि हो। ई हमर मिथिला-समाजक जड़ता आ खतरनाक आलस्य थिक। हम सभ बिना चिन्ह-पहचीनकेँ किनको माला जपि सकैत छी, मुदा शोधार्थी बनि तत्त्व-चिन्तन करी आ सत्यक अन्वेषणक लेल क्रियाशील होइ, तकर परंपरा जेना विलुप्त भेल जा रहल अछि मिथिला समाजेसँ। जँ से नहि त' कतओक युगसँ महान् दार्शनिक मण्डनक प्रति दाक्षिणात्स विद्वत्-समाज द्वारा अत्याचार कएल जाइत रहल आ हमरा लोकनि कोना मुँह सापृत् केने रहलहुँ?

खैर, जे भेल, से भेल। पूरखा लोकनिकेँ गाड़ि पढ़बासँ बेसी सकारात्मक बात ई थिक जे किछु नव प्रयास आरम्भ कएल जाय। सैह सोचि हम मण्डन-विषयक विवेचना-गोष्ठी महिषीमे आयोजित करबाक नियार कएल। एकरा पाछू एहि विषयक पैघ विद्वान आ अध्येता मित्रवर डॉ. तारानन्द वियोगी आ मण्डन-प्रेमी दयानन्द झाक प्रेरणा छल। दर्शन-क्षेत्रक शोधार्थी धीरज जीक अन्तहीन परिचर्चा आ महिषीक संग जुड़ल भारती मण्डन आ तारा माइक ऐतिहासिकता छल।

मुदा सभसँ पैघ प्रेरणा छल—अपन मातृभाषा मैथिलीक दर्शन-विषयक दारिद्रय, जकर भण्डारमे 'किछुओ' सामग्री जुटेबाक मेहन्ता छल। आ सेहन्ता छल मिथिला समाजक देसभरि माथ ऊँच करयबला विद्वानक अवदान, व्यक्तित्व आ ऐतिहासिकताक निश्शंक स्थापनामे भ्रमजाल फाड़बाक प्रयास करबाक। एहि लेल हमरा 'बीज-मंत्र' महिषीक प्रतापे भेटि चुकल छल। नियार कएल जे विवेचना-गोष्ठीक संग स्मारिका वा संग्रह प्रकाशित

कएल जाय, जाहिसँ गप्पक किछु आधार बनि सकए आ गोष्ठीक सुखदायी परिणाम हो।

गोष्ठी आ आलेख लेल निम्नांकित विद्वानकेँ तत्काल आमंत्रित कएल गेल—पं. सहदेव झा (ठाढ़ी, मधुबनी), डॉ. वैद्यनाथ झा(मुजफ्फरपुर), पं. गोविन्द झा (पटना), सतीश चन्द्र झा (हैदराबाद), पं. शोभाकान्त जयदेव झा (दरभंगा), डॉ. जयकांत मिश्र (इलाहाबाद), पं. किशोरनाथ झा (इलाहाबाद), पं. नन्दीश्वर झा (ठाढ़ी), डॉ. परमानन्द पाठक (सुपौल), डॉ. रुद्रधर झा नवल (महिषी), शिवशङ्कर श्रीनिवास (लोहना), राम चैतन्य धीरज (सहरसा), डॉ. तारानन्द वियोगी (महिषी), प्रो. महेन्द्र नारायण कर्ण (शिमला), नचिकेता (हैदराबाद), प्रो. मायानन्द मिश्र (सहरसा), हेतुकर झा (पटना), गिरीश कुमार झा (पटना), मोहन भारद्वाज (पटना), दयानन्द झा (महिषी), भवनाथ झा 'भवन' (रुपौली), उदयचन्द्र झा विनोद (रहिका) आदि। बादमे, उपर्युक्त सूचीक अतिरिक्त सेहो कएटा मूर्धन्य विद्वानकेँ आमंत्रित कएल गेलनि।

उपर्युक्त सूचीमेसँ मात्र सात विद्वान—पं. सहदेव झा, डॉ. वैद्यानाथ झा, सतीशचन्द्र झा, डॉ. जयकान्त मिश्र, पं. किशोर नाथ झा, रामचैतन्य धीरज आ डॉ. तारानन्द वियोगीक आलेख प्राप्त भ' सकल। शेष विद्वान निजी कारणवश निबन्ध नहि द' सकलाह।

एहि संग्रह लेल आमंत्रण-पत्रमे आलेखक विषय आ शीर्षक निम्नवत् चुनल गेल छल—

—भारती-मण्डनक अभिज्ञान, ऐतिहासिकता, काल आ स्थल-निर्धारण।

—सांस्कृतिक आ दार्शनिक धारमे मण्डनकालीन मिथिला।

—मण्डन मिश्रक मीमांसा ग्रंथ आ ताहिमे प्रयुक्त हुनकर स्थापना।

—मण्डन मिश्रक व्याकरण दर्शन : भाषा-विज्ञानमे स्फोटवादक अभिनव आयाम।

—मण्डन मिश्रक वेदान्त ग्रंथ : विचारधारा आ दर्शनमे जीवन-यात्राक अन्वेषण आ शाङ्कर-मतक संग तुलानात्मक विवेचन।

—भारतीय दर्शनकेँ मण्डन मिश्रक अवदान।

—परवर्त्ती विचार प्रणाली पर मण्डन मिश्रक प्रभाव।

—आधुनिक मनीषी चिन्तक पर मण्डनक सुचिन्तित दर्शनक प्रेरणा आ प्रभाव।

—भावी मानव-समाज निर्माणक दिशामे भारती-मण्डनक योगदान आ तकर वैशिष्ट्यक सम्यक् समाख्यान।
—मिथिलाक आध्यात्मिक जीवनमे भारती मण्डन अवदान
—भारती-मण्डनक दर्शन आ जीवन-शैलीक आजुक परिप्रेक्षयमे प्रासंगिकता।
—मिथिला समाजक इतिहास आ वर्त्तमानक अयना मे विदेह आ भारती-मण्डनक जीवन-शैलीक नाप-जोख।
—भारती-मण्डन : दन्तकथा बनान यथार्थ।
—मिथिलाक सामजिक आ धार्मिक जीवनमे कर्मकण्ड आ मण्डनक प्रभाव।
—मण्डन जीवन-शैली आ विचारधाराक आलोकमे मिथिलाक सामाजिक जीवनक समाजशास्त्रीय विवेचन।
—मिथिलाक परिचितिमे मण्डन-भारतीक योगदान।
—मण्डन-भारती शङ्कर-कुमारिल : मिथिला दिन बहैत इतिहासक एक धारा।
—मण्डन-अध्ययन-स्रोत विवेचन।
—मण्डन आ ब्रह्मासिद्धिक सन्दर्भमे कुप्पुस्वामी आ एलेन थ्रे सरक दृष्टिकोणक नाप-जोख।
—शङ्कर-विजय आ भारती टीका : एक वैज्ञानिक परीक्षण।
—मिथिलाक दार्शनिक परम्परामे मण्डनक स्थान-निरुपण।
—प्राचीन आ पूर्व-मध्यकालीन मिथिलाक ऐतिहासिक आ दार्शनिक मंच पर मण्डन-भारतीक भूमिका।

उपर्युक्त शीर्षक सभ संकेतक छल, सीमापरक नहि। शीर्षकक बाम-दहिन जाक' अथवा एकाधिक संख्यामे निबन्ध पठाओल जा सकैत छल। मैथिलीक संग हिन्दी आ अङरेजी-अनुवादक संग्रह छपेबाक गप्प सेहो छल।

मुदा, आज्ञाक विपरीत निबन्ध अल्पसंख्यामे आयल आ सेहो हमर योजनानुसार नहिएँ आबि सकल। 'भारती मण्डन', सुपौलमे विज्ञापनो भेल छल। तथापि, मिथिला-समाज आ मैथिल सुधीजन ओतेक ध्यान नहि देलनि, जतबा अपेक्षित छल। तकर परिणाम ई भेल जे विवेचना-गोष्ठीक आयोजन तत्काल स्थगित भ' गेल आ संग्रह प्रकाशन प्राथमिकता पओलक। डॉ. तारानन्द वियोगी आ डॉ. दीनानाथ दीनूक विभिन्न प्रकारक सक्रियता, सहयोग आ सुझाव उपलब्ध होइत गेल आ कालकमे मिथिला-मैथिलीक

अनन्य सिनेही श्री चन्द्रमोहन कर्ण, हैदराबाद आ नवोदित समीक्षक-कथाकार श्री सुरेन्द्रनाथ, सहरसाक अर्थ-सहयोग सेहो उपलब्ध भेल। प्रियवर केदार काननक अथक परिश्रम आ सम्पादन-सहयोग, मित्रवर सुरेन्द्रनाथ आ डॉ. दीनानाथ दीनूक सर्वताभावेन सहयोगसँ आइ ई संग्रह अपने लोकनिक हाथमे अछि। कहबी अछि, जे सूगाक दाम सूगे कहत।

'मडंन मिश्र और उनका अद्वैतवादक' (सं. तारानन्द वियोगी, लेखक पं. सहदेव झा) नामक सद्यः प्रकाशित महत्वपूर्ण पोथीक पाण्डुलिपिकेँ टंकण करेबाक दायित्व मित्रवर वियोगी हमरा देने छलाह। ओ पाण्डुलिपि पढ़ैत-पढ़ैत हमर मण्डन विषयक, औस्मुक्य आर गहींर भेल छल। आइ ओ पोथी हमरा लोकनिक एहि समस्त तत्त्वचिंतन' आ 'बहस'क आधार भूमिका काज क' रहल अछि। मण्डन विषयक आ हिन्दीमे एहि पोथीक वैज्ञानिक ढँगसँ प्रस्तुत करबाक समस्त वियोगीकेँ छनि, ताहूसँ पैघ बात ई थिक, जे एहि पोथीक माध्यमे ओ माध्यमे ओ मण्डन विरूद्ध षड्यंत्रक जाल बुननिहार कुटिल विद्वत् समाजकेँ महिषीक अखड़ाहाक माटि फेकलनि अछि।

असलमे, दन्तकथा आ किंवदन्तीकेँ आधार बनाक' बहुत रास अनर्गल प्रलाप अतीतसँ वर्त्तमान धरि होइत रहल, जकर परिणाम भेल अनावश्यक संशय आ भ्रमक स्थितिक निर्माण। एहि सभ विष-कथाक आधार छल—'शङ्कर दिग्विजय' नामक नाटक, जे कि छल यथार्थ नहि। शङ्कराचार्यकेँ महानताक राजमुकुट पहिरेबाक उत्साहमे किछु विद्वान मण्डनक संग अन्यायक परम्परे स्थापित क' देलनि, जे कइएक युगधरि चलैत रहल।

वस्तुतः मण्डनक कृतित्त्व आ विचारधाराक आधार पर दन्तकथासँ दूर भ' क' हुनकर मूल्यांकनक गम्भीर प्रयास भेबे नहि कएल। आ जे भेबो कएल त' से भेल 'ब्रह्म-सिद्धि'क आधार बनाक' कुप्पुस्वामी द्वारा आ पाश्चात्य(अमरीकी) विद्वान एलेन थ्रेसरक द्वारा। हेबनिमे एहि 'एप्रोच'सँ ई काज पं. सहदेव झा आ डॉ. तारानन्द वियोगीक सत्प्रयाससँ हिन्दीमे भेल, जे कि तकंसंगत अछि।

किंवदन्तीकेँ आधार बनाक' कएल गेल मूल्यांकनसँ मण्डन आ मिथिलाक कोनोटा उपकार सम्भव नहि। तत्कालीन साहित्य, धर्म, अध्यात्म, दर्शन आ इतिहासक मंथन आ अन्तर-सम्पुष्टि पर.....सँ कोनो तथ्यक स्थापना सम्भव आ उचित अछि। तेँ आजुक शोधार्थी वा मण्डन-विषयक

कार्यकर्त्ताकेँ शोभा दैत छै जे ओ अपन नजरिकेँ वैज्ञानिक बनाक' अत्याधुनिक विचारधारा रखैत काज करै। अन्यथा, एहि सभ विषयक संग अदौकालीन पुरातनपंथी आ कर्मकाण्डी अत्याचारक पुनरावृतिए टा हैत। तेँ एहि पोथीक सम्पादन-कालमे अपन अद्यतन विचारधारा आ दृष्टिकोणक ध्यान राखल गेल अछि। लेखकगण अपन-अपन दृष्टिकोण उपस्थापित केलनि अछि आ कएक ठाम हम अपन सम्पादकीय असहमतियो स्वभावतः व्यक्त कएल अछि। हमरा नजरिमे महत्वपूर्ण ई बात भेल अछि जे एतेक विद्वान्त एहि सभ विषय पर एकठाम संग्रहित भेलाह अछि, जे मैथिली आ मिथिलाक लेल अवश्य नवारम्भ थिक, विशेषतः दर्शन क्षेत्रमे आ सेहो मण्डन सम्बन्धी विषय पर। संग्रहमे संस्कृत, हिन्दी आ अङरेजीक निबन्धकेँ राखब, संग्रह आ विषयक स्थायी महत्वकेँ बढ़ाओत से आशा अछि।

एखन धरि मण्डन मिश्रक सम्बन्धमे बहुत रास भ्रान्ति-धारणाकेँ स्थापित करबाक कुप्रयास भेल अछि। कि त' ओ शास्त्रार्थमे हारि गेलाह आ शङ्कराचार्यक शिष्यत्व ग्रहण केलनि, कि त' आजुक मिथिलाक महिषी(सहरसा)क ओ नहि छलाह, अपितु मध्यप्रदेशक 'माहिष्मती' केर छलाह; कि त' मण्डन आ सुरेश्वराचार्य एकहि, व्यक्ति छलाह, सूगा आख्यान आदि....। एहि सभ भ्रमजालक कुहेस आब करीब-करीब फाटि चुकल अछि। विद्वत् समाज ओहि तथाकथित शास्त्रार्थक कल्पनाशीलताकेँ खारिज क' चुकल छथि आ स्थापित भ' गेल अछि जे मण्डन मिश्र एही महिषीक (सहरसा स्थित) छलाह। सुरेश्वराचार्य क्यो आर विद्वान छलाह, मण्डन नहि।

मुदा एहि पोथीक किछु विद्वान प्रो. हरिमोहन झा जकाँ दन्तकथाकेँ पूर्णतः खारिज करबाक साधंस नहि क' सकलाह अछि आ ओ दन्तकथाक आधार पर मण्डन केँ गौरवान्वित करबाक एक बेर फेर अपना ढंगक प्रयास केलनि अछि, जकर सफलताक प्रतिशत प्रश्न चेन्हाधीन अछि। तथापि ओहो निबन्ध सभ बहसक प्रावधान त' करिते अछि।

कोनो टा जीवन-दर्शनक समाजमे प्रासंगिकता रहले पर, ओहि दर्शन पर गप्प करबाक लेल समाज प्रवृत होइत अछि। तेँ प्रश्न उठब स्वाभाविके जे मण्डन-दर्शनक आजुक समाजक लेल की प्रासगिकता अछि? एहू प्रश्न पर विचार करब एहि पोथीक प्रतिपाद्य अछि। मण्डनक कर्मवादी आ जगत ब्रह्मवादी दर्शनकेँ 'कर्मकाण्डी' दर्शन बूझल गेल अछि, जे

मण्डनक संग त' छोट मुदा मिथिलेक संग पैघ दुर्घटना छल। हुनकर ग्राहस्थ-दर्शन नहि जानि, क' सहस्राब्दी धरि एहि देशमे प्रासंगिक बनल रहल! हुनकर अद्वैतवाद शङ्करक अद्वैतवादसँ एकदम्मे भिन्न छल आ हुनकामे मीमांसा आ अद्वैतक अद्भुत संगम भेल अछि जखन कि मीमांसाकेँ सारि बूझ जाइत रहल अछि। मण्डनक मीमांसा-दर्शनकेँ बहुत गओरसँ देखबाक जरूरति छैक। मण्डन एहि अर्थमे विरला दार्शनिक योद्धा छथि जे मीमांसा आ अद्वैत दुनूक समागम वैज्ञानिक ढंगे करैत छथि! विज्ञान-सम्मत विध्यंवाद होब' भाषा विज्ञानक स्फोटवाद, मण्डन 'अतुलित योद्धा' छथि अपना क्षेत्र मे।

मुदा हमर ई आग्रह नहि अछि जे हमर सम्पादकीय वक्तव्य केँ तत्सम्बन्धी बहसक सम्पूर्ण रूपेण पटाक्षेप मानिये टा लेल जाय। कम-सँ-कम सम्वादक परम्परा त' स्थापित हो आ हमरा लोकनि अपन थाती केँ चिन्हबाक प्रयास त' करी। अपन नीर-क्षीर- विवेचन-विवेक उपयोग त' करय समाज? विद्यापतिक मूल्यांकन आब बहुत भेल, यद्यपि अंखिगर मूल्यांकन हैब परमावश्यक अछि। एहि प्रयास सँ जँ मिथिलाक विद्वत समाजक कनियो तन्द्राभ्रंग भेल त' हम अपन परिश्रम सार्थक बूझब।

हम मानैत छी जे तत्कालीन समाज आ इतिहासक मूल्यांकन करबाक बेगरता रहिए गेल आ तकर अपना मे मण्डनक चेहरा देखबाक बेगरता सेहो अवशेष अछि। समाजशास्त्रीय आ ऐतिहासिक अध्ययन मण्डनक-दर्शनक सम्यक व्याख्या क' सकत, जखन कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण सँ दार्शनिको व्याख्या(हुनकर दर्शनक) नगण्ये जकाँ अद्यपर्यन्त भेल अछि। मण्डनकालीन समाजक ऐतिहासिक आ सामन्ती-समाज आ अर्थ-व्यवस्था केँ ध्यान मे राखिए क' एहि दर्शन-संसारक सही फोटो घीचल जा सकैछ। से करब शेष अछि आ हमरा विश्वास अछि, ताहि माटि के स्वीकार करएवला वीर अवश्य अपन हाक लगैताह!

रमेश

रचना-क्रम

1. मिथिला मे मण्डन-कुमारिल-वाचस्पतिक
दार्शनिक परम्परा आ शङ्कराचार्य/डॉ. सुरेश्वर झा/7
2. भारती-मण्डन-शङ्कराचार्यक शास्त्रार्थक कथा
मात्र दन्तकथा थिक/ डॉ. जयकान्त मिश्र/19
3. वाचस्पति मिश्र पर मण्डन मिश्रक प्रभाव/ डॉ. किशोरनाथ झा/22
4. मण्डन-उम्बेक-भवभूति : तथ्यात्मक स्पष्टीकरण/ सतीशचन्द्र झा/26
5. मण्डन-गुण-ग्राम/ नवीन चौधरी/33
6. मिथिलाक गौरव विदुषी भारती/डॉ. विनय विश्वबन्धु/37
7. भारती-मण्डन की ऐतिहासिकता, काल तथा स्थल- निर्धारण/ डॉ. वैद्यनाथ झा/42
8. वाचस्पति पर भावद्वैत का प्रभाव/ पं. सहदेव झा/63
9. मण्डन मिश्र की अन्तःयात्रा/ आचार्य धीरज/76
10. मण्डन- सुरेश्वरयोभिन्त्वम्/ डॉ. वैद्यनाथ झा/86
11. Transition from purva Mimansa to Uttar Mimansa in Mandana Brahmasiddhi Prof. Ashok Kumar Jha/99
12. मण्डन मिश्र का मूल पक्ष/ डॉ. तारानन्द वियोगी/108
13. मण्डन मिश्र : जनश्रुतिक प्ररिप्रेक्ष्य मे/ भवनाथ झा/114
रचनाकार- सम्पर्कः / 117

मिथिला मे मण्डन-कुमारिल-वाचस्पतिक दार्शनिक परम्परा आ शङ्कराचार्य

—डॉ. सुरेश्वर झा

(डॉ. सुरेश्वर झा एकटा राजनैतिक विद्वान आ विचारक छथि। स्वाधीनता-संग्राममे मिथिलाक योगदानक विषय हो वा प्राचीन मिथिलाक धर्मशास्त्री का कानूनविदक योगदान, विषयक संग ई न्याय क' पबैत छथि। मिथिलाक सक्षम दार्शनिक परम्पराक तादात्म्य शङ्कराचार्य सँ करेबाक प्रयास क' रहल छथि— वैह मैथिली आन्दोलनक सक्रिय कार्यकर्त्ता, चेतना समिति, पटनाक संस्थापक-सदस्य आ साहित्य अकादेमी, दिल्ली मे मैथिलीक पूर्व प्रतिनिधि डॉ. सुरेश्वर झा।

डॉ. झा, 'शङ्कर दिग्विजय' मे बहुतो भ्रामक बातक समावेश मनितहुँ, ओही परम्परा के स्वीकार करै छथि जे मानैए जे मण्डन आ शङ्करक बीच शास्त्रार्थ भेल छल। मुदा तैओ ई आलेख मण्डन कुमारिल-भारती-वाचस्पति आ शङ्कराचार्यक एकटा सामान्य दार्शनिक आ ऐतिहासिक परिचय स्थापित करबाक दिशा मे, अपना तरहक प्रयास थिक।—सम्पादक)

मण्डन मिश्र

मण्डन मिश्र 800ई.क लगपासमे भेल छलाह। ओ शङ्करक समकालीन मानल जाइत छथि। मण्डन मिश्र कृत ब्रह्मसिद्धि तथा ओहि पर शंखपाणिक टीका उपलब्ध अछि। मंडनक शङ्करक समकालीन होयब एहि तथ्य सँ सिद्ध होइछ जे ओ शङ्करक परवर्ती कोनो लेखकक उल्लेख कतहुँ नहि कयलनि अछि, मुदा शङ्करक पूर्ववर्ती कतोक लेखकक उल्लेख करैत छथि, जाहिमे शबर, कुमारिल आ योगसूत्र भाष्यक लेखक व्यास प्रमुख छथि। मण्डन उपनिषदक वाक्य सभक प्रचुर मात्रा मे उल्लेख कयलनि अछि।

मण्डन मिश्रक संग शङ्करक जे शास्त्रार्थ भेलनि ताहिसँ ई स्पष्ट

होइछ जे शङ्कर वैदिक कर्मकांडक श्रेष्ठताक विचारक विरोधी छलाह। शङ्कर एहि सिद्धांतपर विशेष रूप सँ जोर देलनि जे सर्वोपरि आत्मक ज्ञान मनुष्यक पुरुषार्थक प्रधान उद्देश्य होमबाक चाही। शङ्करक मत छलनि जे कर्मकांड सम्बन्धी पवित्रता धर्मक लक्ष्य नहि थिक, अपितु प्रायः ओकर घातक शत्रु थिक। मुदा तैयो ओ वैदिक विधान केँ निरर्थक कहि ओकर निराकारण नहि कयलनि।

विश्वासक प्राचीन सूत्र तथा परम्पराक संग समन्वय करबाक सभ सँ उत्तम मार्ग बुझलनि। छठम मे सातम शताब्दी प्रचलित हिन्दू धर्मक उदय केँ देखने छल। दक्षिण भारत मे बौद्ध धर्म पतन दिस अग्रसर भऽ गेल छल। फाहियान पाँचम शताब्दी मे बौद्ध धर्मकेँ फलल-फूलल रूपमे देखने छल। मुदा तकर बाद दोसर प्रसिद्ध यात्री युआनच्वांग छठम आ सातम शताब्दी मे ओकर पतरक चिन्ह केँ देखलक। वार्णक हर्षचरित एहि तथ्यक पुष्टि करैत अछि।

ओहि समय मे जैनमत अपन उच्च शिखर पर आसीन छल। वैदिक क्रिया– कलाप अप्रतिष्ठित भऽ रहल छल। शैवमतावलम्बी(अदियार) तथा वैष्णवमतावलम्बी (आलबार) भक्तलोकनि ईश्वर भक्तिक मार्गक आ प्रचार मे लागल छलाह। मंदिर मे पूजा आ त्योहर, जकर सम्बन्ध पीराणिक हिन्दू ध र्म सँ छल सर्वत्र प्रचार पाबि रहल छल।

दक्षिण भारत मे पल्लव साम्राज्य सर्वश्रेष्ठ छल एवं ओहि शांतिपूर्ण वातावरण मे ब्राह्मण धर्म शनै : शनै हिन्दू धर्म मे परिणत भऽ रहल छल। जतय पल्लव वंशक प्रारंभिक कालक शासक बौद्धमताव लम्बी छलाह, ओतहि कमानुसार पाछू अबैबला शासक लोकनि वैष्णव धर्म केँ मानय लगलाह तथा सभ सँ अर्वाचीन शैवमत केँ स्वीकार क' लेलनि। बौद्ध धर्मक स्थागपरक प्रवृत्तिक प्रतिक्रियास्वरूप तथा ईश्वरवादी भक्तिपरक प्रवृत्तिक विरोधमे मीमांसक लोकनि वैदिक क्रियाकलपाक महत्व केँ अस्यंत बढ़ा-चढ़ाकय जनताक समझ प्रस्तुत क' रहब छलाह।

मिथिलाक कुमारिल तथा मण्डन मिश्र ज्ञान तथा संख्यासक महत्व केँ दूषित कहि कर्मक महत्व एवं गृहस्थाश्रमक उपयोगिता पर जोर देलनि। एहि समय मे शङ्कर एके संग कट्टर सनातन धर्मक उत्साही रक्षक एवं धार्मिक सुधारकक रूपमे प्रकट भेलाह। ओ पुराणक उज्जवल विलासमय

युगक स्थानमे उपनिषदक रहस्यमय युग केँ पुनः वापस अनबाक प्रयत्न कयलनि। शङ्करक अनुसार मात्र अद्वैत दर्शन एहेन छल जे परस्पर विरोधी सम्प्रदायक अन्तरनिहित सत्य आ ओकर न्यायोचितताक प्रतिपादन क' सकै छल, आ एहि प्रकारेँ ओ अपन एकत्वक ज्ञान प्राप्त करबा मे सहायता प्राप्त होइक तथा संसार से मोक्ष प्राप्तिक उपाय भेटैक।

मालाबारसँ उत्तर दिशा मे स्थित हिमालय तकक अपन यात्रामे शङ्कर केँ पूजा एवं अर्चनाक अनेक रूप देखबाक अवसर भेटलनि। ओ ओहि सभकेँ स्वीकार कयलनि जकरामे मनुष्य केँ ऊपर उठाकय जीवन केँ निर्मल आ शुद्ध बना देबाक शक्ति छलैक। ओ मुक्तिक लेल केवल एके गोट उपायक प्रचार नहि कयलनि, अपितु प्रचलित हिन्दू धर्मक विभिन्न देवता सभक– यथा विष्णु, शिव, शक्ति तथा सूर्य आदि केँ लक्ष्य क' असंदिग्ध ा रूपसँ महत्वपूर्ण छन्दक कयलनि। प्रचलित धर्म केँ पुनजीवित करबाक संग-संग धर्ममे सुधार सेहो कयलनि।

सामान्य परम्परानुसार मण्डन, सुरेश्वर एवं विश्वरूप के एके मानल गेल अछि। एहन लगैत अछि जे कर्नल जी.ए. जैकब अपन 'नहिष्कर्म्य सिद्धि' क दोसर संस्करणक प्राक्कथन मे एहि परम्परा सँ अपन सहमति प्रकट करैत छथि।

जीवात्मा एवं परमात्मा मे एक्य अछि, ताहिमे शङ्कर आ मण्डन दुनूमे मतैक्य छनि। परञ्च किछु सिद्धांत देखला सँ स्पष्ट होइछ जे दुनू गोटेक अद्वैत वेदान्त दू सम्प्रदाय मे विभाजित छनि। शङ्करक सदृश प्राप्ति भऽ सकैत अछि। मुदा मंडनक मत छनि जे मोक्षार्थी यदि ब्रह्मचिंतन सँ मुक्तिक प्राप्ति भऽ सकैत अछि। मुदा मंडनक मत छनि जे मोक्षार्थी यदि ब्रह्मचिंतनक संग वैदिक कर्म सेहो करथि तँ हुनक मोक्ष अधिक सुगकता सँ प्राप्त हेतनि। आश्रमक सम्बन्धमे सेहो शङ्कर और मंडनक बीच मतभेद छनि। शङ्कर वेदसम्मत आश्रमक दू गोट प्रणालीक वर्णन करैत छथि। शङ्कर मोक्ष प्राप्तिक लेल संन्यास आश्रममे प्रवेश करब अनिवार्य मानैत छथि। परञ्च मंडनक मत छनि जे कोनो आश्रम मुक्तिक साधन भऽ सकैत अछि।

'शङ्कर दिग्विजय' मे बहुतो भ्रामक बात सभ लिखल अछि। ओकरा अनुसार मण्डन संन्यास आश्रमक विरोधी छलाह। से बात नहि अछि। परञ्चक ओ एहि सिद्धांत केँ नहि मानैत छलाह जे मोक्ष प्राप्तिक

लेल एक मात्र संन्यासे आश्रम टा रास्ता अछि। मत छनि जे अन्हार मे डोरी आ साँपक बीच भ्रम होइत अछि। मुदा ज्ञानी व्यक्ति जखन कहैत छथि जे ई डोरी थिक, साँप बीच भ्रम दूर भऽ जाइत अछि। ओहि प्रकारेँ जीव भ्रमसँ अपना केँ जीव मानैत अछि। जखन श्रुतिक ई वाक्य समक्ष अबैत छैक जे 'तत्त्वमसिँ अर्थात अहाँ ब्रह्म छी तखन जीवक भ्रम हटि जाइत छैक आ ओ अपना केँ नहि मानैत छलाह जे मोक्ष प्राप्तिक लेल एक मात्र सन्यासे आश्रम टा रास्ता अछि। ब्रह्मज्ञानक प्राप्तिक विषयमे सेहो एहि दुनू गोटाक बीच मतैक्य नहि छनि। शङ्करक मत छनि जे अन्हार मे डोरी थिक, साँप नहि थिक, तखन भ्रम दूर जाइत अछि। ओहि प्रकारेँ जीव भ्रमसँ अपना केँ जीवन मानैत अछि। जखन श्रुतिक ई वाक्य समक्ष अबैत छैक जे 'तत्त्वमसिँ अर्थात अहाँ ब्रह्म छी तखन जीवक भ्रम हटि जाइत छैक आ ओ अपने केँ ब्रह्म मानय लगैन अछि। मुदा मण्डन शङ्करक एहि सिद्धांतकेँ नहि मानि कहैत छथि जे वेदान्तक एहि वाक्य सँ ब्रह्मक निश्चित हेबाक बोध होइत अछि। मुदा ओ बोध प्रत्यक्ष नहि भऽ 'शब्द ब्रह्मक निश्चित हेबाक बोध होइत अछि। मुदा ओ बोध प्रत्यक्ष नहि भऽ 'शब्द ब्रह्मबोध होइछ। जीवक भ्रम प्रत्यक्ष होइत छैक आ तेँ प्रत्यक्ष भ्रमकेँ प्रत्यक्ष ज्ञाने टा हटा सकैत छैक। एहि सम्बन्ध मे मण्डन अपन 'ब्रह्मसिद्धि' मे कतोक दृष्टांत प्रस्तुत कयलनि अछि।

ई महत्वपूर्ण तथ्य अछि जे वाचस्पति शांकरभाष्यक भामती टीका मे जतय शङ्कर आ मण्डन दुनू आचार्य मे सिद्धांतक भेद देखैत छथि, ततय मंडनक सिद्धांतक अनुसरण कयलनि अछि। एही कारण सँ शङ्कराचार्यक कट्टर अनुयायी लोकनि वाचस्पति केँ 'वाचस्पतिः मण्डन पृष्ठसेवी' कहि आलोचना करैत छथि।

कहबाक तात्पर्य अछि जे मण्डन यद्यपि एक दिग्गज मीमांसक छलाह, तथापि ओ अद्वैत वेदान्ती सेहो छलाह। हिनक अद्वैत वेदान्त शङ्कराचार्यक अद्वैत संन्यासी लोकनिक अद्वैत वेदान्त थिकनि तँ मंडनक अद्वैत वेदांत गृस्थ तथा कर्मयोगी लीकनिक अद्वैत वेदान्त अछि।

शङ्कर एक आचार्यक रूपमे स्थान-स्थान पर भ्रमण कयलनि तथा विभिन्न मतावलम्बी विद्वान एवं नेता लोकनिक संग संवाद तथा शास्त्रार्थ मे प्रवृत्त भेलाह। परम्परागत वर्णनक अनुसार शङ्कर अपन विजय-यात्रा मते

मिथिलाक भ्रमण सेहो कयलनि। ओहि सभ मे मिथिला मे तीन गोट दिग्गज दार्शनिक छलाह, कुमारिल मण्डन ओ वाचस्पति। कुमारिल भट्ट भटपुराक छलाह, तकरा कतोक मिथिलोक विद्वान बहुत दिन धरि नहि मानैत छलाह। मुदा आब विद्वान लोकनि मे एहि सम्बन्धमे मतैक्य अछि। मण्डन आ वाचस्पति केँ मैथिली हेबाक सम्बन्धमे तँ कहियो कैयो संदेह नहि प्रकट कयलनि।

परम्पराक अनुसार अपन विजय-अभिवानमे शङ्कर कुमारिल आ मण्डन मिरक सम्पर्क मे आयल छलाह। किवदन्ती अछि जे मण्डन मिश्रक ओतय हुनक विदुषी भारतीक अध्यक्षता मते शङ्करकेँ कतोक दिन धरि शास्त्रर्थ होइत रहलनि। अंत मे मण्डन मिश्र पराजित भऽ शङ्करक शिष्यत्व ग्रहण क' लेलनि आ संन्यास धर्मकेँ मानि लेलनि। कोचीन मे समुद्र तट पर कालदी स्थित शङ्करक मंडप मे एहि घटनाक केँ पाथर पर चित्र बनाकय देखाओल गेल अछि। ईहो कहल जाइत अछि जे आगू चलि क' मंडने मिश्रक नाम सुरेश्वरचार्य क' देल गेलनि आओ ओही नाम सँ प्रसिद्ध भेलाह। परञ्च एहि सम्बन्ध मे विद्वान लोकनिक बीच मतभिन्नता छनि। एक किंबदन्ती ईहो अछि जे भारती कहलथिन जे मण्डन पराजित नहि भेलाह अछि, हम हुनक....जखन पराजित होयब तखने पूर्ण रूपेण अहाँ विजयी भऽ सकैत छी। आ कामशास्त्रक विषयक चर्चा मे बालब्रह्मचारी शङ्कर भारती भऽ गेलाह। अमरूक मृतक शरीर मे प्रवेश कय कामशास्त्रक ज्ञान प्राप्त करबाक किंवदन्ती सेहो अछि। एहि घटना सँ ईहो साबित होइत अछि जे शङ्कर योग सम्बन्धी क्रियामे सेहो निपुण छलाह।

शङ्कर दक्षिण सँ उत्तर, पूब आ पश्चिम सर्वत्र भारतवर्षक यात्रा कयलनि तथा चारि गोट मठक स्थापना कयलनि, जाहिमे मुख्य मैसूर प्रान्त मे शृंगेरी अछि आ अन्य तीन गोट मठ क्रमशः पूव मे पूरी, पश्चिम मे द्वारका तथा उत्तरक हिमालय प्रवेश मे बदरीनाथ मे अछि। परम्परा सँ पता लगैत अछि जे शङ्कर मात्र 32 वर्षक अवस्था मे हिसालयक अंचल मे केदानाथ मे देहत्याग कयलनि। कहल जाइछ जे ओ शङ्कर भगवानक अवतार छलाह आ तेँ दक्षिण मे रामेश्वरम् तथा उत्तर मे केदारनाथ मे अपन मठक स्थापना नहि कयलनि।

हमरा लोकनि सन साधारण मनुष्यकेँ, जकर जीवन मे भावना

प्रधान होइत छैक, शङ्करक जीवन मे एक प्रकारक सुनापन प्रतीत होइत छैक। एहिमे प्रसन्नताक साहयर्च सँ वंचित एवं सामाजिक मनोरंजनक अभावक दर्शन होइछ। मुदा सामान्य रूप सँ इएह अवस्था सी महापुरुषक रहैत छनि। शङ्कर एक गोट एहेन देवदूतक संदृश छलाह जे मनुष्य समाजक धर्मक मार्गक पथ-प्रदर्शन करबाक लेल अबतरित होइत छथि। कल्पानक क्षेत्र मे हुनक सभसँ महान सिद्धि अद्वैत छनि, जकरा ओ प्राचीन सूत्र पर भाष्यक द्वारा विकसित कयलनि। ओ एकरा ज्ञानक समकालीन मानदंड एवं

शङ्कराचार्य

तेलंगक अनुसार शङ्कराचार्य छठम शताब्दीक मध्य अथवा अंतमे भेलाह। सर आर.जी. भण्डारकरक अनुसार जन्म सन 680ई.मे भेलनि। ओ हिनक जन्मक समय एहि सँ किछु वर्ष पूर्वा मानबाक लेल अद्यत बुझि पड़ैत छथि। मैकसमूलर आ प्रो. मैक्डोनलक मत छनि जे शङ्करक जन्म 788 ई.मे आ देहान्त 820 ई.मे भेल छलनि। प्रो.कीथ नवम शताब्दीक प्रथम चरण मे शङ्करक आविर्भाव मानैत छथि।

शङ्करक किछु शिष्य हुनक जीवनवृत सम्बन्धी घटनाक संग्रह कयलनि अछि, जाहिमे माधव कृत 'शङ्कर विजय मुख्य अछि। परंच ई ग्रन्थद्वय एक पौराणिक जीवन चरित थिक आ जाधरि कोनो विश्वसनीय साक्ष्य सँ ओकर घटना सभक पुष्ठि नहि होइत अछि ताबत धरि ओहिमे विश्वास करब कठिन अछि। आ तेँ एहि दुनू ग्रंथ मे किछु लिखल गेल अछि ताहि पर विद्वान लोकनि केँ विश्वास पूर्ण तरहेँ नहि छनि। मुदा एतेक तँ अवश्य जे जखन कोनो आधिकारिक रूप सँ लिखल किछु नहि भेटेत अछि, ताहि स्थितिमे शङ्करक जीवन पर ओहि ग्रन्थक द्वारा अथवा परम्परा ओ किंवदन्ती सँ जे किछु प्रकाश पड़ैत छैक, ताही पर विश्वास करब पड़त।

शङ्करक किछु शिष्य हुनक, जीवनवृत सम्बन्धी घटनाक संग्रह कयलनि अछि, आहिमे माधव कृत 'शङ्कर दिग्विजय' तथा आनन्दगिरि कृत 'शङ्कर विजय मुख्य अछि। परंच ई ग्रन्थद्वय एक पौराणिक जीवन चरित थिाक आ जाधरि कोनो विश्वसनीय साक्ष्य से ओकर घटना सभक पुष्टि नहि होइत अछि तावत भ्ररि ओहिम विश्वास करब कठिन अछि। आ तेँ एहि दुनू

ग्रंथ मे जे किछु लिखल गेल अछि ताहि पर विद्वान लोकनि के विश्वास पूर्ण तरहेँ नहि छनि। मुदा एतेक तँ अवश्य जे जखन कोनो आधिकारिक रूप सँ लिखल किछु नहि भेटैत अछि, ताहि स्थितिमे शङ्करक जीवन पर ओहि ग्रन्थक द्वारा अथवा परम्परा ओ किंवदन्ती सँ जे किछु प्रकाश पड़ैत छैक, ताही पर विश्वास करब पड़त।

शङ्करक जन्म मालाबारक सरल स्वभाव किन्तु विद्वान एवं परिश्रमी नम्बूदरी ब्राह्मण कुल मे भेल छलनि तथा सामान्यतः ई अनुमान लगाओल जाइत अछि जे हुनक जन्मस्थान प्रायद्वीपक पश्चिम समुद्र तट पर स्थित कालदी मे छलनि। वत्तमानमे हुनका जन्मस्थान पर एक भव्य मंडप बनल अछि तथा ओहिमे पाथर सँ हुनक जीवनक प्रमुख घटना सभ उत्कीर्ण कयल अछि। एहि मंडप सँ लगेमे शङ्करक मायक चिताक स्थान सेहो सुरक्षित राखल गेल अछि।

परम्राक अनुसार यद्यपि कहल जाइत अछि जे शङ्करक कुलदेवता शिव छलाह, परञ्च एक गोट मत इहो अछि जे ओ जन्मेसँ शाक्त छलाह। अपन युवावस्था मे ओ गौड़पादक शिल्प गोविन्द द्वारा संचालित वैदिक पाठशाला मे प्रविष्ट भेल छलाह। एहिसँ स्पष्ट अछि जे गोविन्द द्वारा हुनका वेदान्तक मुख्य-मुख्य सिद्धान्तक शिक्षा देल गेल छलनि। कहल तँ जाइत अछि जे अपन बालयावस्थे मे जखन ओ मात्र आठ वर्षक छलाह तखने उत्कट अभिलाषा एवं प्रसन्नताक संग सभ वेद केँ कंठस्थ क' लेलनि। ओ प्रकट रूप मे वैदिक विद्या आ स्वतंत्र प्रज्ञासँ युक्त एक असामान्य प्रतिभाक तेजस्वी व्यक्ति छलाह। जीवनक गूढ़ रहस्य तथा महत्व हूनका प्रभावित कयलकनि आ अपन जीवनक बहुत प्रारभिक कालेमे हुनका प्रभावित कयलकनि आ अपन जीवनक बहुत प्रारम्भिक कालेमे हुनका भगवानक झलक प्राप्त भेलनि। सांसारिक व्यवहारसँ ज्ञान प्राप्त करबाक पूर्वे जो संसारक त्याग क' देलनि आ संन्यासी भऽ गेलाह। मुदा ओ वीतरागी परिब्राजक नहि छलाह, सत्यक विशुद्ध ज्वाला हुनका अंतस्तल मे प्रज्वलित भऽ रहल छलनि।

शङ्करक जीवन मे विरोधी भावक एकेठाम संग्रह भेटैत अछि। ओ दार्शानिक छथि, कवि छवि, ज्ञानी महान पंडित छथि, संत छथि, वैरागी अछि तथा संगहि धार्मिक सुधारवादी सेहो छथि। युवास्था मे ओ बौद्धिक

महत्वाकांक्षाक आवेश सँ पूर्ण एक गोट अदम्य आ निर्भीक शास्त्रार्थ महार्थी प्रतीत होइत छथि। किछु गोटे शङ्कर केँ तीक्षण राजनीतिक प्रतिभा सँ सम्पन्न मानैत छथि, जे जनता केँ एकताक भावनाक महत्व बुझौलयिन। हुनका सन मेधावी सार्वजनिक पुरुष भारत मे दोसर केयो जन्म नहि लेलनि अछि।

शङ्करक प्रसिद्ध ग्रन्थ छनि प्रमुख उपनिषद् पर तथा भगवद्गीता एवं वेदान्त सूत्र पर भाष्य। उपदेश सहस्त्री एवं विवेक चूड़ामणिक संग हुनक ईश्वरक भिन्न-भिन्न स्वरूप केँ लक्ष्य कय रचित विभिन्न स्तोत्र सेहो छनि। एहि स्तोत्रमे प्रमुख अछि दक्षिणापूर्ति स्तोत्र, हरिमीड़ेस्तोत्र, आनन्द लहरी आ सौंदर्य लहरी। अन्य ग्रन्थ जे शङ्करक रचित बुझल जाइत अछि से अछि, आप्तवज्र सूची, आत्मबोध महामुद्गर, दशश्लोकी,...विष्णुसहस्त्रनाम तथा सनत् सुजातीय पर भाष्य। शङ्कर द्वारा प्रतिपादित दर्शनशास्त्रक इतिहास बहुत नमहर अछि।

सुरेश्वराचार्यक वार्तिक तथा नंष्कर्न सिद्धि, वाचस्पतिक भामती, पद्मपादक पंचपादिका आ आनन्दक न्याय दर्शन अद्वैतक ओ प्रसिद्ध ग्रन्थ अछि, जकर रचन शङ्करक समयक पश्चात भेलैक। तेरहम शताब्दीक मध्य भागमे अमलानन्दक 'कल्पतरू' भामती पर कयल गेल माध्य थिक।

कुमारिल

मिथिलाक लोक कथा तथा 'पजी प्रबन्ध' सिद्ध करैत अछि जे कुमारिल भट्ट मड़रय मूलक मैथिल ब्राह्मणक बीजी पुरुष छलाह। महान दार्शनिक तथा मीमांसाक जय मिश्र एही कुमारिलक पुत्र छलथिन। ओ अपन समस्त विद्या अपने पिता सँ प्राप्त कयलनि। मीमांसक मूर्धन्य मण्डन मिश्र, विभाकर मिश्र, विद्याधर मिश्र, विद्यानन्द मिश्र आदि समस्त तत्कालीन मैथिली मीमांसक आचार्य कुमारिलक शिष्या छलाह। हिनक वासस्थान पूर्वोत्तर रेलवेक मानीगाछी स्टेशनक सटले 'भट्टपुरा' गाम सँ प्रसिद्ध अदि। एतय स्थित 'कुमारिल कानन आइयो हुनक स्मरण करैवत अछि। पुरीक वर्त्तमान शङ्कराचार्य स्वामी निश्चलानन्दजी अपन एक सम्मरण मे लिखलनि अछि जे 'कुमारिल भट्ट महोदयक जन्मभूमि सेहो शङ्कर मिश्र महोदयक

जन्मभूमिक लगे मे छनि।

कुमारिल अपना समय मे सर्वश्रेष्ठ मीमांसक तँ छलाहे, भविष्यो मे सम्भवतः हुनका सन दोसर मीमांसक नहि भेलाह। मीमांसा दर्शनक सूत्रकार जैमिनी केँ सेहो मिथिला निवासी मानल जाइत छथि। जैमिनीक मीमांसा सूत्र पर शबर स्वामीक माध्य छनि। ओहि भाष्य केँ विद्वानलोकनि मीमांसा भाष्य अथवा शाबर भाष्य कहैत छथि। शबर केँ सेहो मैथिल मानल जाइत छनि। शाबर भाष्यक कुमारिलक विशिष्ट व्याव्या केँ विद्वानलोकनि चार्तिक कहैत छथि। सूत्रकार एवं भाष्यकारक त्रुटि पकड़ैबला तथा स्वतंत्र विचार प्रस्तुत करयबला विशिष्ट व्याख्या केँ वार्तिक जाइत अछि।

मीमांसा दर्शन मे वार्तिकक रचना करबाक कारणे दर्शनशास्त्र मे कुमारिल केँ वार्तिककार कहल गेलनि अछि। कुमारिल भट्ट 3099 श्लोक मे शाबर भाष्यक विस्तृत व्याख्याक रूपमे विशालकाय श्लोकवार्तिकक रचना कयलनि अछि। पार्थसारथि मिश्रक न्याय रत्नाकर व्याव्याक संग श्लोक वार्तिक चौखंभा संस्कृत सीरीज सँ प्रकाशित छैक। डॉ. गंगनाथ झाक श्लोकवार्तिक अंगरेजीमे अनुवाद एशियाटिक सोसाइटी सँ प्रकाशित अछि।

विद्वानलोकनि कुमारिलक समय छठम सातम शताब्दीक मध्य मानैत छथि जा हुनका शङ्कराचार्यक समकालीन मानैत छथि। कुमारिल जखन वयोवृद्ध छलाह, तखन शङ्कर युवावस्थामे छलाह। शङ्कर कुमारिलक शिष्ययोलोकनि सँ कम वयसक छलाह। शङ्कर केँ अपन अद्वैत मतक प्रसार करबाक लेल मूर्धन्य मीमांसक रहितहुँ कुमारिल पूर्वहि सँ समाज मे अनुकूल श्रेत्र आ वातावरणक निर्माण क' लेने छलाह। तकरे फलस्वरूप आचार्य शङ्कर केँ वेद विरोधीक उन्मूलन तथा राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक एकता स्थापित करबामे सहयोग प्राप्त भेलनि। कुमारिल जतय एक भव्य भवनक नींव रखने छलाह ओही पर शङ्कर अपन अद्वैत मंदिरक प्रतिष्ठापना कयलनि।

इएह कारण छल जे शङ्कर अपन भाष्य कुमारिल जर्जर कया केँ देखेबाक लेल दक्षिण सँ उत्तरक मात्रा कयलनि। माधवक 'शङ्कर दिग्विजय'कअनुसार शङ्कर कुमारिल सँ अपन भाष्य पर वार्तिक लिखेबाक लेल गेल छलाह। जाहि समय मे शङ्कर कुमारिल ओतय पहुँचलाहु, ओ प्रयाग क्षेत्रमे स्वयं चिता निर्माण क' ओहिमे प्रवेश क' चुकल छलाह।

कुमारिल शङ्कर सँ कहलथिन जे आब बहुत विलम्ब भऽ ओहिमे प्रवेश क' चुकल छलाह। कुमारिल शङ्कर सँ कहलथिन जे आब बहुत विलम्ब भऽ चुकल अछि। अहाँ द्रुतगति सँ, भले आकाशमार्गेक अवलम्बन किएक ने करय पड़य, मिथिला जाउ। जीवनक कोनो भरोस नहि। ओतय हमर शिष्य मनीषी मण्डन मिश्र, विश्वरूप मिश्र आदि हेताह, हुनका अपन भाषयक अवलोकन करा देबनि। हुनके लोकनि सँ अहाँक अभिलाषाक पूर्ति भऽ सकत। प्रज्वलित चिता पर बैसल कुमारिल ओतय उपस्थित अपन शिष्य लोकनि केँ ई कहब नहि सिरलाह जे हिनकर अभिवादन करियौन, हिनका अर्ध्यपाद दिऔन। ई संन्यासी छथि, हिनक पूजा करियौन आ सादर भिक्षा दिऔन। शङ्कर प्रयागक त्रिवेणीक संगम पर कुमारिलक शिष्यलोकनिक तअ पर पूजल जा रहल छलाह, ओम्हर कुमारिल तुषानलक चिता पर हँसैत-खेलैत, मधुर मुस्कान विखेड़ैत विलीन भऽ रहल छलाह।

जखन शङ्कराचार्य कुमारिल सँ ई जिज्ञासा कयलथिन जे ओ एहन कठोर मरणक व्रत किएक रखलनि, जखन कि हुनका महात्मा पुरुष पर केयो व्यक्ति अनैतिकताक आरोप नहि लगा सकैत अछि! तँ कुमारिल उत्तर छलनि जे पाप तँ हुनका सँ भेल छनि। एकतै ओ सभक वेद विरोधी अपन गुरुकेँ शास्त्रार्थ करबाक लेल ललकारने छलाह आ दोसर दर्शनक मण्डन करबाक अवसर पर ओ कतोक स्थान पर ईश्वरीय सत्ता केँ नकारने छथि। फलस्वरूप ई प्रायश्चित हमरा अंतः कारणक निष्पक्ष निर्णय अनुकूल अछि।

जेहो, देश-दुखक कारण एक निर्लिप्त निष्काम योगी जकाँ कुमारिलक उत्तर छलनि जे पाप तँ हुनका सँ भेल छनि। एकतै ओ सभक समझ वेद विरोधी अपन गुरुकेँ शास्त्रार्थ करबाक लेल ललकारने छलाह आ दोसर जैमिनी दर्शनक मण्डन करबाक अवसर पर ओ कतोक स्थान पर ईश्वरीय सत्ता केँ नकारने छथि। फलस्वरूप ई प्रायश्चित हमरा अंत : करणक निष्पक्ष निर्णयक अनुकूल अछि।

जेहो, देश-दुखक कारण एक निर्लिप्त निष्काम योगी जकाँ कुमारिल समसत जीवन अलेख जगबैत रहलाह। देश मे चारू दिशामे सर्वत्र एक वैचारिक क्रांतिक लेल तथा सांस्कृतिक युग प्रवर्त्तनक लेल घुमैत रहलाह। एतेक तक जे नालन्दा विश्वविद्यालयक प्रधान पंडित धर्मपालक शिष्यत्व स्वीकार क' ओ बौद्ध दर्शन केँ ठेठ पालि भाषा मे पढ़लनि, गुनलनि आ

बुझलनि जाहिसँ आ अपन वैदिक मतक स्थापनाक लेल युक्ति युक्त तथा सशक्त तर्क उपस्थित क' सकलाह। कुमारिल केँ बौद्ध दर्शनक जतेक उच्च कोटिक ज्ञान छलनि, ततेक शङ्कराचार्य केँ नहि छलनि। विद्वान लोकनिक मान्यता छनि जे कुमारिल बौद्ध दर्शनक जाहि तरहेँ गंभीर खण्डन कयलनि, ताहिसँ शङ्कराचार्य एवं अन्य वैदिक विद्वान लोकनि केँ बौद्ध मतक खंडन करबामे बहुत सहायता भेटलनि। मिथिलाक विभूति मे कुमारिल भट्ट अग्रगण्य छथि।

वाचस्पति मिश्र

वाचस्पतिक समयक विषय मे बहुत मतभेद विद्वानक बीच अछि। परञ्चन एतेक तँ निश्चिते अछि जे मिश्रजी मिथिलाक राजा हरि सिंह देवक 'पञ्जीप्रथ।' प्रारंभ हेबासँ पूर्व भेल छलाह, कारण हिनक पञ्जीकारण नहि भेल छलनि। हिनक रचित 'न्याय सूची निबंध क अंतिम पद्य सँ ज्ञात होइत अछि जे ई संवत् 898 तदनुसार शाके 763 अथवा 841 ई.मे वर्त्तमान छलाह। एहि गणनाक आधार पर हिनक समय आठम शताब्दीक अंत सँ नवम शताब्दीक प्रारंभ मे मानल जयबाक चाही। मुदा एतबा अवश्य जे ई वाचस्पति मिश्र, जिनका वाचस्पति प्रथम अथवा वृद्ध वाचस्पति कहल जाइछ, से शङ्कराचार्य, कुमारिल तथा मण्डन मिश्रक समकालीन छलाह। समयक थोड-बहुत आगाँ-पाछाँ जे रहल होनि। वाचस्पति मामतीक अंतिम श्लोक मे अपन साधना-काल राज नृगक राजत्व काल मे मानैत छथि।

'तस्मिन महीपे महनीय कीतो श्रीमत्रृ गेऽ कारिमया निबन्धः'

के.पी. जायसवाल मानैत छथि जे नान्यदेव(1089 ई.सँ1124 ई.)सँ 113 वर्ष पूर्व वाचस्पतिकालीन राजा नृग मिथिलाक कोनो प्रदेशक शासक छलाह। डॉ. गंगानाथ झा 'सांख्यतत्त्व कौमदी'क राजा नृगक, राजधानी नेपालक सिमरौ-वगढ़ मानने छथि। डॉ. उमेश मिश्र एहिसँ सहमत नहि छथि।

वृद्ध वाचस्पतिक जन्म स्थान वर्त्तमान मधुबनी जिलान्तर्गत अन्धरा ठाढ़ी गाममे छलनि। अन्धरा पूबमे एक उच्चस्थान अछि, जतय दू गोट पोखरि अछि। मिथिला मे परम्परा सँ ज्ञात होइछ जे एहि ठाम वाचस्पति

मिश्रक आवास तथा विद्यालय छलनि। एखनो ओहि क्षेत्रक लोक अपन संतानक अक्षर एहि उच्चस्थानक माटि सँ करबैत अछि। लगभग गत हजार वर्ष सँ लोकक ई धारणा बनल छैक जे ओहि डीहक माटि सँ अक्षरारंभ करोने ओ व्यक्ति विद्वान होइत अछि। कहल जाइत अछि जे दरभंगा राजक अंतिम महाराज स्व. कामेश्वर सिंहक अक्षरारंभ एहि ठामक माटि सँ एहि ठामक माटि सँ कराओल गेल छलनि।

वाचस्पति मिश्रक पथ-प्रदर्शक आचार्य लोकनि मे आचार्य मण्डन मिश्रक नाम विशेष रूपसँ लेल जाइत छनि। मण्डन मिश्रक दू गोट विशिष्ट निबन्ध 'विधि-विवेक' आ 'ब्रह्मसिद्धि पर वाचस्पति मिश्र क्रमशः 'न्याय कणिका' एवं 'तत्त्वसमीक्षा' नाम सँ प्रसिद्ध सिस्तृत-व्याख्या-निबंध लिखने दथि। भारतीय दर्शनक इतिहासमे वाचस्पति मिश्र एक जाज्वल्यमान रत्न छथि, जनिक व्याख्यान कौशल एवं बुद्धि-वैभवक आलोक सँ समस्त भारते नहि विश्वक चिंतन-मनन आलोकित भेल। वैदिक आचारक तत्त्वक प्रतिपादन शास्त्र एवं युक्तिक सहायता सँ एतेक सुन्दर ढँग सँ कयलिन अछि जे क्यो ओहि सँ चकित भऽ जाइत अछि। विरोधीक आक्षेप केँ छिन्न-भिन्न करैत अपन सिद्धांतक प्रतिपादन मे मिश्रजी अत्यंत तर्क-कुशलताक परिचय देलनि अछि। कुमारिलक बादक इएह एक गोट अस्तिक दार्शनिक भेलाह, जनिक बौद्ध दर्शनिक भेलाह, जनिक बौद्ध धर्मक मण्डन आ अवैदिक धर्मक खडन एतेक पुष्ट भेलनि अछि जे बौद्ध लोकनि सदाक लेल भारत सँ विदा भऽ गेलाह।

यद्यपि वाचस्पति मिश्र अपन प्रौढ़ टीका सबहि सँ प्रायः सभ दर्शन केँ सुदृढ़ कयलनि अछि, मुदा भामती'क कारणे दार्शनिक जगत मे हुनक कीर्ति अमर छनि। 'मामती' ब्रह्मसूत्रक शाअंग भाष्यक भव्य टीका थिक, जाहिमे मिश्रजीक विलक्षण प्रतिभाक चमत्कार पद-पदमे दरिलक्षित होइत अछि। ई हिनक सर्वोच्च एवं सभ सँ अंतिम अमर कीर्ति छनि अद्वैत केँ बुझबाक लेल 'भामती'क अध्ययन अनिवार्य अछि।

'भामती' मिथिलाक ओहि महिमामयी महिलाक स्मृतिकेँ अमरत्व प्रदान कयलक जे वाचस्पति सन महामानव केँ पतिक रूपमे पाबियो क' लौकिक सुखक अवहेलना करैत अपन मूक सेवाक द्वारा हुनक कार्य मे जीवन पयेन्त सहायता कयल। ज्ञान समुद्र मे निमग्न भरिक अपन उदासीनता

पर अत्यंत दुख आ क्षोभ भेलनि। जीवनक अपन सांध्य वेला मे दोसर कोनो उपाय नहि देखि हुनके स्मृति मे ओहि ग्रन्थक नाम 'भामती' राखि हुनका अभत...प्रदान कयलनि। ओहि ग्रन्थक प्रत्येक अक्षर मे पतिव्रता पत्नीक साधना, त्याग एवं सेवा परायणताक झलक स्पष्ट देखि पड़ैत अछि। जीवनक मधुरतम समय यौवन केँ वाचस्पति द्वादश दर्शन टीका। अन्य ग्रन्थक प्रणयन मे बिता देने छलाह।

वाचस्पति मिश्रक कमलक ई विलक्षणता छलनि जे ओ आस्तिक आ नास्तिक दुनू दर्शन विवेचनापूर्ण टीका लिखलनि। एतएव हुनका 'द्वादण-दर्शन-टीकाकार' कहल गेलनि अछि। न्याय, मीमांसा, वेदान्त, योग, संख्या ओ वैशेषिक एहि छलो गोट आस्तिक दर्शन तथा जैन, बौद्ध, चार्वाक आदि छः गोट नास्तिक दर्शन पर हिनक विवेचना समान रूप सँ प्राप्त अछि। वाचस्पतिक विषय मे मिथिला मे ई कथा प्रसिद्ध छनि जे जखन ई नास्तिक दर्शन पर टीका पर टीका लिखैत छलाह तखन हिनक पूजाक 'शालग्राम' (भगवान) जलमय भऽ जाइत छलाह आओर जखन आस्तिक दर्शनक समर्थन करय लगैत छलाह तखन पुनः पूर्ववत 'अश्ममय शालग्राम' भऽ जाइत छलाह। प्रायः इएह कारण अछि जे वाचस्पति मिश्र अपन नास्तिक दर्शनक टीकाक प्रचार-प्रसार नहि होमय देलनि आ तेँ ओ अनुपलब्ध भऽ गेल।

वेदान्त सूत्र पर शअंगभाष्य दक्षिण भारत मे तँ प्रसारित भेल मुदा उत्तर भारत मे ओ लोकप्रिय नहि भेल छल। ओहि समय मे मिथिला वेदान्त ओ मीमांसाक बहुत विख्यात केन्द्र छल आ जावत धरि मिथिलाक कोनो विद्वान ओहि पर अपन टीका नहि लिखितथि तावत धरि समस्त उत्तर भारतमे ओकर प्रचार नहि होइत। शङ्कर ई बात जनैत छलाह जे मिथिलाक तत्कालीन विद्वान सर्वतंत्र स्वतंत्र वाचस्पति मिश्र एहि कार्यक लेल सभ सँ अधिक अधिकारी दार्शनिक छलाह। शङ्कराचार्य एहि तथ्य केँ जनैत छलाह, मुदा हुनका संदेह छलनि जे आचार्य मिश्र ओहि कार्यक कार्यक लेल तैयार हेताह।

मिथिलामे एहि सम्बन्ध मे एक गोट परम्परा आ किंवदती अछि। कोनो महत्वपूर्ण ऐतिहासिक वर्णन लिपिबद्ध प्रमामण अभाव मे मौखिक परम्पराक पांखि पर अधिआइत-भसिआइत एहिना विभिन्न रूप मे पाओल

जाइत अछि। सहज ओहि पर अविश्वास करबाक कोनो औचित्य नहि छैक। कहल जाइत अछि जे एक दिन अपन अणिमासिद्धिक सहारा लय शङ्कराचार्य मिथिलामे वाचस्पति गाममे हुनकासँ ब्रह्मसूत्रक अपना भाष्य पर लिखेबाक लेल पदार्पण कयलनि। आचार्य प्रवर मिश्रजी केँ ई बात ज्ञात भऽ गेलनि। शङ्कराचार्य केँ अपना गामक लगमे अयबाक अनुमान कय शाअंगरभाष्य' पर अपन टीका नहि लिखबाक इच्छाक कारणे आ संगहि एहेन विशिष्ट अतिथिक कथन केँ टारब अनुचित बूझि वाचस्पति मिश्र अपन घर छोड़ि गामक लगमे स्थित 'रक्षाबाटी' नामक प्रस्द्धि वनमे चल गेलाह। ई उल्लेख करब उचित हैत जे वैह 'रक्षावाटी' आजुक रखबारी गामक नाम सँ प्रसिद्ध अछि। पूर्व मे एहिठाम घोर जंगल छल आ राजाक उपद्रवक समय नुकयबाक लेल लोक एतय चल जाइत छल, से विख्यात अछि। सए वर्ष धरि ई वन दुर्गम छल आ समस्त मिथिला मे प्रसिद्ध छल। घर सँ जाइत काल वाचस्पति मिश्र अपना पत्नी केँ बुझा देलथिन जे ओ कतहु जा रहल छथि आ यदि केओ अतिथि आवथि तँ हुनकर यथोचित सत्कार करबाक अछि तथा मिश्रजीक फिरबाक कोनो निश्चित समय अतिथि केँ सूचित नहि करबाक अछि।

जेना अनुमान छलनि, मिश्रजीक चल गेलाक बाद शङ्कराचार्य वाचस्पतिक आवासव पर अयलाह। मिश्रजीक पत्नी भामती हुनक उचित स्वागत-सत्कार कयलनि। गृहपतिक अनुपस्थितिक हुनका सूचना देल गेलनि। ओ समय भोजन करबाक छलैक। भोजनक लेल आग्रह कयला पर ब्राह्मण वेषधारी शङ्कराचार्य बजलाह जे ओ जाहि कार्यक हेतु आयल छथि तकरा सम्बन्धमे जावत धरि हुनका गृहपतिक वचन नहि भेटलनि तावत धरि ओ भोजन नहि करताह। कार्यक सम्बन्धमे ज्ञात भेला पर भामती कहलथिन जे टीका लिखबाक वचन तँ स्वयं पंडितजी दऽ सकैत छथिन आ ओ स्वयं उपस्थित छथि नहि।

स्थिति अत्यंत विचित्र एवं भयावह छल। दिन ढलि रहल छल। भोजनक समय बीति रहल छलैक। भगवान भास्कर आकाश मे पश्चिम दिस बढ़ि रहल छलाह, मानू जेना रातुक विश्रामक लेल अगुतायल होथि। संन्यासीकेँ कतहु गाम मे रात्रि विश्राम करब नियमविरूद्ध छल बिना भोजन कयने घरवासी लोकनि केँ भूखल छोड़ि देबैक सेहो अनुचित आ बिना वचन

प्राप्त कयने भोजन करब नहि— ई सब बात केँ विचारि शङ्कराचार्य भामती सँ निवेदन कयलथिन जे ओ तँ वाचस्पतिक अर्द्धांगनी छथिन तथा हुनका सन पतिव्रता स्त्रीवाक वचन देला पर ओकर पालन हुनक पति अवश्य करथिन। तेँ ओ वचन दऽ देथि आ तखन शङ्कराचाग्र भोजन ग्रहण क' लेताह। विषम परिस्थिति केँ देखैत भामती शङ्करक अग्रह केँ मानि वचन देलथिन आ तकर बाद शङ्कर भोजन क' प्रस्थान कयलनि। शङ्कराचार्य अपन 'शङ्करभाष्य'क एक प्रति ओतय मिश्रजीक लेल छोड़ि गेलाह। वाचस्पतिक फिरला पर भामती हुनका सभ बातक सूचना देलथिन।अपन अर्द्धांनीक देल वचन केँ पूरा करबाक लेल ओ शङ्कराक अग्रह केँ मानि वचन देलथिन आ तकर बाद शङ्कर भोजन क' प्रस्थान कयलनि। शङ्कराचार्य अपन 'शांकरभाष्य'क एक प्रति ओतय मिश्रजीक लेल छोड़ि गेलाह। वाचस्पतिक फिरला पर भामती हुनका सभ बातक सूचना देलथिन। अपन अर्द्धांनीक देल वचन केँ पूरा करबाक लेल ओ शांकरभाष्य पर अपन विश्व-विख्यात टीका लिखब प्रारम्भ कयलनि।

वाचस्पति मिश्रक भामती टीका केँ मात्र वेदान्तेमे नहि, अपितु समस्त संस्कृत वाङमय मे अद्वितीय स्थान प्राप्त छैक। वाचस्पति मिश्रक अंतिम कृति हेबाक कारणे एहि ग्रन्थ मे हुनक दार्शनिक परिपक्वताक पराकाष्ठा देखि पड़ैत अछि। भामतीक प्रत्येक पंक्तिक अकाट्य तर्कक संग मधुवर्णण करैत ब्रह्मविद्याक पिपासु केँ सुधापान करबाक आनन्द प्रदान करैत अछि।

वेदक अंतिम भाग केँ वेदान्त एवं उपनिष्द् कहल जाइत अछि। उपनिषद्क मंत्र केँ सरल बनाकय बुझेबाक उद्देश्य सँ भगवान् वेदव्यास सूत्र बनौलनि जकरा ब्रह्मसूत्र कहल जाइछ ओ ई वैदिक सतानत धर्मक 'प्रस्थानत्रयी' अथवा तीन गोट प्रमुख ग्रंथ मे एक मानल जाइत अछि। वेदांतक अर्थक निरूपण करबाक कारणे व्यास- सूत्र अथवा ब्रह्मसूत्र वेदांत कहव्य लागल। ओहिपर उपलब्ध सभ भाष्य मे प्राचीन एवं प्रतिष्ठित 'शार. ..भाष्य' अछि। एहि भाष्य पर सर्वाधिक विख्यात व्याख्या मामती टीका मे अछि। भामती केवल ...रहस्य केँ अनुपम रीति सँ उद्घटिते टा नहि करैत अछि, अपितु विरोधी मतन खंडन करबाक हेतु आ स्वतंत्र रूप सँ शास्त्रीय निरूपणक लेल सेहो अपन स्वतंत्र विचार-विवेचन उपस्थित करैत अछि।

अतएव वेदांत दर्शन म भामतीक अपन एक स्वतंत्र स्थान छैक। परवर्ती प्रख्यात वेदांती लोकनि अपन ग्रंथ मे शङ्करक सदृश वाचस्पतिक मत केँ सहो सादर प्रतिपादित करैत रहलाह। म.म. थी गिरिधर शर्माक कथन छनि– 'ततएव सर्वेष्वापि दर्शनेषु मुख्याचार्य-सूत्र-भाष्यकारादि समकक्ष महानुभावः समाद्रियते।

भामतीक महत्व पर भामतीक महान व्याख्याकार कल्पतरू'क लेखक अमलानन्द अपन व्याख्याक अंतमे लिखैत छथि– 'न केवल ग्रन्थ व्याख्यामात्र मत्र कृतम अपितु तत्र तत्र बौद्धादि विरूद्ध सिद्धांत स्वातन्त्र्येण नयमरीचिभिः कुर्बता जगताम बोधोऽ पानिये ब्रह्मबोधश्च स्थिरीचके।'

'ब्रह्मबोधश्च स्थिरीचके' वाक्य भामतीक महत्ताक सम्बन्ध मे बहुत महत्वपूर्ण अछि। एकर अर्थ होइछ जे भामती सँ पूर्व ब्रह्मज्ञानक जे स्थिरता नहि छल से भामती द्वारा प्राप्त भेल। भामती सँ पूर्व...ओहेन सशक्त व्याख्या नहि भेल छल।

वाचस्पति मण्डन मिश्रक वेदांत ग्रंथ 'ब्रह्मसिद्धि' पर सेहो अपन टीका तत्त्व समीक्षा लिखलनि अछि। शङ्कराचार्य आ मण्डन मिश्रक दू भिन्न वेदांत प्रस्थान मे सामजस्य स्थापित करबाक प्रयास 'भामती' मे कयलनि अछि। मण्डन मिश्रक अपन स्वतंत्र वेदान्तक प्रभाव छल। वाचस्पति बुझैत छलाह जे जावत धरि शङ्करक विचार केँ मंडनक विचार सँ समथित नहि कयल जायत तावतधरि मिथिला आ उत्तर भारत मे....आदर नहि होयत। एहि उद्देश्य केँ अपना समझ राखि वाचस्पति वेदान्तक किछु मार्मिक स्थल मे शङ्करक पंक्तिक अक्षरानुकूल अर्थ नहि कए एहेन व्याख्या प्रस्तुत कयलनि जे मंडनक सिद्धांतक अनुकूल पड़ैत छल। वाचस्पति मिश्रक एहि नीक उद्देश्य केँ नहि बूझि कतोक...विद्वान एहि लेल हुनक आलोचना सेहो कयलनि। ओहिमे मात्र अमलानन्द सरस्वती एहेन छथि जे वाचस्पतिक उद्देश्य केँ बुझैत भामतीक व्याख्यामे वाचस्पति पर कयल गेल आक्षेप सभ पर अपन उत्तर देलनि अछि।

शङ्कर आ मण्डन दुनू यद्यपि अद्वैतवादी एवं मायावादी छथि, तथापि वेदान्तक अनेक सिद्धान्त मे दुहू महापुरुष मे मतैक्यक अभाव छनि।...मे एक दिस मंडनक मतक खंडन भेटैत अछि तँ दोसर दिस मंडनक ब्रह्मसिद्धि मे....खंडन सेहो उपलब्ध अछि। दुनू गोटेक ग्रन्थक अध्ययन सँ ई विश्वास

करय पड़त जे दुनू गोटेक ग्रंथ दुनू गोटेकेँ प्राप्त भऽ गेल छलनि। शङ्करक मायावादस मंडनक मायावाद अपन स्वतंत्र आस्तित्त्व रखैत अछि। परम सत्ता आ ओकर प्राप्तिक लेल अपन स्वतंत्र विचारक आधार पर कोनो दर्शनक अपन पृथक अस्तित्त्व होइत छैक। बुद्ध आ शङ्कर दुनू मायावादी छथि मुदा दुनू गोटेक दर्शन ओ चिंतन मे कोनो समता नहि अछि।

अंत मे कहबाक अछि जे वेदान्तक चिंतन आ मननक आधार पर दक्षिण आ उत्तर भारत मे सांस्कृतिक एकता स्थापित कय सम्पूर्ण भारत केँ एक क वामे वाचस्पतिक लेखनीक अनुपम योगदान अछि। जाहि समय मे मण्डन मिश्रक आविर्भाव भेल छलनि ओ समय मिथिलाक लेल एक स्वर्णयुग छल, जतय मण्डन, कुमारिल आ वाचस्पति तीन-तीन गोट एहेन दिग्गज दार्शनिक एवं चितक छलाह, जिनका सँ आदि शङ्कराचार्य केँ सुदूर दक्षिण सँ आबि सम्पर्क तथा विचार-विनिमय करबाक बाध्यता भेलनि आ ओहि सँ ओ लाभान्वित भेलाह।

भारती-मण्डन-शङ्कराचार्यक शास्त्रार्थक कथा मात्र दन्तकथा थिक

—डॉ. जयकान्त मिश्र

(डॉ. जयकान्त मिश्रक 'मैथिली साहित्यक इतिहासँ हो वा मैथिली आन्दोलन, 'मैथिली समाचार'क निरंतरता हो वा मिथिला-मैथिलीक कोनो टा काज-समर्पण-भाव आ अभिव्यक्तिक 'बोल्डनेसँ अवश्य रहैछ। ताही 'बोल्डनेसँ क संग उपर्युक्त शीर्षकमे घोषणा केलनि अछि, साहित्य अकादेमी मे मैथिलीक पूर्व-प्रतिनिधि डॉ. मिश्र। ई गवेणात्मक निबन्ध 'शङ्कर दिग्विजय' द्वारा स्थापित भ्रमपूर्ण दन्तकथा केँ ओही शैली मे जबाब दैत अछि-सम्पादक)

हम दर्शन शास्त्रक विद्यार्थी नहि छी, मुदा भारतीय संस्कृतिक इतिहासक विद्यार्थी छी। भारती मण्डन-शङ्कराचार्यक शास्त्रार्थ वला कबाक तथ्य बहुत गम्भीरता सँ बुझबाक चेष्टा कयलहुँ अछि। इतिहासवेत्तक दृष्टि सँ ई इन्तकथा बड़ रोचक लगैत छैक एवं मिथिलावासी केँ गौरवक शिखर पर चढ़ाए नीचाँ खसाय सेहो दैछ। एहि कारणेँ ई दन्तकथा मैथिल समुदाय मे आइ एतेक चर्चित भए गेल अछि।

आदिशङ्कराचार्य मिथिलाक विद्वान केँ— सेहो 'स्वतः प्रमाणम्' आदि सुग्गा पर्यन्त बजैत जनिका देहरि पर छलनि, तनिका हराए देल। तैओ हुनक पत्नी जे शास्त्रार्थ मे मध्यस्थ छलीहि से पुनः हुनके हराय देलथिन्ह। एहि सँ अपन मिथिला-मैथिल-विद्वज्जनक महिमा बढ़ैछ।

मुदा तैओ जे कथा मे आगाँ कहैत अछि जे शङ्कराचार्य अमरूकेए मृत शरीर मे प्रवेश कए पुनः अएलाह तँ मण्डन भारती केँ हराए, मण्डन केँ सुरेश्वरचार्य नामक अपन शिष्य बनाए लेलनि से मिथिलाक पराजय एवं शङ्कराचार्यक महान् दिग्विजयक गाथा कहैछ। एहि सँ मिथिला ओ मैथिल-विद्वज्जनक महिमा घटैछ। ई दुःख ओ अपमानक बोध करबैछ।

एहि दिव्य कथाकेँ बहुत दिन धरि लोक अपना रूचिक अनुसार सुनबैत आ पढ़ैत रहल। एहिमे किछु अकाट्य प्रमाणित विषय छैक-जेना मण्डन मिर मिथिलाक एकटा विशिष्ट मीमांसाक एवं वेदान्तक विद्वान्

छलाह। हिनकर लिखल भावना विवेक, काशी मोक्ष निर्णय ब्रह्मसिद्धि आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ छनि। ई कुमारिल भट्ट केर अनुयायी छलाह। हिनक समय छठम-सातम शताब्दी मानल जाइछ।

दोसर तथ्य अछि जे सुरेश्वराचार्य सेहो मैथिल विद्वान छलाह। हुनकर लिखल सात-आठ टा कृति मीमांसा शास्त्रक ग्रन्थ उपलब्ध छनि— तैत्तरीयश्रुतिवार्तिक, नहिष्कर्म सिद्धि, पंजीकरणवातिक मानसोल्लास, मूर्तिस्तोत्रवार्तिक, कार्तिकसार आदि। हिनक समय लगभग 810 इस्वी सँ 840इस्वी धरि निर्धारित कएल जाइछ।

एहि दुनूक-मण्डन मिश्र एवं सुरेश्वराचार्यक समय मे 100 वर्षक अन्तर छनि। तेँ मण्डन मिश्र सुरेश्वरायार्च नामे आदि शङ्कराचार्यक शिष्य भए गेलाह से असम्भव लगैछ। ततबे नहि सुरेश्वरक विचार मण्डन मिश्रक विचार सभ सँ भिन्न सेहो देखल जाइछ। एतावता ई निश्चय कएल जाए सकैछ जे मण्डन मिश्रे सुरेश्वराचार्य भेलाह से तथ्य संगत नहि अछि।

एही क्रममे तीनिटा नाम आर कहल जाइछ— उम्बेक, विश्वरूपाचार्य एवं भवभूति। कहल जाइद जे ई तीनू गोटे मण्डन मिश्र छलाह, मैथिले परम्पराक विद्वान छलाह। देखू हमर पिता महामहोपाध्याय उमेश मिश्रक 'भारतीय दर्शनक इतिहासँ भाग दोसर, पृष्ठ 118 एवं 119— मुदा एहि हेतु प्रमाण याज्ञवल्क्य स्मृतिक 'बाल क्रीड़ा' नामक टीका कहल जाइछ जे बड़ स्पष्ट नहि छैक।

ई सभ मण्डन-भारती-शङ्कराचार्यक दन्तकथा केँ सिद्ध नहि करैछ— कतहु शास्त्रार्थ मिथिला मे भेलैक, कोनो ताकिक परास्त कएल गेलाह तकरा छूतिओ नहि छैक। हमर कहब अछि जे मिथिलाक विद्वान शास्त्रार्थी छलाह— से मौखिक नहि ग्रन्थ सभ मे खूब स्पष्ट एवं निर्भीक भए विचार व्यक्तक कए लिखल, जानल जाइत रहल अछि। कोनो मैथिल आचार्य वा ग्रन्थ एखन धरि नहि भेटल अछि जाहिमे शङ्कराचार्य आर कोनो मैथिल विद्वानक शास्त्रार्थी विजय संकेतहु सँ कहब गेल हो। मैथिल विद्वान बौद्ध दर्शनक विचार केँ खण्डन करैत छलाह, शास्त्रार्थ करैत छलाह तकर जखन एतेक गौरव सँ कहल गेल संकेत बारम्बार अछि तँ तकर मिथिला परम्परामे कतहु चर्चो नहि लिखित वा संकेत कएल भेटैछ। उदयनाचार्यक गौरवपूर्ण उक्तिक विजय सँ अछि की कोनो तेहन बौद्धिक कोनो शास्त्रीय चर्चा मे

कतहु विषयगत शङ्कराचार्यक शिष्य परम्परा मे भट्ट मत वा मण्डन मिश्रक चर्चा नहि अछि।

स्पष्ट अछि जे ई मात्र शङ्कर दिग्विजय(जकर मात्र शङ्कराचार्यक महत्व बनएबाक हेतु लिखल गेल छल) केर कथा थिक-कपोलकल्पित कथा थिक।

एही प्रकारक मृगवत् आधार वला नाम साम्य सँ वा जेना तेना कालिदास मैथिल छलाह तकरो चर्चा कखनो-कखनो सुनबा मे अबैछ। मेघदूतवला कालिदास मिथिलाक कालिदास मिश्र, उच्चैठवासी सँ मिश्र छलाह ई कथा निर्विवाद महामही-पाठयाय डॉ. गंगानाथ झा 'कवि रहस्य' नामक पुस्तक मे बहुत पहिने स्पष्ट कहने छथि तथपि कालिदास मैथिल छलाह, एहि मृग मरीचिकाक पाछू, हमसभ पड़ल छी। तहिना ई मण्डन मिश्र हमरा सभक विद्वान मण्डन मिश्र नहि छलाह, इएह तथ्य थिक। एहि सँ बेसी किछु नहि कहल जाए सकैछ।

'शङ्करक दिग्विजय' तँ शङ्कराचार्यक दिग् दिगन्त मे विजय यात्राकेँ बढ़एब क हेतु दक्षिणात्य परम्परा मे लिखल अछि। तखन शङ्कराचार्य मिथिला अएलाह सेहो नहि कतहु अपन मिथिलादेशीय परम्परा मे कोनो शास्त्र वा ग्रन्थ मे देल अछि। मिथिला दिसि बौद्ध गया छल, मठ कोनो नहि स्थापना कएलनि– बौद्ध केँ परास्त करब आवश्यक नहि छलनि, इहो तर्कसगत लगैत अछि। मैथिल बौद्धकेँ हराओल से ताल ठोकि कए उदयनाचार्य कहैत छथि। तेँ यदि दक्षिणात्य परम्पराक तँ हमरो लग किछु परम्परा रहैत। हमरा सभकेँ भारती नाम कतहु अदि से परम्परा प्रायः भेटि जाए तँ ताहुठाम यदि एहि शास्त्रार्थक संकेत होइत से नहि अछि। भए सकैछ ई कथा कोनो अन्य शङ्कराचार्य वा अन्य मण्डन मिश्रक दन्तकथाक रूप हो।

जे से, हम मिथिलाक छी, हमर परम्परा मिथिलाक ग्रन्थ सभ मे, मिथिलाक परम्परा मे हमरा सभक युद्धक, हारिक जीतक कतहु भेटय तखन प्रमाण आकाट्य होयत। नहि तँ जेना उपर मेघदूतक कालिदास केँ तकैत रहब। किछु भेटल नहि। मात्र दन्तकथा। सेहो दक्षिण देशक परम्परामे ओझरएने किछु भेटल नहि। मात्र दन्तकथा। सेहो दक्षिण देशक परम्परामे ओझरएने किछु नहि हाथ लागत। एहि तरहक मनगढ़न्त परम्परा हमरा देश मे नहि रहल– विद्यापति चण्डीदास, विद्यापति चैतन्य देव केँ भेट भेल

वाचस्पति मिश्र पर मण्डन मिश्रक प्रभाव

—डॉ. किशोरनाथ झा

(ई अदौकाल सँ विमर्शक विषय रहल अछि जे वाचस्पति मिश्र पर शङ्कराचार्य आ शङ्कराचार्य पर वाचस्पति मिरक कतेक प्रभाव पड़ल अछि। विमर्श एहू विषय पर भेल अछि जे मण्डन मिश्रक कतेक प्रभाव वाचस्पति मिश्र पर भेल अछि। राहुल सांकृत्यायन लिखैत छथि जे शङ्कराचार्यक आ प्रचारक(सन्दर्भ : भामतीक टीका) हुनका नहि भेटल रहितथिन। एहि सँ ई स्पष्ट होइए जे सैद्धान्तिक धरातल पर मण्डन कत' छथि आ वाचस्पति कत'? वाचस्पति मंडनक वेशी नजदीक छथि वा शङ्करक? केँ ककर अनुगामी छथि? एहि गूढ़ विषय के विख्यात विद्वान आ आचार्य डॉ. किशोरनाथ झा वृहत विश्लेषण एत' केलनि अछि।— सम्पादक)

भामती व्याख्याकर वाचस्पति मिश्र केँ प्रकटार्थ विवरणकार मण्डन मिश्रक अनुगामी कहैत छथि—'वाचस्पतिः मण्डन पृष्ठसेवी'। तेँ हमरा जिज्ञासा भेल जे ई देखबाक चाही जे वाचस्पति मिश्र कतेक दूर धरि मण्डन मिश्रक अनुगमन कएलैनि अछि।

ई तँ हमरा सभ केँ ज्ञाते अछि जे मण्डन मिश्रक दू गोट यथाक्रम मीमांसा ओ वेदान्तक प्रसिद्ध ग्रन्थ 'विधि विवेक' आ 'ब्रह्मसिद्धि' पर वाचस्पति मिश्र 'न्यायकणिका' तथा 'तत्त्व समीक्षा' नामक व्याख्या लिखने छथि। जाहिमे न्यायकणिका तँ प्रकाशित रहने हमरा सभक समक्ष उपलब्ध अछि मुदा तत्त्व समीक्षा प्रसिद्ध रहलहु पर कतहु मातृको (पाण्डुलिपियो) रुप मे उपलब्ध नहि अछि। किन्तु भामतीक उपसंहार मे टीकाकार वाचस्पति मिश्र स्वयं अपन सभ रचनाक उल्लेख कएने छथि।

यन्नयायकणिका तत्त्वसमीक्षां तत्त्व बिन्दुभिः।
यन्नयायसांख्ययोगानां वेदान्तानां निबन्धनैः।।
समचैषं महत्पुण्यं तत्फलं पुष्कलं भया।
समर्पितमथैतेन प्रीयतां परमेश्वरः।।

(विधिविवेकक व्याख्या 'न्यायकणिका' ब्रह्मसिद्धिक व्याख्या 'तत्त्व

समीक्षा' द्वैत सिद्धान्तक प्रतिपादन प्रकरण ग्रन्थ 'तत्त्व बिन्दु' न्याय निबन्ध-'न्यायतात्पर्य टीका' सांख्य निबन्धन 'सांख्यतत्त्व कौमुदी' योग निबन्धन-'तत्त्ववैशारदी' तथा वेदान्त निबन्धन-'भामती'क रचना सँ जे हम पुण्यक अर्जन कयलहुँ से सभटा भगवान् परमेश्वर केँ अर्पित कयलहुँ। आओर ओ एहि सँ प्रसन्न होथु।)

यद्यपि शाङ्करभाष्यक व्याख्या भामती मे लोक अपेक्षा रखैत अछि आ विश्वास करैत अछि जे वाचस्पति मिश्र एतए शङ्कर भगवत्पादहिक मतक समर्थन मे युक्ति देखाए हुनक मतक परिष्कार-पल्लवन मे लागल होएताह मुदा से अधिक ठाम दृष्टिगोचर भेलहु पर सभ ठाम नहि भेल छैक। भामती मे एहनो मत प्रतिपादित अछि जे ब्रह्मसिद्धिमे पूर्वहि मे कहल गेल अछि आओर शाङ्करभाष्यक अनुकूल नहि अछि। तेँ हमरा जनैत ब्रह्मसिद्धिक प्रभाव वाचस्पति मिश्र पर अधिक रहल होएतनि जखन ओ भामतीक रचना मे लागल छल होएताह।

किछु गोटाक कहब छनि जे मण्डन मिश्र भर्तृहरि सँ प्रभावित रहथि आओर भर्तृहरि गृहस्थ वेदान्तक परिपोषक-समर्थक छलाह आओर शङ्कर भगवत्पाद संन्यास वेदान्तक प्रवर्तक रहथि। तेँ दुनू सम्प्रदाय मे किछु-किछु भेद परिलक्षित होएब स्वाभाविक अछि।

(क) ब्रह्मसिद्धि मे मण्डन मिश्र अविद्याक दू प्रकार कहल अछि— अग्रहण अर्थात् ग्रहणाभाव तथा विपर्ययग्रहण अर्थात अयथार्थग्रहण—'तस्मादग्रहण विपर्यय ग्रहणे द्वे अविद्ये'। भामतीक मङ्गलाचरण मे एकर चर्चा स्पष्ट रुपेँ भेटैत अछि— 'अनिर्वाच्या विद्याद्वितय सचिवस्य प्रभवतो'। एकर व्याख्या मे भामतीक कल्पतरु व्याख्याकार कहैत छथि —'एका हि अविद्या अनादिर्भावरुपा अन्या पूर्व पूर्व विभ्रम सस्कारः।'

एतए अवधेय अछि जे अविद्याक ई दू प्रकार मण्डन मिश्रक अपन मत थिकनि। अतएव सुरेश्वराचार्य बृहदारण्यक वार्त्तिक मे एकर खण्डन कएने छथि। ई कहैत छथि जे अविद्याक द्वैविध्य युक्ति युक्त नहि भए सकैत अछि। ई कहैत छथि जे अविद्याक द्वैविध्य युक्ति युक्त नहि भए सकैत अछि। हेतु जे एकात्मताक वस्तु दू नहि एके भए सकैत अछि—

'द्वैविध्यं चाविद्याया न च युक्तयावसीयते।
ऐकात्म्यमात्र वस्तुत्वाद विद्यैकैव विद्यते।।(वृ. भा.वा. 2।4।199.)

(ख) शङ्कर भगवत्पाद ब्रह्मसूत्रभाष्यमे अविद्या केँ ब्रह्मक आश्रित कहल अछि—'अविद्यात्मिका हि सा बीजशक्तिर व्यक्तशब्द निर्देश्या परमेश्वराश्रया मायामयी महासुषुप्तिर्यस्यां स्वरुप प्रतिबोधरहिताः शेरते संसारिणी जीवाः ।[शां. भा. 1 ।4 ।3]

शङ्कराचार्यक एहि आशयक व्याख्या करैत वाचस्पति मिश्र कहैत छथि जे अविद्या वस्तुतः जीवाश्रिते होइछ, ईश्वर ओकर विषय होइत छथि। आधारता सम्बन्ध सँ ईश्वर (ब्रह्म) कखनहुँ अविद्याक आश्रय वा आधार नहि होइत छथि अपितु विषयता सम्बन्ध सँ ईश्वरक आश्रित अविद्या होइत अछि। हेतु ई छैक जे ईश्वर विद्या अर्थात ज्ञान स्वरुप छथि। आलोक राशि महासूर्य मे जेना बिन्दुमात्रो अन्धकार नहि रहैत अछि। हेतु जे अन्धकार आ प्रकाश परस्पर विरोधी वस्तु एकठाम नहि रहि सकैत अछि। दुनू मे सहानवस्थान रूप विरोध स्पष्ट अछि। एतए भामतीक पंक्ति एना अछि— 'तस्माज्जीवाधिकरणप्यविद्या निमित्ततया विषयतयावेश्वरमाश्रयते इतीश्वराश्रयेत्युच्यते, न त्वाधारतया, विद्यास्वभावे ब्रह्मणि तदनुपपत्ते रिति'(1/4/3)

एहिठाम अवधेय अछि जे आचार्य मण्डन मिश्र जीव केँ अविद्याक आश्रय कहल अछि। ब्रह्मसिद्धिक ब्रह्मकाण्ड मे एहि प्रसंग जिज्ञासा उठलैक अछि जे अविद्या ककर? तँ समाधान मे कहल गेलैक अछि जे जीवक। अतएव जीव ब्रह्म आओर जीव ब्रह्म केँ यथार्थ रूप मे ग्रहण नहि कए पबैत अछि। यदि कहब जे अद्वैत सिद्धान्त मे ब्रह्म आओर जीव तँ एके थिक, दुनूमे भेद नहि छैक तखन आपत्ति होएत जे विद्या(ज्ञान) स्वरूप ब्रह्म अविद्यौक आश्रय भए जेताह, जाहिसँ विद्या आ अविद्याक सहानवस्थान रूप विरोध नहि रहि पाओत जे कथमपि इष्ट नहि अछि। एकर समाधान मे मण्डन मिश्र कहलनि अछि जे परमार्थतः जीव ओ ब्रह्ममे भेद नहियो रहला पर व्यवहार दशामे काल्पनिक वा अयथार्थो भेद ओहि दुनूमे मानबाक होयत। अविद्यौक आश्रय जीव केँ मानबाक हेतु ई कल्पनयातु भिद्यन्ते। अविद्ययैव तु ब्रह्मणो जीवो विभक्तः'। इत्यादि पंक्तिक इएह तात्पर्य बूझि पड़ैत अछि। एतए यदि देखल जाए तँ मण्डन मिश्र आ वाचस्पति मिश्रक युक्तिमे पूर्णतः साम्य अछि।

(ग) शब्द परोक्षवादक प्रसग वैचारिक साम्य मण्डन मिश्र आ वाचस्पति मिश्रमे देखैत छी। आन अद्वैतवादीक कहब अछि जे अपरोक्षज्ञानक(साक्षात्कारात्मक ज्ञानक) भेलहि पर जीव मुक्त होइत अछि किन्तु ब्रह्मक विषय मे ई अपरोक्षज्ञान कोना संभव छैक— एहि जिज्ञासाक

शान्त्पर्थ ई लोकनि कहैत छथि जे जनिक अन्तः करण कलुप-रहित छैन्हि हुनका 'तत्त्वमसिँ आदि महावाक्य सँ बह्मक अपरोक्षज्ञान(साक्षात्कारात्मक ज्ञान) होइत छैन्हि। एकरा शब्दअपरोक्षज्ञान कहल जाइत छैक। एहि मत मे यद्यपि शब्द प्रत्यक्ष सँ भिन्न अर्थात परोक्ष प्रमाणहु सँ अपरोक्ष ज्ञान भए सकैत छैक यदि विषय स्वरूपतः अपरोक्ष होइक। बह्म तँ सभ वस्तुक स्वरूप मे विद्यमाने छथि अतः सभक अन्तर्यामी ब्रह्मक अपरोक्षज्ञान संभव अछि। फलतः शब्द प्रमाणहु सँ ब्रह्म विषयक अपरोक्ष ज्ञान संभव छैक। एतए प्रमाण दिसि ज्ञान स्वरूप निरूपण नहि कए प्रमेय दिशि सँ ई लोकनि ज्ञानक स्वरूप निरूपित करैत छथि। प्रत्यक्ष प्रमाण सँ प्रत्यक्ष विषयक ज्ञान आ परोक्ष प्रमाण सँ परोक्ष विषयक ज्ञान होइत छैक से नहि मानि ई लोकनि कहैत छथ्हि जे विषय यदि स्वरूपतः अपरोक्ष रहतैक तँ परोक्षो प्रमाण सँ ओकर अपरोक्ष ज्ञान(साक्षात्कारात्मक ज्ञान) संभव छैक।

किन्तु मण्डन मिश्र एहि सँ सहमत नहि छथि। हिनका मतेँ 'तत्त्वमसिँ आदि महावाक्य सँ ब्रह्म विषयक परोक्ष ज्ञाने सम्भव छैक साक्षात्कारात्मक ज्ञान नहि। प्रत्युत उक्तक महावाक्यादि सँ ब्रह्म विषयक परोक्ष ज्ञान भेला पर उपासना द्वारा परमात्मकत्त्वक साक्षात्कार सम्भव छैक से कहैत छथि। 'उपासनादिनातु साक्षात्कृतात्मतत्त्वस्य' इत्यादि ब्रह्मसिद्धि पंक्ति एतए हमर एहि कथाक पुष्टि करैत अछि। भामतीक पंक्तिक एहि सन्दर्भ मे एना अछि— 'त चैष साक्षात्कारो मीमांसा साहितसस्यापि शब्दस्य प्रमाणस्य फलम्' आदि। एतावता मण्डनक अनुगमन एतहु वाचस्पतिक देखैत छी जे शब्दपरोक्षवादहि मे दुनूक विचार घटैत अछि शब्दपरोक्षवाद मे नहि।

(घ) ब्रह्म आ जीवक अभेद स्थापन करबाक जे रीति वाचस्पति मिश्र अनुसरण कएल अछि ताहि मे मण्डन मिश्रक अनुगमन कयल अछि— ई कतोक आलोचक कहैत छथि तेँ शङ्कराचार्यक साक्षात शिष्य पद्पादाचार्यक प्रचलित प्रतिबिम्ववाद सिद्धान्तक उपेक्षा कए ई अवच्छेदवाद सिद्धान्तक स्थापना कयल अछि से प्रायः सर्वविदिते अछि।

'सत्य प्रत्यगात्मा स्वयं प्रकाशत्वादविषपोऽनंशश्च तथा प्यनिर्वचनीयानाद्याविद्या परिकल्पित बुद्धिमानः सूक्ष्म स्थूल शरीरेविन्द्रयादच्छेदेनानवच्छित्रोऽपि वस्तुतोऽवच्छिन्न इव अभिन्नोऽपि मिश्र इव अकर्तपि कर्तेव, अभोक्तपि भोक्त अविषयोऽप्यस्मत् भिन्नमिवानेक विद्यधर्ममिवेति'

(भामती) एहि तरहेँ स्थालीपुलाक न्याय सँ तीनि, चारि गोट उदाहरण द्वारा एतए ई प्रदर्शित करबाक प्रयास हम कयल अछि जे वाचस्पति मिश्र मण्डन मिश्रक अनुसरण कयल अछि। एकर युक्तयुक्तत्व सुधी पाठक पर निर्भर अछि।

हम एतए दू एकटा विषय मण्डन मिश्रक प्रसंग कहए चाहब जे हमरा मोन केँ कचोटैत रहैत अछि। शङ्करदिग्विजयमे चर्चा छैक जे मण्डन मिश्रक संग शङ्कर भगवत्पादक अर्थात आद्य शङ्कराचार्यक शास्त्रार्थ भेलन्हि आ मण्डन मिश्र हुनका सँ हारि गेलाह तथा अपन मत परित्याग कए हुनक शिष्य भए गेलाह जे सुरेश्वराचार्य नामे पछाति प्रसिद्ध भेलाह। हमर एतए बिनम्र निवेदन विद्वान लोकनिक समक्ष ई अछि जे कने एहि पर गम्भीरता सँ विचार कथल जाए जे सातम-आठम शताब्दीक घटनाक वर्णन बिना कोनो ठोस आधारक सोलम शताब्दीक लेख लीखि देल हेतु जे शङ्करक दिग्विजय देखेबाक हुनक मनोरथ छलैन्हि से विद्वत्समाज द्वारा आदृतो आ स्वीकृतो भेल— ई की विस्मयकर कथा नहि बूझि पड़ैत अछि।

दोसर कथा ई जे शङ्कराचार्यक समक्ष भारती (मण्डन मिश्रक पत्नी) कामशास्त्र विषयक प्रश्न कयल आ तकर समाधानार्थ शङ्कर भगवत्पाद कोनो राजाक शरीर मे प्रवेश पाबि छह मास धरि ओहि विषयक ज्ञान अर्जित कए भारतीकेँ उत्तर दए सन्तुष्ट कएलन्हि। की ई शङ्कर भगवत्पादक उत्कर्षक कथा मानल जाएत? एहि सभ तरहक कपोल कल्पनाक त्याग कए मैथिल मण्डनक वैदुष्यक आलोचना होएब आवश्यक अछि तदर्थ हमरा लोकनि यत्न पर होइ— सैह हमरा सभक सारस्वती साधना आ मण्डन मिश्रक प्रति श्रद्धाञ्जलि होएत। हुनक कृति सभक विम्रक विवेक, भावना विवेक, स्फोट सिद्धि आ मीमांसानुकमणीक पठन पाठन हेतु उद्यम करबाक चाही।

स्वनामधन्य डॉ. सर गंगानाथ झा मीमांसा मण्डन नामक व्याख्या मीमांसानु कमणीक लिखने छथि आ एखनधरि इलाहाबाद विश्वद्यिालय मे दर्शन विषय सँ एम.ए. कएनिहार छात्र उक्त ग्रन्थ छथि।

मण्डन उम्बेक-भवभूति : तथ्यात्मक स्पष्टीकरण

—सतीशचन्द्र झा

(औखन कहियो-काल किछु राजनीति-प्रेरित दर्शन क्षेत्रीय विद्वान मण्डनक मैथिलत्व पर आङुर उठाबैत छथि। तिनका सभके पुष्ट प्रमाणक संग जवाब देवा लेल एत' उद्यत छथि, प्राचीन साहित्य, इतिहास आ दर्शनक प्रख्यात विद्वान सतीशचन्द्र झा। श्री झा ईहो प्रमाणित क' पबैत छथि जे मण्डन आ सुरेश्वराचार्य दू भिन्न विद्वान छलाह, एक नै। 'प्रवासी' (हैदराबाद)क यशस्वी सम्पादक अपन एहि तथ्यात्मक स्पष्टीकरणमे 'मण्डन-उम्बेक-भवभूति'क समीकरण केँ प्रमाण-पुरस्सर क्रान्तिकारी ढंग सँ व्याख्यायित केलनि अछि।-सस्पादक।)

'स्वतः प्रमाण परतः प्रमाणं
शुकाङ्गना यत्र गिरोगिरन्ति।
शिष्योपशिष्य रूपगीय मान
भवेहिंत मण्डन मिश्र धाम :।।[1]

समस्त मिथिलामे प्रचलित आ उपरोक्त पदमे उल्लेखित महिमामण्डित पंडित मण्डन मिश्र असली नाम किछु आर)— महिषी (सहरसा जिलाक) गामक(प्राचीन नाम 'माहिष्मती')— क परिचय देबाक कोनहुँ प्रयोजन नहि। ओ 'भट्टपुरा'(दरभंगा जिला)क बहिनोइ आ सुप्रसिद्ध विदुषी 'अम्बा'(वा'उम्बा') जे अपन शास्त्रनिपुणता-गुणक कारणेँ भारती, शारदा, उभय भारती वा सरस्वती नाम सँ जानल जाइत रहथि— क पति रहथि—'श्रीमद् भगिनीभर्त्ता मण्डन मिश्र सर्वज्ञ इव सकल विद्यासु पितामह इव विद्यते' (शङ्कर दिग्विजय' मे कुमारिलक तथाकथित उक्ति)।

पं. मण्डन मिश्रक आचार्य शङ्कर संग शास्त्रार्थ आ ताहि मे शङ्कराचार्यक विजय कपोल-कल्पित अछि, प्रमाण शून्य आ भ्रामक अछि— मात्र दाक्षिणात्य विद्वान (विद्यारण्य—14 म शताब्दीक, आनन्दगिरि— 15म शताब्दीक आ आन) लोकनि द्वारा शङ्कराचार्य केँ सर्रोपरि देखैबाक षडयंत्र अछि। जौ सर्वतन्त्र स्वतंत्र (वृद्ध) वाचस्पति मिश्र(नवम शताब्दीक)—

'अन्हराठाढ़ी' (मधुबनी जिलाक) गामक-आचार्य शङ्कराक वेदानतशास्त्रीय ग्रन्थ 'शारीक भाष्य' पर 'भानती' नामक टीका ग्रन्थ लीखि आचार्य शङ्करक विद्वता केँ प्रचारित नहि करितथि तँ तखनुक उत्तर भारतीय पण्डित-मंडली आचार्य शङ्कर केँ विद्वान मानहु लेल तैयार नहि होइतथि(महापण्डित राहुल सांकृस्थायनक विचार– देखू, हुनक पोथी 'बुद्धचर्य्या' क प्रस्तावनाक पृष्ठ 12)। सुप्रसिद्ध विद्वान महामहोपाध्याय डॉ. श्री गोपीनाथ कविराज (अपन ग्रन्थ 'भारतीय संस्कृति और साधना', प्रथम खण्ड, पृष्ठ 95) एहि सम्बन्ध मे स्पष्ट लिखने छथि जे–

माधवाचार्य कृत 'शङ्कर दिग्विजय'...एहि ग्रन्थक ऐतिहासिक महत्त्व बेसी नहि अछि, कारण एहिमे वाण, मयूर, दण्डी, अभिनवगुप्त आ श्री हर्ष केँ शङ्कराचार्यक समकालीन मानल गेल अछि।

आनन्दगिरि कृत 'शङ्कर विजय'...ई प्रामाणिक नहि अछि, कारण एहि ग्रन्थ मे उत्तरकाल मे आबिभूत त आचार्य लोकनिक उल्लेख सेहो भेल अछि...।

पृष्ठ 106 'वेदान्त शास्त्रक इतिहासमे प्रसिद्ध अछि जे सुरेश्वरक गृहस्थाश्रमा-वस्थाक नाम मण्डन मिश्र छल... ई 'शङ्कर दिग्विजय'क आधार पर अछि....मुदा आइकाल्हिक पण्डित लोकनि विशेष रूपेँ पर्यालोचन कय ई प्रायः सिद्ध क' देलनि अछि जे मण्डन आ सुरेश्वर एकहि व्यक्ति नहि छलाह। मण्डन प्राचीन छलाह आ सुरेश्वर अर्वाचीन...।

पृष्ठ 94...शङ्कराचार्य 788 मे अविभूत भऽ क' ईश्वरत्वक वयसमे, माने 820 ई.मे तिरोहित भेल रहथि...स्वर्गीय के.वी. पाठक केँ, वेलगाँव मे, तीन ताड़-पत्रक एक पोथी भेटल रहनि जकर अन्त मे लिखल छल–

दुष्टाचार विनाशय प्रादुर्भूतो महीतले।
स एवं शङ्कराचार्यः साक्षात् कैवलयनायकः।।

निधि नागेभवह्नयब्दे (3889 कल्यब्द शकाब्द 710 788ई) विभवे शङ्करोदयः।...कल्पब्दे चन्द्रनेत्रांकवह्नयके(3921 शकाब्द 742 820ई.)।

कुमारिल भट्टक जन्मकाल सातम शताब्दीक अन्तिम भाग मे भेल छल– एहि मतक समर्थन कयनिहार आब बहुत विद्वान लोकनि छथि(जेना–'भारतीय दर्शनशास्त्र' लिखनिहार श्री धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री, पुराण ई अछि जे मर्तृहरि(जिनक मृत्यु 651-652 ई.मे भेल रहनि-चीनी यात्री

इ-स्त्रिगक वर्णनानुसार) कृत वाक्य प्रदीप(1013) ई श्लोक कुमारिल भट्ट अपन सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'तन्त्रवार्तिक' मे उद्धृत केने छथि—

'तथा चोक्तम्—तत्त्वबोधः शब्दानां नास्ति व्याकरणादृते'

आ, फेर सातम शताब्दीक पूर्वाद्धक हर्ष आ वाणभट्ट अपन कनहुँ ग्रन्थ मे कुमारिल भट्टक चर्चो नहि केने छथि(जौ हुनका सभक समय काल मे वा हुनका सभ सँ पहिनहुँ ओ वर्त्तमान रहितथि तखने ने हुनक उल्लेख सम्भव छल!)। आ प्रायः ताही कारणेँ डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे अपन पोथी 'धर्मशास्त्र का इतिहासँ खण्ड-1(पृष्ठ 15-17) मे कुमारिल भट्टक 'तन्त्रवार्तिक' लिखबाक समयकाल 650-700ई. मानैत छथि। प्रसिद्ध विद्वान स्व. पं. भगवद्दत(1893-1968) अपन पोथी 'वैदिक वाङमय का इतिहासँक पृष्ठ 255-256 मे एहि बात पर विचार करैत अनुमान कयने छथि जे कुमारिल भट्ट 680 ई.क लगभग वर्त्तमान छलाह।

लामा तारानाथ अपन सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक पोथी 'हिस्ट्री ऑफ बुद्धिज्म इन इण्डिया'क पृष्ठ 259 पर लीखि गेल छथि जे 'इन्द्रगत्तक अनुसारेँ पालवंशी राजा गोपाल आचार्य चारिन(मीमांसा)क मृत्युक अगिला साल राजगद्दी पर बैसलाह; क्षेमेन्द्रभद्रक अनुसारेँ ई ऐतिहासिक घटना हुनक मृत्युक सात वरख पछाति भेल छल'। गोपालक राज्यारोहण 765 ई. लगभग भेल छल— एहि बात पर इतिहासकारलोकनि मतैक्य छथि। तैँ उपरोक्त आचार्य मीमांसाक मृत्यु लगभग 760 ई.मे भेल होयत। प्रो दिनेश चन्द्र भट्टाचार्य अपन पोथी 'हिस्ट्री ऑफ नव्यन्याय इन मिथिला'क पृष्ठ 26 पर उपरोक्त आचार्य मीमांसक केँ कुमारिल भट्ट कहलनि अछि— कारण ओ एतेक प्रसिद्ध रहथि जिनक चर्चा लामा तारानाथ द्वारा आवश्यक छल। ई मत सत्य बुझाइत अछि।

एहि तरहेँ कुमारिल भट्ट समयकाल लगभग 680-760 ई. भेल (ओ वृद्धा-वस्था मे प्रायः 80 बरखक वयसमे— भूसाग्नि सँ अपना केँ जरा मुइल रहथि)। तैँ शङ्कराचार्या(788-820 ई.) क संग कुमारिल भट्टक भेट होयबाक वर्णन('शङ्कर विजय', 'शङ्कर दिग्विजय' आदि मे) मात्र कल्पना पर आधारित अछि— ऐतिहासिक रूपेँ मान्य नहि। ई मात्र शङ्कराचार्य उत्कर्ष हेतु कल्पित भेल होयत। महापण्डित राहुल सांस्कृत्यायन अपन पोथी 'बुद्धचर्य्या'क प्रारम्भिकी (पृष्ठ-12) मे लिखने छथि '...कुमारिल बौद्ध

नहियायिक धर्मकीर्तिक समकालीन छलाह, जे सातम शताब्दी मे भेल रहथि; तैँ शङ्कर सातम शताब्दी सँ पहिलुक नहि भऽ सकैत छथि। शङ्कर कुमारिलक समकालीन छलाह आ दुनू एक दोसराक साक्षात्कार कयने छलाह, ई बात हमरालोकनि केँ 'दिग्विजय' सँ बुझना जाइछ। एहि मे अन्तिम बात सँ, जतय धरि हुनक ग्रन्थ सभक सम्बन्ध अछि, कोनहुँ पृष्टि नहि भेटैछ। जौँ एहेन कोनहुँ बात भेल रहैत तँ कखनहुँ ई सम्भव नहि भऽ सकैत छल जे 'महावंसँ एकर चर्चा नहि करैत। बौद्ध इतिहासज्ञ लोकनिक शङ्करक शास्त्रार्थ पर चुप्पी रखनाय मानहि एहि बातक जोरदार प्रमाण अछि जे ई घटन। सभ भेलहि नहि छल।'

कुमारिल भट्टक ग्रन्थमे हुनक कालीन चारू वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आ शूद्र) क राजा सभद्वारा राज करबा सँ सेहो हुनक सातम शताब्दीक उतरार्द्ध आ आठम शताब्दीक पूर्वाद्धमे वर्त्तमान रहलाक मतक पुष्टि करैत अछि। तैँ एतबा धरि निश्चिते जे कुमारिल भट्टक शिष्य लोकनि 700-750 ई.क लगभग विद्यार्थी रूपेँ रहल होयताह।

साहित्य अकादमी (नई दिल्ली) सँ प्रकाशित 'भवभूति' नामक पोथी श्री जी.के.भट्ट द्वारा लिखित) आ आन कतेको ऐतिहासिक आ साहित्यिक ग्रन्थक अध्ययन सँ स्पष्ट होइत अछि जे भवभूति(सुप्रसिद्ध संस्कृत नाटककार– 'उत्तर रामचरित', 'महावीर चरित' आ 'माधव' क रचयिता)क रचना सभक समय 700-730 ई.क मध्यहि छल (देखू 'भवभूति' पृ.11)।

श्री शङ्कर पाण्डुरंग पण्डित केँ 'मालती माधव'क एकटा प्राचीन हस्तलिखित प्रति भेटल रहनि जकर तृतीय अंकक अन्त मे लिखल रहैक- 'इति श्री भट्ट कुमारिल शिष्य कृते मालती माधवे तृतियोंऽकः'; दसम अंकक अन्त मे लिखल छलैक– 'इति श्री मद्भवभूति विरचिते आ छठम अंकक अन्त मे लिखल रहैक– 'इति श्रीकुमारिल स्वामिप्रसादप्राप्तवाम्वैभव श्री मंदुबेकाचार्य विरचिते मालती षष्ठोऽकः'। एहि सँ स्पष्ट अछि जे भवभूति आ उम्बेक एकहि व्यक्ति रहथि आ ओ कुमारिल भट्टक शिष्य रहथि।

आचार्य शङ्कर(788-820 ई.) क सहपाठी आ पछाति हुनक शिष्य आचार्य चित्सुख तैँ स्पष्टे लिखने छथि जे 'उम्बेका भवभूति' देखू, हुनक

नयन प्रसादनी टीका— 'तात्पर्य दीपिका मे)। कुमारिल भट्टक 'श्लोकवार्तिका पर टीका। ('श्लोकवार्तिक व्याख्या') 'वनवाद' धरि आचार्य उम्बेक कयने छथि आ तकर पछाति कुमारिल भट्टक (तूतत मिश्र) क सुपुत्र जय मिश्र स्वयं। तहिना मण्डन मिश्रक 'भावना विवेक' ग्रन्थ पर आचार्य उम्बेक नाम सँ व्याख्या सेहो लिखल गेल अछि— एहि मे कुमारिल केँ 'भट्ट पाद आ 'गुरु कहल गेल अछि।

उम्बेक कृत 'श्लोकवात्तिक व्याख्या'क प्रारम्भहि मे 'मालती माधव' क ई वाक्य पौल जाइत अछि— 'ये नाम केचिदिह नः प्रथमनयवज्ञाम्।' जिनका भवभूति अपन नाटक' मालती माधव' ज्ञाननिघि गुरु कहने छथि से ज्ञाननिधि(ज्ञानक भंडार) कुमारिल भट्टहि छथि क्यो आर नहि। आब तँ बहुतो विद्वान लोकनि मानय लगलाह अछि जे व्यक्ति पंडित लोकनिक मध्य मण्डन मिश्र कहाबैत रहथि, वैह मीमांसा मे उम्बेक आ नाटक मे भवभूति नामेँ लिखैत रहथि,अपन जिनगीक उत्तरार्द्ध मे ओ राजा यशोवर्मन(कन्नौज)क दरबारी कवि बनल रहथि।

भवभूति अपन कृति मे अपना केँ 'उदम्बर' वंश क ब्राह्मण कहि गेल छथि— हिनकासँ पाँच पीढ़ी पहिने हिनक वंशज एक महाकवि रहथि(कतहु दू सय वस्त्र पहिलुक-530 ई.क लगभगक विक्रमादित्य यशोधर्मनक दरबारी कवि— महाकवि कालिदास तँ नहि?) जे 'वाजपेय' यज्ञ कयने रहथि...'पञ्चाग्नयो धृतव्रताः सोमपीथिन उदुम्बर-नाभाना ब्रह्मवादिनः प्रतिवसन्ति। तदामुष्यायणत्य तंत्र भवतो वाजपेययाजिनो महाकवेः पञ्चमः सुगृहीत नाम्नो भट्ट गोपालस्य पौवः पवित्रकीर्त्तेर्नीलकण्ठस्य आत्मसम्भवः श्री कण्ठ-पदलाच्छनः पववाक्यप्रमाणज्ञो भवभूतिर्नाम जातकर्णीपुत्रः'।(महावीर चरित्र' सँ उद्घृत) 'वंश' चलैत छल (देखल जायः आचार्य पाणिनिक 'अष्टाध्यायी' 61.19)। भवभूतिक उदुम्बर वंशक भेनाय हुनक विद्यावशक परिचय दैत अछि। कालिका-पुराण मे लिखल अछि जे सन्तानोत्पत्तिक लेल ऋषि विश्वामित्रक माय उदुम्बर(गुल्लरि) गाछक आलिगन कयने रहथि। तैँ विश्वामित्र सँ उदुम्बर वंश(विआ-वंश) क स्थापना भेल। यैह कारण मानल जाइत छथि। मुरारी मिश्र (उदुम्बर वंशक लोक सभ) क लेल ऋषि विश्वामित्र अत्यन्त पूजनीय मानल जाइत छथि। मुरारी मिश्र(देखू हुनक 'अनर्घराघव' 2,48) लीखि गेल छथि जे('रामायण', महाभारत' आदिमे सेहो एकर चर्चा

अछि जे) 'ऋषि विश्वामित्रक आश्रम कौशिकी(आजुक कोली' नदी— मिथिलांचल उप-प्रदेशक) नदीक तट पर छल। ओ महान आचार्य आ कुलपति छलाह। हुनक आश्रम मे स्वाध्याय कयनिहार छात्र लोकनिक ध्वनि दूर-दूर धरि सुनबा मे अबैत छल।...' वायु पुराण आ ब्रह्मण्ड पुराण मे एहि विश्वामित्र आ उदुम्बर वंशक चर्चा भेल अछि। यथा, देखल जाय वायु-पुराण(19.97.98) क ई उद्धरण—

'कच्छपः पुराणश्चैव विश्व मित्र सुतस्तु वै।
तेषां गोत्राणि बहुधा कौशिकानां महात्मनाम्।।
पार्थिवा देवराताश्च याज्ञवल्क्याः समर्शनाः।
उदुम्बरा उदुग्लानास्तारका यजमुञ्चताः।।

ऋषि पतंजलिक 'महाभाष्य' (42.71) मे 'उदुम्बरावती' नदीक उल्लेख भेल अछि— सम्भवतः ई कोशी नदीक एक आर नाम रहल हो कारण विश्वामित्र कोशी नदीक तटहि पर रहैत रहथि आ ओ उदुम्बर वंशक आदिपुरुष छथि। एतबे नहि कोशी नदी(जे प्राचीन कालमे पूणियाँ सँ आर पूव दिस बहैत छल) क पार्श्वहिमे—मुर्शिदाबाद जिलामे— औदुम्बर परगाना।(प्राचीन कालक 'औदुम्बरिका-विशाय'- देखू एपिग्राफिया इन्डिका',xix, पृष्ठ 286) अछिये। मैथिल विद्वान लोकनिक उपेक्षित—अनिच्छित चिचारक फलस्वरूपहि महाकवि— नाटककार भवभूति('भव' माने महादेवक कृपा सँ 'भूति' माने प्रतिष्ठ ऐश्वर्य पौनिहार— देखू, श्री कुन्हन राजा लिखित 'सर्वे ऑफ संस्कृत लिटरेचर'क पृष्ठ 183) आ संगहि घनश्यामक व्याख्या— 'भवात् शिवात् भूतिः भस्म सम्पत यस्य ईश्वरेणीय जातु द्विजरूपेण जातु द्विजरूपेण विभूतिर्दत्ता तदा प्रभृति भवभूतिरिति प्रसिद्धो जात इति च परावरविदो विदन्ति'— (द्रष्टव्य, डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे द्वारा सम्पादित 'उत्तररामचरित' पृष्ठ-4), 'विदेह' भूमिक सुपुत्रक बदला मे अपभ्रंश 'विदर्भ' (कुचक रचि, विभिन्न हस्तलिखित प्रति मे बदलैत आ विशेष रूपेँ विदर्भक सुप्रसिद्ध इतिहास लेखक डॉ. रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर आ हुनक वंशज, आत्मीय आ शिष्यलोकनि द्वारा— ज्ञातव्य जे स्वयं श्री भण्डारकर विदर्भ भूमिक छलाह, नहि तँ सातम शताब्दीक प्रारम्भ कालक महाकवि वाणभट्टक 'कादम्बरी' पढ़ि—ओहि अंश के जतय ओ शबर लोकनिक भूमि, एखनुक नर्मदा पारक विदर्भ ओ उत्तर आन्ध्रक ब्राह्मणक वर्णन कयने छथि— के मानि

सकैत अछि जे संस्कृत काव्य आ नाट्य साहित्यक नक्ष त्रमण्डलक सभ सँ देदीप्यमान नक्षत्र भवभूति आ उद्भट्ट मीमांसक उम्बेक वा अद्वितीय वैदिक विद्वान मण्डन मिश्र नर्मदा लगक भूमिका भऽ सकैत छथि?)। ज्ञातव्य जे 'मालती माधव' क सभ सँ प्राचीन उपलब्ध प्रति (जे 1156ई—नेवारी सम्वत 276क लिखल अछि) मे 'विदर्भेपु' शब्द नहि लिखल अछि(भवभूतिक जन्म प्रान्त लेल जेना की 20म शताब्दीक प्रारम्भ सँ कहल जाय लागल)— देखल जाय श्री काशी प्रसाद जायसवालक निबन्ध 'जर्नल ऑफ बिहार एण्ड ओड़िसा रिसर्च सोसायटी' ' मे प्रकाशित भेल।

'गौड़वहो' (प्राकृत ग्रंथ) रचनिहार वाक्पतिराज कन्नौजमे राजा यशोवर्मनक राजदरबार मे आश्रित रहथि— अपना सँ वरिष्ठ आ गुरूतुल्य भवभूतिक संग— से पहिने गौड़(आधुनिक बंगाल आ उत्तर-पूर्व बिहार) देशक राजा धर्म केँ 725 इ.क लगभग मे पराजित क' गौड़ धरि अपन राज्यवृद्धि कयने रहथि(गंडकक पश्चिम धरि तँ कन्नौज राज्य ओहुना रहबे करय ताहि समय)— एतय अपन सामन्त रखने रहथि(जकर अभिलेख वर्दमान नालन्दा आदि सँ प्राप्तो भेल अछि) आ वाक्पतिराजक संगे संग विद्वान(राजा यशोवर्मन स्वयं उच्चकोटिक विद्वान आ कवि रहथि) भवभूति केँ अपना संग कन्नौज लऽ गेल रहथि। तँ हुनक 'मालती माधव' मे कन्नोज राज्यक सभक कतहु-कतहु चर्चा अछि।

जतय धरि हुनक जन्म स्थान पदमपुर' वा 'पद्मावती' केँ चिन्हबाक बात अछि— एखनहुँ धरि सभ विद्वान मे मतैक्य नहि छनि। हमरा जनिते ई नागलोकनिक राजधानीक नाम छल आ विभिन्न ठाम नागवंशीय राजा लोकनिक राज्य रहि आयल अछि— अंग देश(सती बेहुलाक कथा पाठक लोकनि केँ तँ ज्ञात होयबे करतन्हि) मे सेहो बिहार(एखनुक) पूर्वी भाग— जाहि मे सहरसा, सुपौल, पूर्णिया, खगड़िया, बेगूसराय आदि सेहो सम्मिलित छल; मण्डन मिश्रक जन्मभूमि 'महिषी एहि मे अछि। 'महिषी' प्रमुख रानीक उपाधि छलैक— वैह रानी राजाक संग राजदरबार मे सिंहासन पर वैसैत रहथि आ यज्ञ, कर्म, प्रशासनमे राजाक संग वैह दैत रहथि। सम्भवतः एहने कोनहुँ विख्यात रानीक स्मरण दियाबैत अछि एखनुक महिषी'। वा फेर भगवती तारा केँ 'महिष'क बलि प्रदानक कारणेँ ई स्थान कालान्तर मे 'महिषी' रूपेँ विख्यात भऽ गेल होयत। आश्चर्य होइत अछि जे श्याम

नारायण सिंह सन विद्वान आ इतिहासकार (देखू हिनक रचित पोथी 'हिस्ट्र ऑफ तिरहुत 1922 ई.मे प्रकाशित पृष्ठ449) समवत नाटक'क निम्नलिखित श्लोक केँ प्रामाणिक नहि मानैत छथि जाहि मे मण्डन मिश्र केँ मैथिली कहल गेल अछि(मुदा अप्रामाणिक 'शङ्कर दिग्विजय'क नर्मदाकाताक माहिष्मतीक चिन्हबा केँ प्रामाणिक मानैत छथि–

'आखण्डलः पण्डितमण्डलीपु
यत्राभवन्मण्डन मिश्रनामा।
आर्या तु भार्य्याऽपि सतीपदीपा
सभध्यगन्छत्मकल हि शास्त्रम्'

एहि 'समवत नाटक' मे मण्डन मिश्र केँ मैथिल कहल गेल अछि, जखन सिंह महोदय सन 'मित्र बिहारहि मे रहल होथि विदर्भ भूमिक भंडारकर महोदयक प्रति उपरागक निरर्थक बुझना जाइछ। मुदा गवेषण आर आगू बढ़बाक चाही।

सन्दर्भ संकेत :–

– 'हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर'– डॉ. एम. कृष्णमाचारियर–मोती लाल बनारसी दास प्रकाशन, दिल्ली 1970 ई.क पहिल पुर्नप्रकाशन पृष्ठ-616-625

– 'महाकवि भवभूति'– चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी– 1965 ई. क प्रकाशन पृष्ठ- 3-25

– 'पूर्व मध्यकालीन भारत' वासुदेव उपाध्याय-भारती भण्डार प्रयाग, सँ 2009 विक्रम संवत मे प्रकाशित पृष्ठ- 31, 230-232, 187

– 'गुप्त राजवंश तथा उसका युग'– डॉ. उदय नारायण राय, लोक भारती प्रकाशन, प्रयाग-पृष्ठ 20-21

– 'भवभूति'– श्री जी के. भट्ट– साहित्य अकादमी, दिल्ली प्रकाशन (अंग्रेजी संस्करण) 1979 ई क पृष्ठ- 1-16

– 'द अर्ली हिस्ट्री ऑफ बंगाल'– श्री प्रमोदलाल पाल-1939 ई. मे इन्डियन सिसर्च इन्स्टिच्यूट, कलकत्ता सँ प्रकाशित,– पृष्ठ 16

– 'संस्कृत सुकवि समीक्षा'– आचार्य बलदेव उपाध्याय-1963 ई.क प्रकाशन, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी

– 'हिस्ट्री ऑफ एन्शियेन्ट इन्डिया' खण्ड-1 डॉ. एस.के. आयंगर– पृष्ठ-320, 321, 324, 408, 409, 358
– 'संस्कृत नाटकों काा भौगोलिक परिवेश'– डॉ. कृष्ण कुमार, पृष्ठ-79,100,131,134,139,164

मण्डन गुण-ग्राम

—नवीन चौधरी

(मिथिलाक उद्‌भट-विद्वान मण्डन केँ गुण-ग्राम साबित करबाक असंख्य अकाट्य-प्राण आ वैज्ञानिक तर्क अछि। जाहि परिस्थिति, काल आ परिवेशमे ओ अपन दर्शन लऽ क' उपस्थित भेलाह, से प्राचीन भारतीय सामाजिक-तंत्र (सामन्तवाद) क उदय काल छल। ओहि समयमे 'जगन्मिथ्या' केँ ताल ठोकि क' माटि फेकब आ कर्मवादी-दर्शन केँ पुष्ट आधारक संग सुस्थापित करब कोनो साधारण विद्वानक साधंस सँ सम्भव नहि छल। जे अपन जीवनानन्द केँ जीवनक धमन-भट्टी मे होम करबाक लेल तैयार रहैत, सैह शङ्कराचार्यक दर्शन सँ पक्कड़ मोल लऽ सकै छल।

वस्तुतः मीमांसा तर्क, विज्ञान आ पदार्थ थिक। वैज्ञानिक पदार्थक विनाश नहि हो। 'बाबा वाक्यम प्रमाणम्' केर विरोध मे सतत टन-टन बाजैत रहैए। एहेन टन-टन बजैत योग आ गार्हस्थक भौतिकवादी-सह-ब्रह्मवादीक संतुलित दर्शनक प्रयर्त्तक आ सपोषक निश्चित रूपेण 'गुण-ग्रामे' टा भऽ सकै छथि। एहि दर्शनक प्रासंगिकता एहि कारणेँ शाश्वत अछि, जे ई धरती आ धरातल सऽ जुड़ल अछि, मात्र कल्पना-लोक-बिहारी दर्शन नहि थिक मण्डन-दर्शन। तेहन यथार्थवादी दार्शनिक केँ जँ मैथिलक कथाकार, अनुवादक आ विद्वान-विश्लेषक नवीन चौधरी 'गुण-ग्राम' कहि क' विभूषित करैत उपस्थापित करै छथि, तऽ एकरा विश्लेषणारिरैक नहिये टा मानल जा सकैछ। -सम्पादक)

जनकक शासन, याज्ञवल्यक विधान आ गौतमक चिन्तनवला युग बीति गेल। तकर बाद सम्पूर्ण उत्तर भारतक शासक-सूत्र आ सत्ता केन्द्र मे लगले लागल मे गंगा, यमुना, कमला, कोशीसँ महानन्दा तट धरि रहैत लोक सभ उपस्याँत भए गेल। काल्हि धरि समादूत विधि-विधान सा चिन्तन परम्परा बिहड़िया पात भए गेल। बड़ दुष्कर छल ओकरा सभकेँ सम्हारि कए राखब आ सम्हारब। किछु बिहड़िया पात सम्हारि कए रखलनि भास, कालिदास, माघ, भारवि, दण्डी सन कवि-नाटककार लोकनि हिनको

लोकनिक रचनाक विशिष्टता भेल नव आवधरण मे झाँपल परम्परा। शानमय प्रदीप हिनका लोकनिक साधना सँ मिझाएल नहि।

बौद्ध आ जैन धर्मक प्रचार प्रसारक गति अबाध छल। बौद्ध लोकनिक तीनटा महासम्मेलन भल– राजगीर, वैशाली आ पाटलीपुत्र मे। त्रिपिटक पूर्ण भेल। जैन धर्मक प्रसारक गाति मन्थर रहल।

महायान-पंथक 'विमल-कीर्तिनिर्देश-सुत्त' केर रचना मिथिला मे भेल। एहि मे निष्पादित धर्म गीता मे स्थापित...बड़ लग अछि। बुद्ध चरित सौन्दरानंद काव्यक रचयिता अश्वघोष एहि परिसर मे भेल छलाह। बौद्ध श्रमण बुद्धघोष मिथिला वासी छलाह।

बौद्ध आ जैन धर्म मिथिला नहि गछलक। राजनैतिक अनिश्चय आ सांस्कृतिक दुराग्रह मे मौलिक चिन्तन दुर्लभ भए गेल। पुर्वाचार्य लोकनि तिल केँ ताड़ बनबैत रहलाह। पहाड़ खोधि-खोधि मुसरिक शिकार मे रूचि लेनिहारक धरोहि लागल।

प्रस्थान त्रय अर्थात ब्रह्मसूत्र दस टा उपनिषद, गीता पर धनहन चर्चा होइत रहल। एहि चर्चाक स्वरूप उत्तर आ दक्षिण मे भिन्न रहल। विचित्र संयोग बुझि पड़त जे दक्षिण भारतक वेदान्ती सभ छलाह संन्यासी; जेना– शङ्कर, गौड़पाद, मधुसूदन सरस्वती आदि। उत्तर भारतक वेदान्ती सभ गृहस्थ छलाह। गीताक वचनक आदर कोना भेल?

'कर्मनैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन कतु' मर्हसि।।(3:20)

गीता केर एक एक श्लोक मे ज्ञान-विज्ञानक सागर नुकाएल अछि एहिठाम गीताक तीन टा श्लोक उद्धृत अछि

'पूर्वाभ्यासेन तेनैव..ह्यवशोपि सः
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्द ब्रह्मातिवर्तते। (6:44)
रसोहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः रवे पौरूषं नृपु। (7:8)
ऋषिभिर्वहुधा गीतं छन्दोभिर्विधैः पृथक्
ब्रह्मसूत्र पदैश्चैव हेतुनद्भिविनिश्चितैः। (13:4)

भर्तृहरि व्याकरणक पोथी लिखलनि 'वाक्यपदीप'। व्याकरणक एहि पोथी मे 'शब्दब्रह्म' आ शब्दाद्वैत केर स्थापना भेल। उत्तर भारतमे

वेदान्त चर्चाक दिश एतहि निर्धारित भेल। वेदान्ती मण्डन मिश्र शब्दाद्वैत अर्थात् भर्तृहरि परम्पराक अनन्य पोषक छलाह आ आजीवन एहि परम्परक पोषण करैत मिथिला करैत मिथिला केँ गौरव मण्डित कएलनि। कर्मणैव हि संसिद्धि– संन्यासक प्रयोजन नहि।

मीमांसा-दर्शन

मीमांसा दर्शन मे आएल जैमिनीय सूत्र, तखन आएल शबर भाष्य। वार्तिक आ टीका लिखाक दायित्व लेलनि कुमारिल भट्ट। ओ लिखलनि 'श्लोक वार्तिक' आ 'तंत्र वार्तिक' ओ लिखलनि दुप टीका, मध्यम टीका आ बूहट्टीका।

वेदान्त मे शब्द, ब्रह्मवाद आ मीमांसा दर्शन मे जैमिनीय सूत्र सँ कुमारिल धरिक परम्परा बहन करैत मण्डन, मिश्र पांचटा प्रकरणण ग्रन्थक रचना कएलनि-ब्रह्मसिद्धि स्फोट-सिद्धि, भावना विवेक, विधि-विवेक आ विभ्रम विवेक। प्रकरण ग्रन्थक अतिरिक्तक मीमांसानुकमणिक लिखलनि।

वेदान्ती आ मीमांसक मण्डन लेल परवर्ती काल मे केहन धारणा छल से देखने हुनक महत्त्व बुझल जैत। मण्डन मिश्रक बाद नवम शताब्दी मे भेलाह वाचस्पती। आ तखन सुनैत छी– वाचस्पति-ब्रह्मतत्त्व समीक्षा आ न्यायकणिका। ब्रह्मतत्त्व समीक्षा उपलब्ध नहि। वाचस्पति ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्यक विख्यात टीका लिखलनि भामती। किन्तु अपन सभ ग्रन्थ मे वाचस्पति निरन्तर मण्डन पृष्ठसेवी रहलाह। 'भामती' पर्यन्त मे ओ मण्डनक क्षण भरि त्याग नहि कएलनि।

हेबानि मे कुप्पुस्वामी चारिटा सिद्धि ग्रन्थ मे ब्रह्मासिद्धि (मण्डन मिश्र) अद्वैत सिद्धि(मधुसूदन सरस्वती), नहिष्कर्म्य सिद्धि(सुरेश्वराचार्य) आ इष्ठ सिद्धि केर चर्च कैने छथि।

आइ चौदह सय वर्ष सँ जाहि वेदान्ती मीमांसक केर यश-पताका चतुर्दिक फहराइत अछि, जनिक प्रकरण ग्रन्थ सभ देश-देशान्तरक विद्वान अत्यन्त आदरपूर्वक पड़ैत छथि, हुनक जन्म भूमि होएबाक गौरव सँ मिथिला धन्य अछि।

प्रो. राधाकृष्ण चौधरी MITHILA IN THE AGE OF VIDYAPATI मे लिखने छथि'.... his [Kumaril s] own student Mandana was married to his sister Bharati.....another brilliant star Mandan

Misra. He is one of the few illustrious names in the cultural histoyt of India in general and Mithila in particular. Mandana was an upholder of the Vedic social order and the Varnasramadharms. He was of the opinion that whosoever was to be accepted as a Ksatriya. He wrote rituals and orthodax behaviour. He wrote his famous treatise-Mimansanukramanika on vedic rituals and orthodax behaviour. He was exhorted by the famous Sankaracharya to take to Sanyasa, He wrote a marvellous work Naiskarmyasiddhi, where in his impatience with human suffering finds eloquent expression. He gathered round him a band of Scholars and if traditions are to be relied upon his maid servant was also a great poetess His another important work is Vidhi-vivek According to Mandan asray [seat] of avidya is the Jiva and his theory of Avidya-Nivritti is identical with Brahma-Jnana. Thus it appears that he belonged to an earlier School of Adwaita Vedanta page 20]

.....Mandan Misra of Mithila wrote a commentary on Kumaril's Tantravartika. Kumaril was widely studied in Mithila. Mandan Misra wrote Vidhivivek Bhavanavivek, Mimansanukramani Brahmsiddhi[Commented upon by Vachaspti wrote his famous Commentary Nyayakanika[page 264]

'Parthasarathi Mishra had profusely quoted from mandan Mishra in support of hi own statement [page 268]

दक्षिण भारतक किछु हीन-कोटिक विद्वानक हीन-कोटिक पोथी सभ मे जे लिखल होए ताहि लेल उत्तर भारतक चिन्तित नहि भेलाह। मण्डन मिश्र पूज्य छथि, चिरकाल धरि पूज्य रहताह।

मिथिलाक गौरव विदुषी भारती

—डॉ. विनय विश्वबन्धु

(पृष्ठ तार्किक आधार कोनो आलेखक आवेग, स्वरा आ तेवरक निर्धारण करैए। भारतीक भूमिका, जीवन आ ऐतिहासिकता—'शङ्कर दिग्विजय' (माधव-कृत) द्वारा-निर्मित प्रभामण्डल आ दन्तकथा सँ बहारो भ' क' प्रमाणित कएल जा सकैछ। भारतीक व्यक्तित्त्वक विराटताक आभास त' एही सँ भ' जाइछ जे ओ मण्डनक विदुषी-पत्नी आ कुमारिल भट्ट (भट्टपुरा, सरिसव-पाही) क बहिनि छलीह। मुदा साहित्य आ मिथिलाक लोकजीवन सँ जे हुनकर व्यक्तित्त्व उभरैए, तकरो तार्किकता आ ऐतिहासिकता, जन-श्रुति आ किवदन्ति सँ फराक अछि।

एतय मुदा साहित्य आ जन-श्रुतिएक विस्तार फलक पर भारतीक चरित्रांकन करबाक अपना तरहक श्रम-साध्य प्रयास केलनि अछि—युवा-विश्लेषक डा. विनय विश्वबन्धु।— सम्पादक)

वस्तुतः मिथिलाक दर्शन आ एतुक्का जीवन शैली, संस्कृति आ धर्मपरायणता देखि स्वयं देवाधिदेव महादेव एतय आबि महाकवि विद्यापति संगे रहब स्वीकार कयने छलाह, तहिना जगतजननी सीता एहि मिथिलांचल मे अवतरित भऽ सम्पूर्ण मिथिलावासी केँ गौरवान्वित कयने छलीह।

देवी सीता वाल्मीकी, कालिदास ओ भवभूति सँ लऽ अद्यावधि अनेक कवि लोकनिक काव्य-विषय बनि जन-मन केर आराध्या भऽ गेलीह, देवी भारतीक उल्लेख प्रसगवश 'शङ्कर-दिग्विजय' मे किंचित रूपमे भेल अछि, अन्यथा ओ आइ धरि उपेक्षिते रहलीह।

एकहि माटि पर फुलायल दूइ फूलक भिन्न-भिन्न भाग्य!

देवी सीता अपन सतीत्वक परीक्षा दऽ विश्वनारी जातिक गौरवक प्रतिष्ठा कयलनि। देवी भारती ज्ञान आओर धर्मक तुला-दंड लऽ अपना पतिक विरूद्ध शङ्करक विजयक 'कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः' कहि जाहि रूपेँ साहसपूर्ण तेजो-दीप्त घोषण कयलनि ताहि सँ नारी जातिक निरासक्ति, निस्पृहता, धर्म-धुरीणता आर निष्पक्षताक अनुपम प्रतिष्ठा भेल।

देवी सीता आर देवी भारती दुहू मिथिलाक माटिक अप्रितम मुकुल। दुहूक विलक्षण आदर्श चरणक नुपुररव सँ मिथिलाक माटि अनुगूजित अछि। दुहूक कर्म-कमल सँ धर्मक जे पराग ताहि सँ मिथिलाक माटि आप्यायित अछि।

स्वयं शंङ्कर बाजि उठल छलाह—

'भगवती भारती विभावती
धर्मक धात्री गायत्री शुचि सावित्री सम
मन्दार-द्रुम-कुसुम-हार तुल्य पावनी परम
दयोतित नित नूतन तर्क-अर्क
विज्ञान-ज्ञान श्रुति-वित्रुतमयि
प्रतिभा विद्युतक प्रभा समान
जनु चिदानन्द-लतिका लतरल हो भासमान!'

एकठाम पुनः ओ कहलनि—'मण्डन छथि ब्रह्मा आर भारती वाणी छथि एक परम शिव अपर विश्व-कल्याणी छथि!'

शस्य-श्यामला मही आज सिकता-शय्या पर सोती है
मिथिले, आज तुम्हारी महिमा खण्डहरों में रोती है
शङ्कर से शास्त्रार्थ करे जो बोलो, वह भारती कहाँ?
सारा विश्व उतारे जिसकी दीप-गंध आरती कहाँ?'

—कविवर आरसी प्र. सिंह

'दशदिशि विख्यापित गुण गरिमा
जय-जय भारती! जय-जय लखिमा।'

—कविवर यात्री

'भारती न्याय केर तुला-दंड सन छलि भासित
सत्यक सिंहासन पर बैसलि
आलोक-पुंजिता नय-नीता
मर्यादा-मणि-मुकुलिता दुयुता
विद्या-विलासिता शील युता
कर्मक कालिन्दी सँ नहाय जनु बहरायलि
सुकृता शुभा सरला सुधर्म-संभीता सन

अनु अग्नि कुंड सँ निकसलि सस्मित सीता सन!'

—केदारनाथ लाभ

'अछि जेना मण्डित ई मिथिला
जगत् जननी सीता सँ
तहिना सन अछि मुखरित
हमरा सभक ई मिथिला
भारती, मैत्रयी, गार्गी, विद्युतमा सँ'

—विनय विश्वबंधु

श्रद्धेय प्रो. केदार नाथ लाभ रचित 'भारती' केर अवलोकन फयला सन्ता ई बुझना गेल जे जखन शङ्कर केँ ई जिज्ञासा भेलन्हि जे हम विश्व भरिक विद्वान सभ सँ श्रेष्ठ कहाबी आ विश्वविजयी भऽ अपन ध्वजा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मे फहरा दी तखन हुनका अपना पर अतिरेक हर्ष भेल छलनि जे एखन तँ हम मात्र आठ वर्षक छी आओर संन्यास ग्रहण क' देशाटन करैत ज्ञान आओर धर्मक उपदेश दैत विचरण करैत छी। शङ्करक जन्म केरल प्रदेश मे भेल छल आ अल्पवयसमे संन्यास ग्रहण क' जखन ओ सोलह वर्षक भेलाह तँ ओ 'भाष्य ब्रह्म-सूत्र' केँ लिखि पूर्ण क' अपन शिष्य, सभ केँ सुनबैत छलाह आ स्वयं अपना आप पर झूमि उठैत छलाह। ओहि भाष्य मे गूड़ विषयक विवेचन कयने छलाह आ मोन मे ई भावना उठलनि जे हमर भाष्य सम्पूर्ण सूर्यलोक जकाँ एहि आकाश मे पसरल अछि। ई सोचि किछु चितित भेल छलाह जे कोन एहन सूर्य हेतैक जे हिमालय केँ गला क' गंगा वहा सकत? आ कोन एहन चन्द्रमा हेतैक जे अपन चन्द्रकांत मणि सँ जल मे रसधार बहा क' नहा सकत?

जखन शङ्कर ध्यानमग्न छलाह तखन हुनका अन्तर लोचनक आगाँ एकटा दिव्य ज्योति बहरायल। स्वयं भगवान वेदव्यास बनि हुनका आदेश देलखिन जे अहाँ विनत भाव सँ मिथिलाक महाज्ञानी, तपस्वी आ कर्मकांडी पण्डित कुमारिल भट्टक दर्शन करू आओ भाष्यक विशेषताक सहर्ष वर्णन करताह। ई आदेश पाबि शङ्कर काशी सँ अपन शिष्य लोकनिक संग प्रयागक संगम पर आबि देखलनि जे भूस्साक टाल पर बैसल छथि कुमारिल भट्ट वा चारूकात सँ धुआँ उठि रहल छैक आ ओ शान्त भाव सँ अपन कर्मकांडमे

लागल ध्यानमग्न छथि। कुमारिल भट्ट शङ्कर केँ सन्निकट देखि हुनका आदेश देलखनि जे अहाँक जिज्ञासाक पूर्ति मिथिलाक महापंण्डित मण्डन मिश्र करताह आ ओ झट दऽ पुनः ध्यानमग्न छथि। कुमारिल भट्ट शङ्कर केँ आश्चर्य भेलनि जे मिथिला वस्तुतः ज्ञानी, दानी आ पंडितक स्थान अछि। जखन शङ्कर मिथिला मे प्रवेश कयलाह तँ हुनका मोन मे विशेष आनन्दक लहरि आबि गेल छल। ओ देखैत रहला मिथिलाक विराट छवि, प्राकृति सुषमा केर अनुपम जाल आ ओ स्वयं करैत रहलाह बिहार। शङ्कर मिथिलामे देखलनि सभ वर्गक लोक— स्त्री हो वा पुरुष नेना-भुटका संग सभ भगवान मे लीन रहैत अछि। काम-काज अपन-अपन मुदा, अतिथि केर सेवा आ भगवानक स्मरण करैत आर आनोकाज करैत अछि। एतुक्का जन-जीवन अछि कतेक आदर्शनवान, शांतिप्रिय, धर्माचरणक अनुयायी आ न्यायी विचारक। मनोहारी गाछ-पात, गाय-महीस, फूल-पात, आम-लताम कोशी-कमला-गंडक बागमती केर धार। कोशीक कछेर पर देखलनि मंडनक गाम— धर्मपारायणा नारी जे करथि पति केर सेवा-सुश्रुषा आ तुलसी चौड़ामे दैथि जल-सिन्नूर नित्य। करथि सदिखन हरि कीर्त्तन, गाबथि मृदुल गीत जाहिसँ झूमि उठै-ए समस्त मिथिलाक जन-जीवन। ई देखि शङ्कर भेल छलाह प्रमुदित आ सोचलनि जे मिथिला वस्तुतः अछि दोसर कैलाश जतऽ कयलनि अछि मसान-वासी औधड़दानी महादेव निवास। शङ्कर केँ जखन पड़ल छल नजरि विदुषी, धर्म-पारायणा पतिव्रता भारती पर तँ ओ अन्तर्मनसँ प्रणाम निवेदित क' अनुप्राणित भेलाह।

एतय आबि गेल छलाह शङ्कर मण्डन मिश्रक गाम, जतय सुग्गा आ मैना संस्कृत मे करैत छल वार्तालाप, हरबाहा आ चरबाहा सेहो सभ बजैत छल संस्कृत मुदा केओ-केओ बजैत छल प्राकृत। मिथिलाक कला, विज्ञान, धर्म, न्याय, मीमांसाक विद्वान लोकनिक धर्माचरण देखि शङ्कर चकित छलाह आ ओ मण्डन मिश्रकेँ देलन्हि शास्त्रार्थ करबाक निमंत्रण। शुरु भेल छल भारतीय सान्धिय मे एकर श्री गणेश। एतबे नहि दुनू गोटाक हारि-जीत केर निर्णय स्वयं भारती पर राखि देल गेल छल। भारती किछुकाल धरि सोचैत रहलीह मुदा किछु दिनक बाद प्रस्ताव राखि मिथिलांचलक मर्यादा केँ अक्षुण्ण मार्यादाक निर्वाह नहि क' पबैत छी कारण जे एहि दुनू महापंण्डित शास्त्रार्थ केँ समीक्षा करबा मे व्यस्त भऽ अतिथि शङ्कर केँ भोजन धरि ठीक

सँ नहि करा पबैत छी। तेँ हमर विचार अदि जे आब एहि शास्त्रार्थक निर्णय स्वयं हमर गाँयल क' फूलक माला करत आ जिनक माला मौल जायत आ हारि मानि अपन स्थान कात क' पूर्व प्रस्तावित गप्प क' मानि काज करैत जयताह। दुनू माहापंडित लोकनिक बहुत दिन धरि शास्त्रार्थ होइत रहल आ पहिने मण्डन मिश्रक माला मौल क' निस्तेज होमऽ लागल तँ मिश्रजी वैरागय लऽ शङ्करक शिष्य होयब स्वीकार क' लेलनि मुदा भारती कहलनि जे नहि शङ्कर, हम तँ छी अर्द्धांगिनी मिश्रजीक तेँ पहिने हमरा सँ शास्त्रार्थ करू, जँ हमरो परास्त क' देब तँ हम हारि मानि अहाँक श्रेष्टता स्वीकार क' लेब।

पुनः भारती आ शङ्कर मे शास्त्रार्थ शुरू भेल छल। अनेक तरहक आख्यान पर तर्क देल गेल छल— धर्म, अर्थ, मोक्ष आदि पर शङ्कर अपन चरमोत्कर्ष व्याख्यानसँ आगाँ छलाह मुदा काम पर ओ हारि भारतीक आगाँ नतमस्तक भेलाह। शङ्कर बजलाह जे हम अबोध बालक छी आ संन्यासी भऽ धर्मक प्रचार मे आयल छीं नहि अछि ज्ञान हमरा कोनो काम शास्त्रक तेँ हम निरूतर भऽ छी थाकल। भारती बजलीह— हे महाविज्ञ, हे बालयती!

अहाँक आभारी अछि
दक्षिण-पूब केर कयलहुँ अहाँ महामिलन
मिथिलाक माटि पर छींटल सुरभित स्नेह-सुमन।

शङ्कर बजला—

'हे देवि! अहाँ सेवा आ श्रद्धा सँ हम नत छी
मिथिला जनइत अअछि अतिथिक सेवा कोना करी
ई संन्यासी संन्यासी-सन नहि रहि पओलक
स्वागत-सागर मे गेलहुँ डुबि
आदर-गागरि केर सुधा पीबि
संन्यास गेल गृह केर सीमा मे भऽ विलीन
सेवा-सुरसरि मे अनुखन डूबल रहल
हमर तन-मीनक मीन
हमरा लगैत छल हम मायक आंचर छी
नव जनमल शिशु-सन सभक स्नेह-छाहरि तर छी।'

एहि तरहेँ भारती सँ परास्त भऽ शङ्कर किछु धरि अपन विश्व श्रेष्ठ ध्वजा फहरयबा लेल काम शास्त्रक ज्ञान अर्जित करबा लेल एहि मिथिला

सँ फराक चलि गेल छलाह आ मण्डन मिश्रक संग सम्पूर्ण मिथिलांचल केँ अपन विद्वता सँ गौरवान्वित करबा मे अपूर्व योगदान देने छलीह भारती। धन्य छलीह भारती आ धन्य अछि हमर ई मिथिलांचल! तेँ दुनू केँ हम करैत छी सदिखन नमन!!

भारती मण्डन की ऐतिहासिकता, काल तथा स्थल-निर्धारण

—डॉ. वैद्यनाथ झा

(भारती-मण्डनक ऐतिहासिकता, काल-निर्णय आ स्थल-निधरिण, अतीत कालमे 'बहसँ केर विषय रहल अछि। (विवादक नहि।) दाक्षिणात्य विद्वान कुप्पुस्वामी आ अमरीकी विद्वान एलेन थ्रेसर सँ ल' क' पं. सहदेव झा (ठाढ़ी, मधुबनी) आ डॉ. तारानन्द वियोगी(महिषी) धरि एहि विषय पर विशद विमर्श केलनि अछि। आइ स्थल-निर्धारण-सम्बन्धी भ्रमपूर्ण कुतर्कक पर्याप्त काट भ' चुकल अछि आ 'महिषी'(सहरसा-मिथिला) मण्डन मिश्रक ठाम स्थापित भ' चुकल अछि। ताहि तथ्यक सम्पुष्टि, काल-निर्णय आ ऐतिहासिकताक संग एत' प्रस्तुत केलनि अछि, एहि विषयक-विशेषज्ञ आ प्रख्यात विद्वान डॉ. वैद्यनाथ झा। डॉ. झा प्राचीन दर्शन आ संस्कृत साहित्यक उद्‌भट विद्वान आ शिक्षक रहलाह अछि, जिनका भारतक राष्ट्रपति सँ पुरस्कृत हेबाक गौरव प्राप्त छनि।— सम्पादक)

'भारती भारतीरूपां गुरु मण्डनरूपिणम्।
गौतमं याज्ञवल्क्यं च प्रणमामि पुनःपुनः।।

मिथिल- विभूति म.म. मण्डन मिश्र एक ऐसे दिगन्त विख्यात एवं सर्वशास्त्र निष्णात विद्वान थे, जिनके नाम मात्र के श्रवण से मिथिलावासियों की हृदय-तन्त्री झकृत हो जाती है। मिथिलावासियों को इन पर विशेष गर्व है, क्योंकि मिथिला की सांस्कृतिक विचारधारा के सर्वश्रेष्ठ नेता ये मिश्र महोदय ही माने जाते हैं। यद्यपि जनक, याज्ञवल्कय सभी दिगन्तविख्यात विद्वान, मिथिला-संस्कृतिक-परम्परा के आधार-स्तम्भ हैं तथापि कुमारिल भट्ट के बाद आचार्य मण्डन मिश्र को ही सर्वोत्कुष्ट स्थान प्राप्त है। इनके बाद ही वाचस्पति, उदयन आदि का स्थान है।

मिथिला की सांस्कृतिक-परम्परा की विशेषता यह है कि अद्वैतज्ञान की सर्वोच्च स्थिति मे पहुँच कर भी यहाँ के कोई विद्वान देवकर्म, पितृकर्म

आदि नियत कर्म का परित्याग नहीं करते। जीवन में ज्ञान एवं कर्मका यह सामजस्य यहाँ के विद्वानों की विशेषता रही है।

मिथिला की इस सांस्कृतिक विशेषता* का प्रतिपादन आदरणीय मिश्र महोदय ने अपने ग्रन्थ 'ब्रह्मसिद्धि' में किया है। यही कारण है कि मिथिलावासी इनके नाम सुनकर जितना अधिक प्रभावित एवं प्रमुदित होते है, उतना दूसरे विद्वानों के नाम सुनकर नहीं।

मण्डन मिश्र का काल

मण्डन मिश्र मैथिल कुमारिल भट्ट के शिष्य थे...यह बात विद्वत्समुदाय में प्रसिद्ध है एव डॉ. गंगानाथ झा ने भी अपने 'मीमांसानुक्रमणिका' ग्रन्थ के प्राक्कथन में इस तथ्य को प्रमाणित किया है। 'शङ्करादिग्विजय के अनुसार शङ्कर एवं मण्डन में शास्त्रार्थ हुआ, किन्तु शास्त्रार्थ के समय मण्डन वृद्ध थे और शङ्कर थे एक नवयुवक। इस तरह मण्डन शङ्कर के पूर्व-समकालीन सिद्ध होते हैं। कुमारिल भट्ट का समय म.म. एस. कुप्पुस्वामी शास्त्री तथा डॉ. गंगानाथ झा 600-660(ई. ए.डी.) मानते हैं।

शङ्कराचार्य का समय साधारणतः 778-820 ई. माना जाता है। परन्तु 'भारतीय इतिहास की भयंकर भूले' ग्रन्थ के लेखक श्री पुरुषोत्तम नागेश ओ महोदय ने(पृष्ठ-227 में) वृहत् आलोचना कर आदिशङ्कराचार्य का समय ई.पूर्व 509-477 ई. पूर्व निर्धारित किया है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने अपने ग्रन्थ 'श्री शङ्कराचार्य' (पृष्ठ 227 में) वृहत् आलोचना कर आदिशङ्कराचार्य का समय ई.पूर्व 509-477 ई. पूर्व निर्धारित किया है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने अपने ग्रन्थ 'श्री शङ्कराचार्य' (पृष्ठ 37) में लगभग नागेश ओक के समान ही उनका समय माना है। वे लिखते हैं– 'काम कोटि की परम्परा के अनुसार आद्य शङ्कर का समय ई. पूर्व 508-476 है।' किन्तु– म.म. एस. कुप्पुस्वामी शास्त्री ने मण्डन मिश्र कृत 'ब्रह्मसिद्धि' ग्रन्थ की अंग्रेजी भाषा में लिखित विस्तृत भूमिका पृष्ठ 58 (8) मे सभी मतों की समीक्षा कर कुमारिल, शङ्कर एंव मण्डन का समय निम्नलिखित निर्धारित किया है–

.....

* निष्काम कर्म करने से हृदय की शुद्धि होती है, तब ज्ञान का उदय होता

है ओर उससे मोक्ष। इसलिए कर्म एव ज्ञान- दोनों में सामंजस्य जीवन मे सर्वथा आवश्यक है। 'योग संहिता' में स्पष्ट शब्दों में इन दोनों का सामजस्य आश्रयणीय बतलाया गया है—

'ज्ञानकर्मसमायोगात परमाप्नोति पुरुषः।'

'श्रीमद्भगवत गीता में भी यज्ञ, दान एवं तप को पवित्र करने वाले कर्म बतलाये गये हैं तथा ये आवश्यक कर्त्तव्य हैं—

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्र्य, कार्यमेव तत्।
यज्ञो दाने तपश्चैव पावनानि मनीषिणान्।।5।।
एतान्यपितु कर्मणि सङ्गत्यक्त्वा फलानि च।
कर्त्तव्यानीति मे पार्थ! निश्चित मतमुत्तमम्।।6।। (गीता 18अ)

इसलिए मिथिला में उच्च कोटि के ज्ञानी-विद्वान त्रिकाल संध्यावन्दन, तर्पण, देवूपजन, पितृकर्म, पाठ, हवन आदि आवश्यक कार्यो का आसक्ति-रहित होकर आचरण करते ही हैं। यह मिथिला की विशिष्ट संस्कृति है।

कुमारिल भट्ट— 600-660 ई. ए.डी.
मण्डन मिश्र— 615-695 ई. ए.डी.
शङ्कराचार्य— 632-664 ई. ए.डी.

डॉ. पी. बी. कार्ण महोदय मण्डन का समय 620-710 ए.डी. मानते हैं। इस प्रकार मण्डन एवं शङ्कर के समय में एक निश्चित सीमा प्राप्त हो जाती है। डॉ. राम प्रकास शर्मा-विरचित 'मिथिला का इतिहासँ पृष्ठ 518 में शङ्कराचार्य का काल— 789 ई. से 820 ई. तक माना गया है।

ऊपर जो म.म. कुप्पुस्वामी शास्त्री के द्वारा मण्डन मिश्र एवं शङ्कराचार्य का समय निर्धारित किया गया है, उसके सम्बन्ध में कुछ पुर्नीवचार अपेक्षित है जो उपस्थित किया जाता है—

'श्री शङ्कराचार्य' नाम के अपने ग्रन्थ की टिप्पणी(पृष्ठ 45) में आचार्य बलदेव उपाध्याय ने लिखा है कि 16 वर्ष की अवस्था में आचार्य शङ्कर ने प्रयाग में कुमारिल भट्ट से (जो नितान्त वृद्ध थे) भेंट कर अपने भाष्य पर वार्तिक लिख देने की प्रार्थना की। उनके अस्वीकार करने पर वे तुरत मण्डन मिश्र के पास माहिष्मती गये।

मण्डन मिश्र का विशिष्ट परिचय शङ्कराचार्य को देते हुए गुरु

कुमारिल भट्ट ने उनके लिए दो महत्त्वपूर्ण विशेषणों का प्रयोग किया है। उनमें प्रथम विशेषण 'दिगन्नत विश्रान्त यशाः' (शङ्कर दि. 6/933) है। जिसका अर्थ है कि (मेरे प्रिय शिष्य) मण्डन मिश्र ऐसं विशिष्ट विद्वान है, जिनका यश दिगन्त (दिशाओं के अन्त तक) ध्याप्त है।

दूसरा वैशिष्ट्य निम्न पंक्ति में अभिव्यक्त है–

'सर्वासु शास्त्रसरणीषु च विश्वरूपो
मतोऽधिकः प्रियतमश्च मदाश्रवेषु।' (शङ्कर दिग्विजय 7/117)

मण्डन की विशेषता का वर्णन करते हुए कुमारिल भट्ट ने शङ्कर से कहा कि वह विश्वरूप (मण्डन मिश्र) सभी शास्त्रों में मुझसे अधिक (बड़े) है तथा मेरे सभी शिष्यों में सर्वाधिक प्रिय हैं।

ये दोनों विशेषताएँ 60-65 वर्ष की अवस्था से पूर्व संगत नहीं प्रतीत होती। क्योंकि उतनी प्रसिद्धि उससे पूर्व साधारणतया नहीं तो पाती। अतः शङ्कराचार्य जब अवस्था 60 या 65 वर्ष की होनी चाहिए। इस दृष्टि से विचार करने पर मण्डन-समय की पूर्व सीमा 615 ए.डी.(ऊपर कुप्पुस्वामी शास्त्री के द्वारा निर्दिष्ट) से कुछ पूर्व होनी चाहिए एवं शङ्कराचार्य– समय का आरम्भ कुछ आगे बढ़ कर होना चाहिए। इस प्रकार– मण्डन का समय 610-690 ई. ए.डी. तथा शङ्कर का समय 655-687 ई. ए.डी (32 वर्ष) ही मानना मुझे संगत प्रतीत होता है।

इस तरह 20 वर्ष की अवस्था (675 ई. ए.डी.) में शङ्कर ने पहले कुमारिल से और उसके बाद तुरत मण्डन से भेंट की। उस समय मण्डन मिश्र की अवस्था 65 वर्ष की थी। अर्थात् 675 ई.(ए.डी.) में मण्डन मिश्र 65 वर्ष के थे और शङ्कर 20 वर्ष के।

इसी प्रकार आचार्य कुमारिल के द्वारा मण्डन मिश्र के लिए प्रयुक्त उक्त दोनों विशेषताएँ संगत एवं युक्त हो सकती हैं, अन्यथा नहीं।

म.म. एस. कुप्पुस्वामी शास्त्री के द्वारा निर्दित शङ्कर(632-664 ई. ए.डी.) एवं मण्डन (615-695 ई. ए.डी.) के समय के साथ, बलदेव उपाध्याय के द्वारा उक्तक 16 वर्ष की अवस्था में शङ्कर की मण्डन से भेंट की बात पर विचार करने से मण्डन की अवस्था उस समय मात्र 33 वर्ष सिद्ध होती है, * जो संगत नहीं हो पाती।

अतएव म.म. एस. कुप्पुस्वामी शास्त्री के द्वारा शङ्कराचार्य का समय

632-664 ई. ए.डी. मानना तथा बलदेव उपाध्याय के द्वारा 16 वर्ष की अवस्थामें शङ्कर के मण्डन से साक्षात्कार का प्रतिपादन युक्तिगत नहीं प्रतीत होता।

भारती का जन्म स्थान

बिहार राज्य के मधुबनी जिला के अन्तर्गत भट्टपुरा(भटौरा) गाँव में मिथिला की विख्यात विदुषी भारती का जन्म हुआ। यह गाँव 'मनीगाछी' रेलवे स्टेशन के समीप है। मिथिला के प्रसिद्ध गाँव 'सरिसव-पाही' से लगभग डेढ़ मील दक्षिण-पश्चिम में यह 'भट्टपुरा' गाँव बसा हुआ है। मिथिला के विख्यात मीमांसक कुमारिल भट्ट (600-660 ई. ए.डी.) का जन्म इसी गाँव में हुआ था। भारती इनकी ही बहन थी। इनका विवाह सहरसा जिले के 'महिषी' ग्राम निवासी विख्यात विद्वान पं. मण्डन मिश्र के साथ हुआ। कुमारिल भट्ट मण्डन मिश्र मे गुरु थे तथा इस वैवाहिक सम्बन्ध के कारण उनके साले भी लगते थे।* बौद्ध धर्म के प्रबल आघातों से हिन्दू ध र्म एवं कर्मकाण्ड की रक्षा करने वाले मैथिल मनीषियों में कुमारिल भट्ट का नाम अग्रणी माना जाता है। इनकी बहन भारती सरस्वती का अवतार मानी जाती है, जिससे आदिशङ्कराचार्य शास्त्रार्थ में पराजित हुए थे। जिस मण्डन मिश्र मे इनका विवाह हुआ, वे बह्मा के अवतार माने जाते थे।

धन्य है वह भटपुरा ग्राम, जिसने आचार्य कुमारिल जैसे विख्यात वैदुष्य-विभूषित मनीषी तथा अलौकिक प्रतिभाशाली भारती जैसी मिथिला जैसी मिथिला विभूतियों को उत्पन्न किया।

* क्योंकि शङ्कर के पूर्व निर्दिष्ट समय 332 ई. ए.डी. में 16 जोड़ देने से 648 ई. होता है; तथा मण्डन का पूर्व निर्दिष्ट समयारंभ 615 ई. है, अतः 648 ई. में उनकी मण्डन की) अवस्था मात्र 33 वर्ष की सिद्ध होती है। 615+33= 648)

* शङ्कर सम्प्रदाय के प्रसिद्ध आचार्य आनन्द गिरि ने अपने ग्रन्थ 'शङ्कर विजय' में लिखा है कि (प्रयाग में) शङ्कराचार्य से भेंट होने पर कुमारिल भट्ट ने स्पष्ट रूप से मण्डन मिश्र को अपना बहनोई (मद्भगिनीभर्त्ता) बतलाते हुए उन्हें सभी विद्याओं में पितामह (ब्रह्मा) की तरह श्रेष्ठ कहा है–

'मद्भगिनीभर्ता मण्डन मिश्रः सर्वज्ञ इव सकलविद्यासु पितामह इव विद्यते।'

(आनन्दगिरि– शङ्कर विजय, पृष्ठ-174)

मण्डन मिश्र का जन्मस्थान

म.म. मण्डन मिश्र सहरसा जिले के माहिष्मती(महिषी) ग्राम के निवासी थे। यह ग्राम उक्तक जिले में धर्ममूला (धेमुड़ा) नदी के तट पर अवस्थित है। उक्त महिषी ग्राम में अतिप्रसिद्ध उग्रतारा भगवती मंदिर के पास एक ऊँचा स्थान है, जहाँ पूज्यपाद मण्डन मिश्र का आवास था। यह उग्रतारा स्थान प्रसिद्ध शक्तिपीठ है। सम्भवतः यह महिषमार्दिनी भगवती का पीठ है जिससे इस गाँव का नाम 'महिषी' पड़ा। पूज्यपाद मण्डन मिश्र की यही कुलदेवता मानी जाती है। इस भगवती के भव्य मन्दिर का निर्माण, मिथिला के महाराज शिव सिंह (चौदहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण अथवा पन्द्रहवीं के प्रथम चरण) की बड़ी रानी पद्मावती ने करवाया था। मिथिला के खरौड़े वंश के शासन काल में भी राजा की ओर से यहाँ पूजा-पाठ का उत्तम प्रबन्ध रहता था।

इस उग्रतारा भगवती को तन्त्रशास्त्र में आदिशक्ति कहा गया है। सर्वप्रथम वशिष्ठमुनि ने चीनाचार से इनकी आराधना की। इसलिए इनको वशिष्ठ के द्वारा आराधित बतलाया गया है– 'वशिष्ठाराधिता तारा।' सम्भवतः त्रेता युग के वशिष्ठ से भिन्न ये कोई तान्त्रिक वशिष्ठ रहे होंगे, जिन्होंने इनकी आराधना की तथा उन्होंने ही महिषी में उनकी(उग्रतारा की) स्थापना भी की होगी। भगवती की इस मूर्ति पर चीनी मूर्तिकला का प्रभाव परिलक्षित होता है। इसमे सिद्ध होता है कि 'महिषी' मिथिला की एक उत्पन्त प्राचीन बस्ती हैं। इसमें मिथिला की अमूल्य सांस्कृतिक परम्परा सन्निहित है।

इसी उत्यन्त प्राचीन ग्राम में मिथिला विभूति म.म. मण्डन का जन्म हुआ था। प्रसिद्ध आचार्य बलदेव उपाध्याय ने अपने 'भारतीय दर्शन' ग्रन्थ में स्पष्ट रूप से पूज्यपाद मण्डन मिश्र को महिषी ग्राम निवासी बतलाया है–

मण्डन मिश्र मैथिली ब्राह्मण थे तथा माहिष्मती (वर्त्तमान महिषी ग्राम, जिला-सहरसा, बिहार) के निवासी थे*।

मण्डन मिश्र बिहार के महिषी (माहिष्मती) गाँव के निवासी थे– इसमे निम्नलिखित कुछ युक्तियाँ हैं–

(क) माधवाचार्य कृत 'शङ्कर दिग्विजय' ग्रन्थ में महिष्मती को स्पष्टतथा मण्डन मिश्र से सुशोभित बतलाया गया है–

'गन्छन् खसृत्या पुरमलुलोके माहिष्मती मण्डन-मण्डितां सः।(8/1).

.....

* 'भारती दर्शन', प्रकाशक चौखम्बा ओरियण्टालिया, वाराणसी, 1976 ई. पृष्ठ-311

डॉ. रामप्रकाश शर्मा ने भी अपने 'मिथिला का इतिहासँ(पृष्ठ-518) ग्रन्थ में मण्डन मिश्र का जन्मस्थान सहरसा जिले के माहिष्मती (महिषी) में बतलाया हैं। 'मण्डन मिश्र का जन्मस्थान– बिहार राज्य के सहरसा जिले का प्राचीन माहिष्मती (वर्त्तमान महिषी) ग्राम था।

इस 'माहिष्मती' का ही तद्भव रूप, भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने पर, बिहार में सहरसा जिले का वर्त्तमान 'महिषी' हैं। यह तथ्य थोड़ा विचार करने पर अल्पक्ष जन भी समझ सकते हैं।

(ख) 'शङ्कर दिग्विजय की हिन्दी भूमिका (पृष्ठ 34) में जिस मध्य भारत की 'माहिष्मती' नगरो में मण्डन मिश्र का निवास बतलाया गया है, वह माहिष्मती नगरी कल्पित है। अभी वह अनुपलब्ध है; उस नाम की एक छोटी नदी वहाँ बहाती है; यह बलदेव उपाध्याय ने स्पष्ट रूप से बतलाया हैं (देखें 'श्री शङ्कराचार्य' ग्रन्थ, पृष्ठ 72)। परन्तु मिथिला का 'महिषी' ग्राम बिहार राज्य के सहरसा जिले में विद्यमान है। ऐसी स्थिति में उपस्थित (विद्यमान) को छोड़कर अनुपस्थित (काल्पनिक) को स्वीकार करना न्याय की दृष्टि से सर्वथा अनुचित हैं। इसी प्रसंग का एक न्याय व्याकरण शास्त्र में प्रसिद्ध है– 'उपस्थित' परित्वज्य अनुपस्थित कल्पने मानाभाव।'

(ग) बिहार सरकार ने 'महिषी' ग्राम में विद्यमान मण्डन मिश्र के 'डीह' (उच्च भूमि) को मण्डन मिश्र के निवास स्थान के रूप में प्रमाणित कर दिया है। वहाँ मिश्र महोदय के नाम से एक संस्कृत विद्यालय भी बिहार सरकार के द्वारा स्वीकृत चल रहा है। एक संस्कृत कॉलेज भी वहाँ कार्यरत है। (पुरातत्त्व विभाग द्वारा अधिग्रहणक कार्रवाई प्रक्रियाधीन अछि। अंचल अधिकारी, महिषीक प्रतिवेदन पर समाहर्त्ता प्रस्ताव अनुशंसित क' चुकल छथि।)

(घ) मिथिला के विख्यात दार्शनिक पूज्य वाचस्पति मिश्र ने 'शङ्कर

भाष्य' की टीका 'भामती' में एवं 'तत्त्वकणिका' में पाटलिपुत्र के साथ, समीपवर्ती होने के कारण,; माहिष्मती' का उल्लेख किया है । यदि माहिष्मत को मध्य प्रदेश में स्थित माना जाए, तो बिहार के 'पाटलिपुत्र' के साथ (बीच मे पड़ने वाले धार्मिक एवं सांस्कृति)

.....

* प्रसिद्ध दार्शनिक वाचस्पति मिश्र ने पाटलिपुत्र के साथ 'माहिष्मती' का उल्लेख शङ्कर भाष्य की टीका भामती' में तथा मण्डन मिश्र के ग्रन्थ 'भावना विवेक' की टीका 'तत्त्वकणिका' में भी किया है। भामती में मिश्र महोदय लिखते हैं– भामती- वेदान्त कल्पतरू परिमलयुतं शांकराभाष्यम्– (1/1/1/ पृष्ठ-18)

'अस्ति च पाटलिपुत्रे पूर्वदृष्टस्य देवदत्तस्य परत्र माहिष्मत्याभवभाष्यः समीचीनः। अर्थात् पाटलिपुत्र (पटना) में पहले (पूर्व दिन में) देखे गेय व्यक्ति को दूसरे स्थान 'महिषी' (माहिष्मती) में (अग्रिन दिनों में) देखा जा सकता है।

यहाँ समादरणीय वाचस्पति मिश्र ने 'पाटलिपुत्र' के साथ 'माहिष्मनी' का उल्लेख समीप होने तथा परिचिततम होने के कारण किया है। ये दोनों स्थान बिहार प्रान्त में ही हैं।

'न्यायवार्तिक तात्पर्य टीका' में भी मिश्र महोदय ने इसी प्रकार दोनों का उल्लेख किया है– 'न खलु प्रासादमात्रस्य स्मरन्तोऽस्मरन्तश्च तहरें पाटलिपुत्र स्वरूपमात्र स्मृयतया माहिष्मत्यैन घटयितुमीशते, ईशाना वा भवन्त्यभ्रान्ताः।

दोनों दृष्टियों से उल्लेखनीय चिरन्तन प्रसिद्ध काशी, ग्रयाग, अयोध्या, मथुरा, वृन्दावन इत्यादि स्थानों को छोड़कर) अतिदूरवर्ती तथा अपरिचित 'माहिष्मती' का उल्लेख करना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से नितान्त असंगत हो जाएगा।

(ङ) माध्वाचार्य कृत 'शङ्करदिग्विजय' की एक पाण्डुलिपि में कुमारिल भट्ट से मिलने के बाद शङ्कराचार्य के, प्रयाग से पूर्व दिशा की ओर 'माष्मिती' जाने का स्पष्ट उल्लेख मिलता है–

'ततः प्रतस्थे भगवान् प्रयागात् पूर्वा दिश मण्डनमाशु जेतुम्।'

('मण्डन मिश्र तथा उनकी जन्मभूमि महिषी' (निबन्ध) भारती-मण्डन-स्मृति समारोह पत्रिका 1970, हिन्दी भाग, पृष्ठ-17)

उपर्युक्त तर्को एवं युक्तियाँ के आधार पर सिद्ध होता है कि पूज्यपाद मण्डन मिश्र का निवास मिथिला में सहरसा जिले के महिषी (प्राचीन नाम– माहिष्मती) ग्राम में था, इसमें संदेह नहीं।

(च) मण्डन मिश्र के 'माहिष्मती' ग्राम में निवास की सूचना 'महिषी' ग्रम में प्राप्त परिचयात्मक निम्नलिखित श्लोक से भी मिलती है–

'यस्याः पुरो राजति धर्ममूला, यत्रास्ति तारा भुवनस्य सारा।
प्रक्षालितौ तञ्चरणीचयत्र माहिष्मती मण्डन-मण्डित।सा।।

महिषी ग्राम की विशेषता

'महिषी' की विशेषता के सम्बन्ध में एक-दो तथ्यों का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है–

1. 'महिषी' गाँव के चारो ओर पाँच शिवलिंगों की स्थपना मण्डन मिश्र के समय में की गई थी, जिनमें कुछ अभी भी विद्यमान हैं।

2. मण्डन मिश्रजी के समय जिन 9 कुण्डों की स्थापना की गई थी, उनके भग्नावशेष अभी भी प्राप्त होते हैं।

3. मण्डन मिश्र की 'डीह' (वासभूमि) को महिषी गाँव के सर्वे-खतियान में परम्परा के अनुकूल 'मण्डन मिश्र की डीह' लिखा गया है; जिससे इस भूमि की सरकारी मान्यता स्पष्ट है।

4. तन्त्र शास्त्र में 'त्रिकोणयन्त्र' का एक विशष्ट स्थान है। सहरसा जिले में 'महिषी' के तीन भाग में तन्त्र-सिद्धि के तीन प्राचीन स्थान विद्यमान हैं– उग्रतारा स्थान, चण्डी स्थान तथा कात्यायनी स्थान। इन तीनों स्थानों को यदि तीन सरल रेखाओं से मिला दिया जाय, तो इसका रूप भी 'त्रिकोण यन्त्र' का हो जायेगा। जैसे प्रसिद्ध विन्ध्याचल स्थान में समान दूरी पर सिथत 'महालक्ष्मी', 'महाकाली' एवं 'महासरस्वती देवी के मन्दिर 'त्रिकोण' नाम से प्रसिद्ध है, तथा भक्तगण तीनों देवियों का दर्शन अवश्यमेव करते है, वैसे ही 'महिषी' ग्राम का यह 'त्रिकोण स्थान' है। इससे इस ग्राम की प्राचीनता तन्त्रयुग की तरह सिद्ध होती है।

5. 'महिषी' ग्राम में मण्डन की वासभूमि (डीह), इसके समीप (दक्षिण-पश्चिय कोण में एक प्राचीन कूप (जिसे 'महिषी' ग्राम निवासी तथा आस-पास के लोग प्राचीन 'माहिष्मती' के प्रवेश-द्वारा पर स्थित जानते-मानते आये हैं एवं जहाँ मिश्र महोदय की दासी, शङ्कराचार्य से भेंट के समय जल

भने के लिए उद्यत थी) तथा इसके समीप एक तालाब (पुष्करिणी) भग्नावशेष रूप में अभी भी विद्यमान है। यहाँ यह प्रसिद्ध है कि आदिशङ्कराचार्य ने जल भरती हुई दासी से जब मण्डन मिश्र के घर के सम्बन्ध में पूछा, तो उसने (दासी ने) प्रथमतः उनसे (शङ्कर से) इसी तालाब के वर्णन करने के लिए कहा था।

इसी विशिष्ट महिषी (प्राचीन नाम- माहिष्मती) ग्राम में पूज्यपाद मण्डन मिश्र का निवास, पूर्वोक्त बलदेव उपाध्याय-कृत 'भारतीय दर्शन' ग्रन्थ (पृष्ठ-311) के उद्धरण में स्पष्ट प्रतिपादन एवं अनेक युक्तियों के आधार पर सिद्ध होता है।

अब मण्डन मिश्र का निवास 'माहेश्वर', 'मान्धाता' या 'मण्डला' में था'– इस मत की भी परीक्षा कर लेनी चाहिए।

श्री सत्यानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थ श्री शङ्कर दिग्विजय' (पृष्ठ 22 एव 81) की टिप्पणी में लिखा है– माहिष्मती नगरी इन्दौर राज्य में नर्मदा तट पर हैं, जिसका वर्त्तमान नाम 'मंडला' या माहेश्वर है। यहीं मण्डन मिश्र का निवास था। माहिष्मती में जिस स्थान पर पं. मण्डन मिश्र रहा करते थे, अब उसका नाम 'मण्डलेश्वर' है।

इसी प्रकार 'निमाड़ का पुरातात्त्विक वैभव' ग्रन्थ में उसके लेखक डॉ. शिव नारायण यादव ने भी लिखा है– 'महेश्वर का प्राचीन नाम माहिष्मती था।.... महेश्वर ही मण्डन मिश्र की जन्मस्थली हैं।'

ये दोनों कथन तर्कविरूद्ध एवं असंगत है। उपर्युक्त कथन के विरोध में मेरा निवेदन है कि– एक नाम के उनेक व्यक्ति तथा उनेक गाँव हो सकते है, किन्तु

.....

* ध्यान रहे कि माधवाचार्य एवं सत्यानन्द सरस्वती इन दोनों आचार्ये के ग्रन्थों का एक ही नाम 'श्री शङ्कर दिग्विजय' है। इनमें माधवाचार्य कृत ग्रन्थ (जिसकी हिन्दी टीका आचार्य बलदेव उपाध्याय ने की है) प्राचीन है। यह ग्रन्थ महन्थ शान्तानन्द नाथ के द्वारा संवत् 2000 (1943 ई.) में हरिद्वार से प्रकाशित है। सत्यानन्द सरस्वती का ग्रन्थ वि. सं. 2042 (1985 इ.) में गोविन्द मठ, टेढ़ीनीम, वाराणसी-। से प्रकाशित है। अतः यह उससे अर्वाचीन (नवीन) है। सत्यानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थ में माधवाचार्य के

ग्रंथ के उनेक श्लोकों की अविकल रूप में उद्घृत किया है तथा उनके कुछ श्लोकों को छोड़ दिया है एवं कुछ का केवल सारांश हिन्दी मे' दे दिया है। अत; प्रस्तुत लेख में मैंने माधवाचार्य के ग्रन्थ से ही उद्धरण लिया है। अतएव इस लेख में माधवाचार्य के 'शङ्कर दिग्विजय' के खण्डन से सत्यानन्द सरस्वती के इस ग्रन्थ का भी खण्डन समझना चाहिए। सम्यानन्दजी का 'शङ्कर दिग्विजय माधवाचार्य के 'शङ्कर दिग्विजय' का लघु संस्करण जैसा लगता है।

सबको एक नहीं माना जा सकता; क्योंकि सबकी अपनी-अपनी अलग विशेषताएँ है। अतएब बिहार प्रान्त के सहरसा जिले के वर्त्तमान महिषी (प्राचीन नाम-माहिष्मती) ग्राम को (जहाँ पूज्यपाद मण्डन मिश्र का निवास था) तथा प्रदेश के इन्दौर राज्य में 'मान्धाता', 'मण्डला' या माहेश्वर (महेश्वर) को एक नहीं माना जा सकता एवं मिथिला विभूति मण्डन मिश्र को 'मान्धाता', 'मण्डला' या 'माहेश्वर' का निवासी भी नहीं माना जा सकता। इसमें कारण यह है कि युक्ति एवं प्रमाण के आधार पर ही कोई मत समुचित, प्रामाणिक एवं मान्य होता है। मध्य प्रदेश के 'माहेश्वर' (महेश्वर), 'मान्धाता' या 'मण्डला' को मण्डन मिश्र के निवास ग्राम मान ने के पक्ष में न कोई प्रबल प्रमाण है और न युक्ति। विचार कर लें—

1. आद्य शङ्कराचार्य के जीवन चरित पर विरचित 'शङ्कर चरित', 'शङ्कर विजय-विलासँ, 'गुरुवंश काव्य' इत्यादि किसी भी प्राचीन ग्रन्थ में, 'महेश्वर', 'मान्धाता' या मण्डला को मण्डन मिश्र का जन्मस्थान नहीं बतलाया गया है। सबसे प्रसिद्ध एवं प्रचलित माधवाचार्य के 'श्री शङ्कर दिग्विजय' ग्रन्थ में भी केवल 'माहिष्मती' की मण्डन मिश्र से सुशोभित बतलाया गया है'— माहिष्मती मण्डनमण्डितां सः। (शङ्कर दि. 8/1)। इस श्लोक की हिन्दी टीका में प्रसिद्ध आचार्य बलदेव उपाध्याय ने 'महेश्वर' या 'मण्डला' की चर्चा भी नहीं की है। अतः इस कल्पना का कोई प्रामाणिक आधार नहीं है।

2. भाषा वैज्ञानिक आधार— 'महेश्वर,' 'मण्डला' या 'मान्धाता' शब्द पर यदि भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करते हैं, तो प्रतीत होता है कि 'महेश्वर', 'मान्धाता' या मण्डला' शब्द माहिष्मती का तद्भव रूप नहीं हैं। (माहिष्मती का तद्भव रूप 'महिषी' ही है। जिस गाँव में (बिहार प्रान्त)

मण्डन मिश्र का निवास प्रसिद्ध है।) इसमें कारण यह है कि भाषा विज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार तद्भव शब्द में मूल तत्साम शब्द की ध्वनियाँ अधिक मात्रा में उच्चरित होती हैं, जिनसे तत्सम एवं तद्भव शब्दों में समानता स्पष्टतया परिलक्षित होती है, जैसे– कर्म से काम, कार्य से काज, भक्त से मान, दाली से दाल, रात्रि से रात, धान्य से धान, दधि से दही, दुखम् मे दूध, मनः से मन, दन्त से दांत, ग्राम से गाँव, पानी आदि।

दो अक्षर– 'ह' तथा 'म' के भिन्न जाने के कारण 'माहिष्मती' से वर्त्तमान 'माहेश्वर' या 'महेश्वर' का तथा एक अक्षर 'म' के मिल जाने से 'मण्डला' या 'मान्धाता' का उद्भव मानना अत्यन्त उपहासास्पद तथा अनभिज्ञता का सूचक होगा; क्योंकि ऐसा मानने पर (एक या दो अक्षर के साम्य के आधार पर) नर से वानर का, मूर्खराज से अनेक अनभिप्रेत शब्दों से अनभीष्ट शब्दों का) उद्भव स्वीकार करने में भी कोई बाधा नहीं होगी। ऐसी स्थिति में बड़ी अव्यवस्था एवं अनियमितता उपस्थित हो जाए गी।

अतएब तद्भव शब्दों में तत्सम शब्दों की ध्वानियों के अधिकांश में साम्य आवश्यक रूप से मानना ही होगा। इस प्रकार 'माहिष्मती' का तद्भव रूप 'महिषी' ही सिद्ध हो सकता है 'माहेश्वर', 'मण्डला' आदि नहीं।

'मण्डन मिश्र का निवास मध्यप्रदेश की प्राचीन नगरी में था'– इस मत के विरोध में निम्नलिखित युक्तियाँ भी हैं।

3. यदि मण्डन मिश्र का निवास, मध्यप्रदेश में नर्मदा तट पर प्राचीन काल में अवस्थित 'माहिष्मती' नगरी (वर्त्तमान नाम- मान्धाता, माहेश्वर या मण्डल) में मान लिया जाए, तो यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि प्रयाग में कुमारिल भट्ट से भेंट करने के बाद उनेक आदेशानुसार शङ्कराचार्य मण्डन के पास मध्यप्रदेश वापस लौट गये। ऐसी स्थिति में दो तथ्य बिलकुल असंगत हो जाते हैं–

(क) आसेतु– हिमालय शिष्य– मण्डल समेत दिग्विजय के लिए प्रस्थित शङ्कर प्रयाग से ही मध्यप्रदेश की लौट गये– वह बात सिद्ध हो जाती है, जो सर्वथा असंगत है। क्योंकि समस्त भारत की विजय-यात्रा के इच्छुक कोई अति प्रभावशाली आचार्य भला आघे रास्ते से ही कैसे लौट पड़ेगा?

(ख) दूसरी असंगत होने वाली बात यह है कि शङ्कर दिग्विजय क

अने अनुसार शङ्कर ने भारत के सभी प्रमुख विरोधी विद्वानों को पराजित करने के क्रम में मिथिला के मुरारि, उदयन आदि प्रसिद्ध आचार्यो को भी जीत लिया (शङ्कर दि 15/162)। किन्तु जब शङ्कर प्रयाग से ही मध्यप्रदेश को लौट गये मिथिला गये भी नहीं, तब मिथिला निवासी इन उद्भट विद्वानों को परास्त करने की बात कैसे संगत हो सकती है? यहाँ एक कठिन समस्या उपस्थित हो जाती है। इस समस्या का समाधान तभी हो सकता है, जब मिथिला में सहरसा जिले के 'महिषी' (प्राचीन नाम- माहिष्मती) ग्राम में ही मण्डन मिश्र का निवास स्थान माना जाय तथा वहाँ आद्यशङ्कराचार्य का गमन स्वीकृत किया जाय, तभी मिथिला के विद्वानों को पराजित करने की बात संगत हो सकती है।

इस विवेचन मे मिथिला में सहरसा जिले के 'महिषी' (माहिष्मती) ग्राम में ही मण्डन मिश्र का निवास स्थान मानना तर्कसंगत सिद्ध होता है, मध्यप्रदेश में नहीं।

4. यदि मण्डन मिश्र का निवास मध्यप्रदेश की 'माहिष्मती' नगरी में माना जाए, तो जगद् विख्यात दार्शनि पूज्य वाचस्पति मिश्र के द्वारा अपनी 'भामती' टीका। में 'पाटलिपुत्र' के साथ (समीपवर्ती होने के कारण) 'माहिष्मती' का किया गया उल्लेख* कैसे संगत होगा? क्योंकि बिहार के 'पाटलिपुत्र' के साथ (बीच में पड़ने वाले प्रसिद्ध काशी, प्रयाग, अयोध्या, मथुरा वृन्दावन इत्यादि धार्मिक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्थानों को छोड़कर) अतिदूरवर्ती तथा अपरिचित 'माहिष्मती' का उललेख करना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से असंगत हो जाएगा।

.....

* शङ्करभाष्य 1/1/1 की 'भामती' टीका में वाचस्पति मिश्र लिखते है(पृष्ठ-18) 'अस्ति च पाटलिपुत्रे पूर्वदृष्टस्य देवदतस्स परत्र, माहिष्मत्याभवीासः समीचीनः।

यहाँ पूज्य वाचस्पति मिश्र ने 'पाटलिपुत्र' के साथ 'माहिष्मती' का उल्लेख समीप। होने एवं परिचित होने के कारण किया है।

इस तर्क की चर्चा, इस प्रसंग में, पहले भी की जा चुकी है। अतः वाचस्पति के इस उल्लेख से सिद्ध होता है कि 'पाटलिपुत्र' एवं 'माहिष्मती'– दोनों स्थान समीपवर्ती हैं एवं पूज्य वाचस्पति मिश्र के द्वारा पूर्वदृष्ट तथा सुपरिचित हैं। बिहार प्रान्त में अभी भी ये दोनों स्थान समीप में ही

अवस्थित है।

5. यदि मध्यप्रदेश की प्राचीन 'माहिष्मती' में मण्डन मिश्र का निवास माना जाए, तो शङ्कर-मण्डन-शास्त्रार्थ, भारती(मण्डन मिश्र-पत्नी) से शङ्कर की पराजय तथा उनके(भारती के) काम-प्रश्न के उत्तर के लिए मृत अमरुक राजा के शररी में प्रविष्ट होकर शङ्कर का उसकी शताधिक सुन्दरियों के साथ सहवास इत्यादि 'शङ्कर दिग्विजय' में वर्णित घटनाएँ वहीं (मध्यप्रदेश में ही) घटित हुई— यह मानना पड़ेगा। ऐसी स्थिति में एक कठिन प्रश्न उपस्थित होता है। वह यह है—

ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार राजा अमरूक गौड़, जनपद के शासक थे। मध्य काल में वर्त्तमान पश्चिम बंगाल का कुछ अंश 'गौड़ जनपद' कहा जाता था। यदि मण्डन मिश्र नर्मदा नदी के तटवर्ती(मध्यप्रदेशीय) किसी 'माहिष्मती' के निवासी होने तथा वहीं मण्डन-शङ्कर-शास्त्रार्थ एवं भारती-शङ्कर-शास्त्रार्थ हुआ होता , तो भारती से पराजित शङ्कर का उनके (भारती के) द्वारा (काम- प्रश्न के उत्तर के लिए) स्वीकृत एक मास के भीतर ही नर्मदा तट की 'माहिष्मती' सं गौड़ जनपद पैदल पहुँचना (क्योंकि उस समय रेल, मीटर, वायुयान आदि किसी भी प्रकार का शीघ्रगामी साधन उपलब्ध नहीं था) तथा अमरूक की देह मं योगबल से प्रविष्ट होकर उसकी सुन्दरियों के साथ कामशास्त्रीय व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करना एवं पुनः 'माहिष्मती' में लौट कर उनको (भारती को) का प्रश्न सम्बन्धी उत्तर देना— कथमपि साध्य तथा ग्राम से गौड़ प्रदेश अपेक्षाकृत समीप है, वहाँ कुछ दिनों में ही आसानी से पहुँचा जा सकता है तथा एक मास के भीतर ही इस 'माहिष्मती' में कोई लौट सकता है।

अतः (यदि मण्डन-शङ्कर एव भारती-शङ्कर के शास्त्रार्थ की सक्ष्य माना जाए, तो) शङ्कराचार्य इसी 'माहिष्मती' ग्राम से गौड़ जनपद गये और एक मास के भीतर वहाँ लौट कर यहाँ उत्तर देने के लिए पहुँचे— यही तर्क की कसौटी पर संगत प्रतीत होता है।

6. आदिशङ्कराचार्य के जीवन चरित पर विरचित ग्रन्थों में माधवार्चा रचित श्री शङ्कर दिग्विजय सर्वाधिक प्रसिद्ध एवं प्रचलित है। इस ग्रन्थ की अनेक पाण्डुलिपिया हैं जिनमें पाठभेद बहुत है। एक पाण्डुलिपि में स्पष्ट रूप में कहा गया है कि कुमारिल भट्ट से भेंट करने के बाद आदिशङ्कराचार्य प्रयाग

से पूरब की और, मण्डन मिश्र को जीतने के लिए उनसे सुशोभित 'माहिष्मती' गये–

'ततः प्रतस्थे भगवान् प्रयागात् पूर्वा दिश मण्डनमाशु जेतुम्।
गच्छन् श्वसृप्या पुरमालुलोके माहिष्मतीं मण्डनमण्डितां सः।।'
(शङ्कर दि. 8/1)

.....

* भारती-मण्डन-स्मृति महासमारोह, महिषी, स्मारिका 25-3-1970, हिन्दी भाग पृष्ठ-6

प्रयाग से पूरब मिथिला ही सांस्कृतिक केन्द्र है, जहाँ माहिष्मती' (महिषी) अभी भी विद्यमान है*।

7. सहरसा जिले के (बिहार प्रान्त) 'महिषी' ग्राम के एक वयोवृद्ध विद्वान से प्राप्त निम्नलिखित श्लोक में भी स्पष्टतया बतलाया गया है कि धर्ममूला (धेमुड़ा) नदी के पश्चिम तट पर विद्यमान 'माहिष्मती' (महिषी) ग्राम में (अहाँ त्रिभुवन सारा भगवती तारा विराजमान है) पूज्य मण्डन मिश्र का निवास था–

'यस्या पुरो राजति धर्ममूला, यत्रास्ति तारा भुवनस्य सारा।
प्रक्षालितौ तच्चरणी च यत्र, माहिष्मती मण्डन-मण्डिता सा।।

इस विवेचन से सिद्ध होता है कि माधवाचार्य के 'माहिष्मतीं मण्डन माण्डिता सः' (शङ्कर दिग्विजय 8'1) में उक्त 'माहिष्मती' बिहार के सहरसा जिले का 'महिषी' ग्राम ही है, जहाँ मण्डन मिश्र का निवास था तथा जहाँ कुमारिल भट्ट के कहने पर आद्य शङ्कराचार्य पूज्य मण्डन मिश्र से अपने भाष्य से अपने भाष्य पर वार्तिक लिखवाने गये थे।

मण्डन मिश्र के सम्बन्ध में फैली भ्रान्ति तथा उसका निराकरण

मण्डन मिश्र के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का एक मात्र साधन है आद्य शङ्कराचार्य के जीवन चरित सम्बन्धी ग्रन्थ। क्योंकि प्राचीन विद्वान अपने ग्रन्थ में अपना परिचय देने में आत्मश्लाघा मानते थे। अतएव कालिदास, मण्डन, विद्यापति आदि मिथिला विभूतियों के जीवनवृत्त के सम्बन्ध में अनेक मत उपस्थित हो जाते हैं। जैसे मैथिली साहित्य के महाकवि विद्यापति को बहुत दिनों तक बंगाली विद्वान बंगाल में उत्पन्न

मानते थे, वैसे ही कालिदास के विषय में अनेक मत-मतान्तर उपस्थिति किए जाते है। इनके भी विषय में गवेषनात्मक विवेचना आवश्यक है। इसी प्रकार पूज्यपाद मण्डन मिश्र के सम्बन्ध में भी, आनन्द गिरिकृत 'शङ्कर विजय', चिद्विलासयति विरचित 'शङ्कर विजय विलासँ, शृंगेरी मठानुसार निर्मित गुरुवशकाव्य, तथा माधवाचार्य एवं सत्यानन्द सरस्वती रचित श्री शङ्कर दिग्विजय इत्यादि शङ्कर चरितात्मक ग्रन्थों में ऐसा विकृत कर दिया गया है, जिससे उनके विषय में एक भंयकर भ्रान्त धारणा फैल गई कि मण्डन मिश्र तथा आदि शङ्कराचार्य में घोर शास्त्रार्थ हुआ जिनमें पराजित होकर मिश्र महोदय ने (शास्त्रार्थ में की गई प्रतिज्ञा के अनुसार) संन्यास ग्रहण किया तया वे सुरेश्वराचार्य के नाम से प्रसिद्ध होकर दक्षिण भारत के शृंगेरी मठ के प्रथम अध्यक्ष हुए।

.....

* भारती-मण्डन-स्मृति-महासमारोह, महिषी-स्मारिका।

माधवाचार्य का 'शङ्कर दिग्विजय' में यह प्रतिपादन ग्रन्थ; शङ्कराचार्य का 'ब्रह्मसूत्र-शांकरभाष्य', सुरेश्वराचार्य के 'नहिष्कर्म्यसिद्धि' 'तैत्तिरीयभाष्यवार्तिक तथा 'वृहदारण्यक भाष्य वार्तिक', वाचस्पति मिश्र की 'भामती' (शांकरभाष्य की टीका)– ये ग्रन्थ वेदान्त साहित्य में प्रसिद्ध है। इन ग्रन्थों के अनुशीलन से ज्ञात है ता है शङ्कर और मण्डन समकोटि के ही अद्वैतवेदान्ताचार्य थे, परन्तु इन दोनों में सर्वत्र मतैवय नहीं था। मण्डन मिश्र और शङ्कराचार्य में न तो शास्त्रार्थ हुआ न पराजित होकर मण्डन संन्यास ग्रहण कर सुरेश्वराचार्य हो हुए। यह तथ्य मण्डन-मत से सर्वथा विरूद्ध शङ्कर एवं सुरेश्वर के मत उपलब्ध होने से सिद्ध हो जाता है। नीचे मण्डन-मत एवं शङ्कर-सुरेश्वर मत में विरोध का दिग्दर्शन कराया जाता है।

1. मण्डन मिश्र का ग्रन्थ 'ब्रह्मसिद्धि' प्रसिद्ध है। इसमे मिश्र महोदय अविद्या के 'अग्रहण' तथा 'विपर्ययग्रहण' ये दो भेद स्वीकार करते है। (ब्रह्मसिद्धि पृष्ठ-149) परन्तु सुरेश्वराचार्य 'वृहदारण्यक भाष्यवार्तिक (भाग-2, कारिका-199) में इसका प्रचुर खण्डन करते हैं।

2. 'विद्या' चाविद्या च यस्तद वेदोभवं सह' इस ईशावास्योनिषत् कारिका की मण्डन मिश्रकृत व्याख्या से शङ्कर एवं सुरेश्वरकृत व्याख्यान सर्वथा भिन्न है।

3. मण्डन मिश्र ने आचार्य कुमारिल भट्ट की 'अन्यथा ख्याति' का अपने ग्रन्थों ('ब्रह्मासिद्धि' पृष्ठ-136-150, 'विभ्रमविवेक' 46, 57,62 कारिक) सादर वर्णन किया है, परन्तु सुरेश्वर ने इसका प्रचुर खण्डन अपने वृहदारण्यक भाष्यवार्तिक (भाग-2, 285-288 कारिक) में किया हैं।

4. सुरेश्वर ने अपने 'वृहदारण्यक भाष्यवार्तिक' में मण्डन के मत का 'पण्डितम्मन्य' शब्द से खण्डन किया है–

'अन्ये तु पण्डिम्मन्याः संप्रदायानुसारतः।

विज्ञायेति वचः श्रौतमिंद व्याचक्षतेऽन्यथा।।' 796 (वृहदारण्यक)

'पण्डितम्मन्य' शब्द का यहाँ अभिप्रेत अर्थ है 'मूर्ख'। केवल विरोधी के लिए शब्द से मण्डन का खण्डन किया है, तो दोनों में अभेद की कल्पना कैसे की जा सकती हूँ?

5. शङ्कर अविद्या को परमेश्वराश्रित(ईश्वर में रहनेवाली) मानते है। उनके मन से उसी के द्वारा ईश्वर जगत की रचना करते है–

.....

* वाचस्पति मिश्र ने भी 'भामती' टीका के मंगल श्लोक– 'अनिर्वाच्याऽविद्याद्वितय सचिवस्य प्रभवतः...' में दो प्रकार की अविद्या को स्वीकार किया है।

'अविद्यात्मिका हि बीच शक्ति...परमेश्वराश्रया।...'

(ब्रह्मसूत्र शांकर भा- 1/4/3)

परन्तु मण्डन अविद्या को जीवाश्रित मानते हैं। वे लिखते हैं–

'यत्त् कस्याविद्येति, जीवानामिति ब्रू भः।' (ब्रह्मासिद्धि, पृष्ठ-10)

'नाविद्या ब्रह्मणः स्वभावः।' (ब्रह्मासिद्धि, पुत्र-9)

प्रसिद्ध दार्शनिक वाचस्पति मिश्र भी उपनी भामती टीका में अविद्या को जीवाश्रित ही मानते हैं (ब्रह्मसूत्र 1/4/3 की भामती)।

इस प्रकार प्रदर्शित प्रमाणों से मण्डन एवं सुरेश्वर की एकता स्पष्टतया खण्डित हो जाने से शङ्कर एवं मण्डन में शास्त्रार्थ की कल्पना निरस्त हो जाती है; क्योंकि (माधवाचार्यकृत) शङ्कर दिग्विजय के अनुसार शङ्कराचार्य के साथ शास्त्रार्थ मे परजित होकर मण्डन मिश्र ही संन्यास-ग्रहण के बाद सुरेश्वराचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। अतएव मण्डन एवं सुरेश्वर में एकता के खण्डित हो जाने से शङ्कर तथा मण्डन में शास्त्रार्थ-कल्पना भी,

युक्ति से खण्डित हो जाती हैं।

6. 'सुरेश्वराचार्य का गृहाश्रम-नाम 'विश्वरूप' था तथा विश्वरूप मण्डन से भिन्न है'— इस तथ्य का प्रतिपादन म.म. योगेन्द्र नाथ तर्कतीर्थ ने अपने 'उद्‌बोधन' नाम की पत्रिका (बगला भाषा में लिखित) मे 'अद्वैतवादेर व्याप्ति' नाम के निबन्ध में किया है*।

शृंगेरी मठ के पुस्तकालय से प्राप्त गुरुवंश काव्य (2/59) में भी स्पष्ट लिखा है कि विश्वरूप का ही नाम(संन्यास के बाद) सुरेश्वर हुआ*।

'पुरुषार्थ प्रबोध' ग्रन्थ में ब्रह्मानन्द भारती महोदय भी इस तथ्य को पुष्ट करते है*।

इस प्रकार सुरेश्वराचार्य पूर्वाश्रम का नाम 'विश्वरूप' सिद्ध होता है, मण्डन नहीं। अतएव—

'सुरेश्वराचार्य पूर्वाश्रम में मण्डन मिश्र थे, शङ्कराचार्य से शास्त्रार्थ में पराजित होकर उन्होंने संन्यास की दीक्षा ली।'

.....

* 'मिश्रवाणी' (मैथिली पत्रिका, भाग-2, पृष्ट-23

* माधवाचार्यकृ 'शङ्कर दिग्विजय' (बलदेव उपाध्यायकृत हिन्दी टीका सहित) का परिशिष्ट, पृष्ठ-587

'श्री मज्जगद्‌गुरु-शङ्कर-मठ विमर्श' नाम से प्रसिद्ध हुए)— दोनों पृथक-पृथक व्यक्ति थे।'

'सुरेश्वराचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए)— दोनों पृथक-पृथक व्यक्ति थे।'

(देखें, 'मीमांसाक मण्डन मिश्रक मैथिलत्व'- निबन्ध-भारती-मण्डन-स्मृति समारोह, महिषी, पत्रिका, मैथिली भाग,(25-3-1970 ई), पृष्ठ-14)

'मित्रवाणी (मैथिली पत्रिका), भाग-2, पृष्ठ-23

(आ) युक्ति विरोध

(1) यदि मण्डन एवं शङ्कर में शास्त्रार्थ हुआ और उसमें पराजित होकर मण्डन ने संन्यास-ग्रहण कर लिया— यह मानें, तो मिथिला में भी उसी शास्त्रार्थ-दिन से शङ्कर का ही मत मान्य होता, न कि पराजित मण्डन मिश्र का; तब इनके(मण्डन के) समीप परवर्ती दिगन्तविख्यात विद्वान् दार्शनिक

वाचस्पति ने शांकरभाष्य की ही व्याख्या भामती में, शङ्कर से मतभेद होने पर मण्डन मत का समर्थन कैसे किया? यह समर्थन असंगत हो जाएगा। यथा–

'यत्तु कस्याविद्योति, जीवनामिति ब्रूमः।... उक्तमेतद् जीवानामाविद्या–
कलुषितत्त्वम् न ब्रह्मणः, तद्धि सदा विशुद्धनिस्यप्रकाशम्।'
(ब्रह्मासिद्धि, ब्रह्मकांड, पृष्ठ-10,12)

'नाविद्या ब्रह्मणः स्वभावः' (ब्रह्मासिद्धि, ब्रह्मकांड, पृष्ठ-9)*

आदरणीय वाचस्पति मिश्र उपर्युक्त शांकरभाष्य की व्याख्या भामती में मण्डन-मत का ही समर्थन करते हैं–

तस्माद् जीवाधिकरणाप्यविद्या निमित्ततया विषयतया चेश्वरमाश्रयत–
इतीश्वराश्रयेत्युच्यते, न त्वाधारत...या, विद्यास्वभावे ब्रह्माणि तकनुपपत्तेः।'
(ब्रह्मसूत्र 1/4/3 शङ्कर भाष्य की भामती)*

यहाँ भामतीकार प्रसिद्ध दार्शनिक वाचस्पति मिर मण्डन मिश्र के मत का समर्थन करते हुए कैसी व्याख्यान चातुरी से मण्डन के मतानुसार शङ्कर मत को व्याख्या प्रस्तुत करते है– मण्डन के विचार में शङ्कर के मत का इस

.....

* 'अद्वैततत्त्वसुधा' ग्रन्थ (172) में उसके लेखक श्री अनन्तकृष्ण शासत्री ने भी अविद्या को जीवाश्रित ही बतलाया है। वे लिखते हैं–
'अविद्योर्य जीवाश्रया, न चान्योन्याश्रयः, अनादित्वादविद्याजीवतत्सम्बन्धानाम्।'

* वाचस्पति मिश्र ने यहाँ अविद्या और जीवात्म विभाग में उपस्थित अन्योन्याश्रय श्रेत्र का परिहार, अविद्या, जीव और उसके सम्बन्ध की, बीज एव अंकुर(वृक्ष) की भाँति अनादि मानकर इस प्रकार किया है–

'न च अविद्यायां सत्यां जीवात्मविभागः, सति च जीवात्मविभागे तदाश्रयाऽ द्येवित्य-न्योन्याश्रयमिति– वाच्यम्; अनादित्वेन जीवाविद्ययोर्वीजाङ्कुरवदनवक्लृप्रेरयोगात्।'
(भामती, वेदान्तकलपतरू आदिटीका सहित, पृष्ठ-235)।

प्रकार विलयन अलौकिक प्रतिभाशाली वाचस्पति मिश्र जैसे विशिष्ठ दार्शनिक से ही संभव है, अन्य से नहीं।

इस से सिद्ध है कि वाचस्पति मिश्र के समय(नवीं शाताब्दी) तक

मिथिला मे मण्डन मिश्र का ही मत मान्य एवं प्रचलित था। शङ्कराचार्य तथा उनके पट्ट शिष्य सुरेश्वर, पद्मपाद आदि आचार्यो के मतों एवं ग्रन्थों का प्रभाव मिथिला में बिलकुल नहीं था। अतएब पूज्य वाचस्पति मिश्र ने अपनी भ्रामती टीका में शङ्कर की पंक्ति का मण्डन-मत के अनुकूल व्याख्यान किया। अतः वाचस्पति के पूर्व ही (सप्तम शताब्दी में) मण्डन की शङ्करकृत तथा विवेकी विद्वान स्वयमेव निष्पक्ष रूप से विचार करें।

(2) जब प्रयाग में शङ्कराचार्य ने कुमारिल भट्ट से अपने भाष्य पर वार्तिक लिख देने की प्रार्थना स्पष्ट रूप से की तथा स्वयं असमर्थ होने से भट्ट महोदय ने अपने प्रिय शिष्य एवं विख्यात-वैदुष्य मण्डन मिश्र के पास उसी कार्य (भाष्य पर वार्तिक लिखवाने के लिए उनको(शङ्कर को) भेजा , तब उन दोनों में शास्त्रार्थ की कल्पना कैसे की जा सकती है? शङ्कर गये थे मण्डन से अपने भाष्य पर वार्तिक लिखवाने और यहाँ आकर करने लगे उनके शास्त्रार्थ– यह कैसा उन्मत-प्रलाप की तरह असंबद्ध वर्णन है, यह स्वयं सहृदय सुधीजन विचार करे। अतएब माधवाचार्यकृत शङ्कर-मण्डन-शास्त्रार्थ-कल्पना-प्रकरण-विरूद्ध होने के कारण अत्यन्त असंगत है।

(3) मण्डन मिश्र के पितृश्राद्ध के समय पुराणकर्त्ता व्यास एवं महर्षि जैमिनी की उपस्थिति शङ्कर दिग्विजय (8/11-13,33) में वर्णित है। यह इस कलिकाल में कैसे सम्भव है?

(4) जब 'धूमायमानेन तुषानलेन सदम्यमानेऽपिवपुष्यशेषे (शङ्कर दि. 7/78) के अनुसार कुमारिल भट्ट का पूरा शरीर जल रहा था, तो कैसे उन्होंने शङ्कर का भाष्य देखा (7'82) तथा अपना (कथानक के साथ) परिचय एवं मण्डन मिश्र का परिचय विस्तार से शङ्कर को दिया(7/83-118)?

(5) आचार्य माधवकृत 'शङ्कर दिग्विजय' में मण्डन एवं शङ्कर के वार्तालाप में जैसे मुण्डी, सुशपायी, स्त्रैण, मूर्ख, मूर्खतम– इत्यादि अशिष्ट भाषा का व्यवहार किया गया है* वह शिष्टाग्रणी दोनों आचार्यो के लिए सर्वथा अशोभनीय है। इन अशिष्ट शब्दों का प्रयोग माधवाचार्य की साम्प्रदायिक अन्धता का परिचायक है।

इन तर्को एवं युक्तियों से माधवीय शङ्कर दिग्विजय की प्रामाणिकाता तथा विश्वसनीयता सर्वथा नष्ट हो जाती है।

.....

* शङ्कर कुमारिल से अपने भाष्य पर वार्तिक लिख देने की प्रार्थना करते हैं– 'भाष्येऽपि मे रचय वार्तिकमङ्ग! भव्यम्।' (शङ्कर दिग्विजय-7/107)
* शङ्कर दिग्विजय– 7/118
* शङ्कर दिग्विजय– 8/16-31

(इ) **इतिहास विरोध**

प्रसिद्ध इतिहासकार मण्डन एवं सुरेश्वर में एकता स्वीकार नहीं करते, प्रत्युत पी.बी. काणे, डॉ गंगानाथ झा, डॉ. एस. दासगुप्त, डॉ. उपेन्द्र ठाकुर आदि प्रसिद्ध विद्वानों ने मण्डन एवं सुरेश्वर के समय में बहुत अन्तराल माना है । डॉ चन्द्रधर शर्मा ने अपने 'भारतीय दर्शन' ग्रन्थ में मण्डन एवं सुरेश्वर की भिन्नता में अनेक तर्क उपस्थित किया। ।

'शङ्कर दिग्वजय' अनेक अतिरिजित तथा(परवर्ती प्रसिद्ध आचार्य एवं महाकवि हर्ष, उदयन, अभिनव गुप्त आदि प्रतिद्वाचार्या की शङ्कर के द्वारा पराजय इत्यादि अनैतिहासिक घटनाओं के उल्लेख रहने के कारण इस ग्रन्थ को डॉ. कीथ अविश्वसनीय एवं अप्रामाणिक मानते है*। श्री पुरुषोत्तम नागेश ओक महोदय भी अपने 'भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें' ग्रन्थ(219-220) में स्पष्ट लिखते है कि 'माधवाचार्य के 'शङ्कर दिग्विजय' को अत्यंत अविश्वसनीय ग्रन्थ स झना चाहिए।'

(ई) **परम्परा विरोध**

मिथिला की परम्परा के अनुसार भी विचार करने पर मण्डन मिश्र का संन्यास ग्रहण सिद्ध नहीं होता। मिथिला में 'धर्मस्य निर्णयोज्ञेयो मिथिला 'व्यवहारतः (वृ.या)' एवम् 'धर्मस्य तत्त्वं विज्ञेयं मिथिलाव्यवहारतः' इस वचन के अनुसार समस्त कार्य-कलाप समृति के अनुकूल ही होते हैं। स्मृति मे संन्यास ग्रहण कलियुग में निषिद्ध माना गया हैं...

.....

* पी बी. काणे– 'धर्मशास्त्र का इतिहासँ, पृष्ठ-263
डॉ. गंगानाथ झा– 'मीमांसा दर्शन, पृष्ट-183
डॉ. एस. दासगुप्त– 'हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलौसफी, भाग-2, पृष्ठ-85

* डॉ. चन्द्रधर शर्मा– 'भारतीय दर्शन-आलोचन और अनुशलीन, पृष्ठ-283

* उदयनाचार्य(दशम शतक का उत्तरार्ध) की पराजय शङ्कर दिग्विजय 15/72,157 में, अभिनव गुप्त (950-1000) की पराजय शङ्कर दिग्विजय 15/158 में उल्लिखित है।

* ए.बी कीथ के संस्कृत साहित्य का इतिहास (अनुवादक– डॉ, मंगलदेव शास्त्री) नाम के ग्रन्थ में, आनन्द गिरि के 'शङ्कर विजय' को तथा माधव के'शङ्कर दिग्विजय' को सारहीन एवं निकम्मा(अविश्वसनीय बतलाया गया है।

इसी प्रकार श्री नारायण दत्त ने भी आदि शङ्कराचार्य एक सांस्कृति घटना' नाम के अपेन निबन्ध में ऐसा ही लिखा है। वे लिखते हैं– 'आदि शङ्कराचार्य के जीवन से सम्बन्धित साम्रगी देनेवाले संस्कृत काव्य (जो प्रायः 'शङ्कर विजय' था 'शङ्कर दिग्विजय' कहलाते है) चमत्करों और मिथकों के पुलिन्दे हैं।'

('धर्मयुग' अप्रैल 1996, अंक 4, पृष्ठ-25)

'अश्वालम्भं गवालर्म्भ संन्यासं पलपैतृक्म्।
देवराच्च सुतोत्पति कलौपऽधा विवर्जयेत्।।(देवल स्मृति)

'अग्न्याधेयं गवालम्भं संन्यास पलपैतृकम्।
देवरेण सुतोत्पत्ति कली पञ्च विवर्जयेत्।।'(व्यास स्मृति)

'पतिधर्म संग्रह के मतानुसार भी कलियुग में संन्यास वर्जित है। अतएव महर्षि याज्ञ वल्क्य और मिथिलेश अनक से लेकर वर्त्तमान समय तक एक भी मैथिली विद्वान संन्यासी नहीं हुए, सीाी के सभी गृहस्थ ही थे। अतः परम्परा विरूद्ध होने के कारण मिथिला के प्राचीनतम दिगन्त-विख्यात विद्वान मण्डन मिश्र की संन्यास-ग्रहण-कल्पना कपोल कल्पना मात्र (सर्वथा कल्पित) है।

ऊपर के प्रमाणों एवं युक्ति के आधार पर यह सिद्ध होता है कि 'ब्रह्मसिद्धि' ग्रन्थकार मण्डन मिश्र, सुरेश्वचार्य से भिन्न थे। अद्वैत वेदान्ती होत हुए भी मण्डन मिश्र का अद्वैत सिद्धान्त शङ्कर एवं सुरेश्वर के अद्वैत प्रस्थान से कुछ भिन्न है। इस तथ्य का उल्लेख सर्वज्ञात्ममुनि तथा विश्ववेद

आदि शङ्कर संप्रदाय के आचार्या ने अपने-अपने की भूमिका (अंग्रेजी भाषा में लिखित) में पृष्ठ-50 तथा 55 में दिया है। इसी भूमिका में मण्डन एवं सुरेश्वर के पार्यक्य का भी निरूपण विस्तार से किया गया है।

आचार्य बलदेव उपाध्याय ने भी अपने 'श्री शङ्कराचार्य' ग्रन्थ में इस तथ्य का उल्लेख किया है। वे लिखते हैं– 'ब्रह्मसिद्धि' (मण्डन मिश्र का प्रसिद्ध ग्रन्थ) के सम्पादक म.म कुप्पुस्वामी शास्त्री ने इस प्रश्न की विशद समीक्षा कर निम्नलिखित निष्कर्ष दिया है।

(क) 'ब्रह्मासिद्धि' के रचयिता मण्डन न तो शङ्कर के शिष्य थे और न उन्होंने कभी संन्यास-ग्रहण किया था। बह सुरेश्वर से भिन्न थें उनका अद्वैत सिद्धात शङ्कर-प्रस्थान से भिन्न था।

(ख) सुरेश्वर का गृहस्थाश्रम-नाम विश्वरूप था। वे उस समय कुमारिल भट्ट के शिष्य थे। शङ्कर के सम्पर्क में आकर वे उनके शिष्य बने और संन्यासी हुए। उन्होंने अपने 'वार्तिक' और 'नहिष्कर्म्यसिद्धि' ग्रन्थ में, मण्डन मिश्र के द्वारा 'ब्रह्मसिद्धि' ग्रन्थ में निर्दिष्ट तथा व्याख्यात अनेक अद्वैत सिद्धान्तों का खण्डन किया है। अब 'ब्रह्मासिद्ध' ग्रन्थ में निर्दिष्ट तथा व्याख्यात अनेक अद्वैत सिद्धान्तों का खण्डन किया है। अब 'ब्रह्मसिद्धि' (ग्रन्थ) के मद्रास से प्रकाशित हो जाने पर यह स्पष्ट हो गया है कि सुरेश्वर और मण्डन भिन्न-भिन्न व्यक्ति है।*

---

* पी. बी. काणे– 'धर्मशास्त्र का इतिहासँ, पृष्ठ-498, 501

* बलदेव उपाध्यक्ष–'श्री शङ्कराचार्य', पृष्ठ- 178-179

रामतीर्थ के 'मानसोल्लासँ ग्रन्थ में भी स्पष्ट लिखा है कि शङ्कर के शिष्य सुरेश्वर का दूसरा नाम विश्वरूप है ।

इस तरह ग्रन्थ विरोध, युक्ति विरोध, इतिहास विरोध तथा परम्परा विरोध के कारण सर्वथा सिद्ध हो जाता है कि पूज्यपाद मण्डन मिश्र का शङ्कराचार्य के साथ न तो शास्त्रार्थ हुआ और न मण्डन मिश्र ने पराजित होकर संन्यास-ग्रहण ही किया। शङ्कर के शिष्य बनकर सन्यास-ग्रहण करने वाले विश्वरूप आचार्य थे, न कि मण्डन मिश्र।

अतः माधवाचार्य एवं सत्यानन्द सरस्वती के शङ्कर दिग्विजय ग्रन्थ में वर्णित तथा अन्यत्र भी वर्णित शङ्कराचार्य के साथ मण्डन मिश्र का

शास्त्रार्थ तथा उसमे पराजित होकर उनका (मण्डन का) संन्यास ग्रहण सर्वथा अप्रामाणिक, असंगत एक कल्ति है।

वस्तुतः शङ्कराचार्य के जीवन चरित पर विरचित एवं उपलब्ध ग्रन्थों में किसी को भी प्रामाणिक नहीं माना जा सकता; क्योंकि सीभी ग्रन्थों में परम्परा से सुनी-सुनाई बाते बतलायी गई हैं।

1. इस तथ्य का स्पष्ट उल्लेख आचार्य बलदेव उपाध्याय ने माधवकृत शङ्कर दिग्विजय की हिन्दी भूमिका(पृष्ठ 7-8) में इस प्रकार किया है—

सुनते हैं कि (शङ्कर के साक्षात् शिष्य) परद्पाद ने उनके दिग्विजय का वर्णन विस्तार के साथ अपने विजय डिण्डिम' ग्रन्थ में किया था। परन्तु दैव विषाक से वह ग्रन्थ नष्ट हो गया। आजकल आचार्य के उपलब्ध जीवन चरित (जिन्हें 'शङ्कर विजय' या 'शङ्कर दिग्विजय' नाम से पुकारते हैं) में कोई भी उनका समसामयिक नहीं है। सब ग्रन्थ पीछे रचनाएँ हैं, जिनमें सुनी सुनाई बातों का उल्लेख किया गया हैं। भिन्न-भिन्न पीठों की अपनी महत्ता प्रदर्शित करने की लालसा अनेक दिग्विजयों की रचना के लिए उत्तरदायी हैं।

(माधव-शङ्कर दिग्विजय की हिन्दी भूमिका, पृष्ठ 7-3)

2. प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. सुरेन्द्रनाथ दासगुप्त ने भी अपने 'भारतीय दर्शन का इतिहासँ, भाग-2 में इसी प्रकार स्पष्ट रूप में लिखा है— 'शङ्कर दिग्विजय एक पौराणिक जीवन चरित है और जब तक किसी विश्वसनीय साक्ष्य से उसके कथन पुष्ट न हो जाएँ, तब तक उस पर विश्वास करना भयावह है।

3. डॉ. ए.बी. कीथ के 'संस्कृत साहित्य का इतिहासँ (अनुवादक- डॉ. मंगलदेव शास्त्री) पृष्ठ-601 में भी आनन्द गिरि के नाम से प्रसिद्ध 'शङ्कर विजय' को

.....

* पी.बी. काणे— 'धर्मशास्त्र का इतिहासँ, पृष्ठ-68

*माधवाचार्यकृत शङ्कर दिग्विजय(बलदेव उपाध्याय की हिन्दी टीका सहित) पृष्ठ-587

एवं माधवाचार्यकृत 'शङ्कर दिग्विजय' को सारहीन एवं निकम्मा(अविश्वसनीय) बतलाया गया है।

4. 'भारतीय इतिहास की भयंकर भूले' ग्रन्थ(पृष्ठ 219-220) में उसके लेखक श्री पुरुषोत्तमदास नागेश 'ओक' महोदय भी इसी प्रकार स्पष्ट लिखते हैं कि– माधवाचार्य के 'शङ्कर-दिग्वजय' को अत्यत अविश्वसनीय ग्रन्थ समझना चाहिए।

5. इसी प्रकार शङ्कर-साहित्य के विशेषज्ञ श्री नारायण दत्त महाश्य ने भी शङ्कराचार्य के जीवन चरिन ग्रन्थों की अप्रामाणिकता बतलाते हुए लिखा है– आदि शङ्कराचार्य के जीवन से सम्बन्धित सामग्र देनेवाले संस्कृत काव्य(जो प्रायः 'शङ्कर विजय' या 'शङ्कर दिग्विजय' कहलाते हैं) चमत्करों और मिथकों के पुलिन्दे हैं।

('धर्मयुग', अप्रैल 1996, अंक 4, पृष्ठ-25)

6. मिथिला-संस्कृति एवं साहित्य के विशेषज्ञ श्री गोपालकृष्ण मल्लिक का भी ऐसा ही मत है। वे 'मण्डन मिश्र और सुरेश्वराचार्य एक नही' नाम के निबन्ध में लिखते हैं–

(क) 'किंवदन्तियों के आधार पर रचे गए शङ्कराचार्य के दिग्विजय-प्रसंग में मण्डन मिश्र के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया है, उसे प्रामणिक या सत्य मानना ही सबसे बड़ी अप्रामाणिकता एवं असत्य का द्योतक होगा; क्योंकि उसमें मण्डन मिश्र की अपने मूल रूप तथा मूल भूमि से ही निष्कसित करने का अनर्थकारी प्रयास किया गया है।'(पृष्ठ-22)

(ख) माधवाचार्य विजयनगर- साम्राज्य के संस्थापक तथा मंत्री और वेदों के भाष्यकार सायणाचार्य के भाई थे। जब विजयनगर-साम्राज्य फूट के दलदल में फँस कर मुसलमानों के अधीन हो गया, तब माधवचार्य के लिए कोई चारा नहीं रहा और संन्यास ग्रहण कर वे विद्यारण्य स्वामी हुए। माधवाचार्य का जीवन काल दक्षिण भरत में हिन्दू-संस्कृति और साहित्य का पुनः प्रबोध काल था। विद्यारण्य स्वामी के रूप मे वे श्रंगेरी मठ के आचार्य बने। और फिर उन्होंने जी भी रचना की, वह किंवदन्तियों के आधार पर की तथा अपने पूर्व के ग्रन्थों की पूरी उपेक्षा की।... फिर उसे प्रामाणिक कैसे माना जा सकता है? अतः निश्चय ही गुरु परम्परा तथा मठाम्नायों से चल आती किंवदन्तियों पर रचित जीवन चरित या उक्त अप्रामाणिक घटनाओं पर रचित किन्हीं की जीवनी को, चाहे वह 'शङ्कर दिग्विजय' ही क्यों न हो, प्रामाणिक नहीं माना जा सकता। (पृष्ठ-24)

7. संस्कृत सुकवि-समीक्षा ग्रंथ में आचार्य बलदेव उपाध्यक्ष लिखते हैं– 'माधवाचार्य के अनुसार जो वर्णन ('शङ्कर दिग्विजय' में) किया गया है, उसके लिए यह कहना है कि काम कोटि-पीठ के अध्यक्ष 'धीर शङ्कर' नामक आचार्य हुए थे।

.....

* भारती-मण्डन-स्मृति-महासमारोह महिषी, स्मारिक, 25 मार्च 1970

उन्होंने आदिशङ्कराचार्य के समान समस्त भारतवर्ष का विजय किया, कश्मीर में सर्वज्ञपीठ पर अधिरोहण किया और वे कैलाश में ब्रह्मपदलीन हो गये। उन्हों के जीवन की घटनाएँ गलती से आदिशङ्कराचार्य के साथ सम्बन्द्ध कर दी गई है। शङ्कर कांची में अपने स्थूल शरीर को छोड़कर सूक्ष्म शरीर में लीन हो गये थे।

('संस्कृत सुकवि-समीक्षा', पृष्ठ-453)

8. उक्त 'धर्मयुग' (अप्रैल 1996, अंक-4) के ही पृष्ठ-26 में उल्लिखित हैं कि 'शङ्कर-मत के अनुयायी और तलस्पर्शी विद्वान स्वामी सच्चिदानन्द भारती मे अपने महत्त्वपूर्व कन्नड़ पुस्तक 'श्री शङ्कर-भगवत्पाद-चृतान्तसार-सर्वस्व' में यह सवाल उठाया है कि क्या कोई संस्कारवती विदुषी गृहिणी खुले शास्त्रार्थ में किसी बाल-ब्रह्मचारी संन्यासी से कामशास्त्र-सम्बन्धी प्रश्न पूछेगी? मेरी दृष्टि में तो 'शङ्कर दिग्विजयों' में वर्णित परकाय प्रवेश का मिथक शङ्कराचार्य के मूल व्यक्तित्व को ही खण्डित कर देता है। क्या उनके जैसा जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी महज शास्त्रार्थ जीतने के लिए अपना जीवन- व्रत तोड़कर कामशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने को तैयार हो जायेगा? मुझे लगता है, अपने परम गुरु की योग शक्ति के ढोल पीटने के उत्साह में मिथककार इस बुनियादी बात को भूल गया है।'(पृष्ठ-27)

9. म.म. दाघीच पण्डित शिवदत्त शर्मा ने 'नहिषघचरित महाकाव्य' (नारायण-रचित 'नहिषघीय प्रकाश' व्याख्या सहि 1942 ई, बम्बई से प्रकाशित)में शङ्कराचार्य की प्रशंसा के लिए स्वकल्पित कथानक का वर्णन किया है।'

10. इसी तरह डॉ. मण्डन मिश्र शास्त्री (जयपुर) ने भी अपने ग्रंथ 'मीमांसा-दर्शन' (पृष्ठ-91) में इसी प्रकार लिखा हैं– 'शङ्कर दिग्विजय में अनेक घटनाएँ अतिरंजित हैं एवं एसकी प्रामाणिकता निर्विवाद नहीं है।'

उपर्युक्त विवेचन एवं अनेक प्रमाणों के अनुशीलन करने से, 'शङ्कर दिग्विजय' ग्रन्थ में माधवाचार्य द्वारा वर्णित शङ्कर एवं मण्डन में शास्त्रार्थ की तथा उसमें पराजित होकर मण्डन के संन्यास-ग्रहण की कल्पना सर्वथा अप्रामाणिक, कल्पित एवं असंगत सिद्ध होती है।

वाचस्पति पर भावाद्वैत का प्रभाव

—पं. सहदेव झा

('भामती' टीका एकटा एहेन प्राचीन दर्शन-ग्रन्थ थिक, जकर चर्चा बिना मण्डन-शङ्कर-प्रकरण अपूर्ण रहि जाइछ। वाचस्पति, मण्डन आ शङ्करक बीचक एहेन कड़ी आ सन्धि-स्थल छथि, जिनकर उपस्थापन केने बिना मण्डन-वाचस्पति-शङ्करक पारम्परिक प्रभाव-प्रतिशतक निराकरण नहि कएल जा सकैए। तीनू मे के ककरा कतेक प्रभावित केलनि झा वाचस्पति अपन व्याख्या में मण्डन कतेक नजदीक छथि आ शङ्करक कतेक नजदीक वा दूर-से स्वभावतः बहसक विषय रहल अछि। तहिना वाचस्पति पर अद्वैत अथवा भावाद्वैतक की-कोना प्रभाव पड़ल अछि, तकर विश्लेषण एत' केलनि अछि अन्धरा-ठाढ़ीक पहुँचल विद्वान पं. सहदेव झा, जिनका लग 'ब्रह्मासिद्धि' नामक मण्डन-महाग्रन्थ आधाररूपेण उपलब्ध छनि। पं. झा अपन हालहि लोकार्पित पोथी 'मण्डन मिश्र और उनका अद्वैत वेदान्त'(सं. डा. तारानन्द वियोगी) मे अपन वृहत् ज्ञान-गंगा आ विश्लेषण-सामर्थ्यक परिचय मैथिल आ भारतीय समाजक सम्मुख द' चुकल छथि। एहि सँ पूर्व, पोथीमे अपने श्री किशोरनाथ झाक निबन्ध 'वाचस्पति पर मण्डन प्रभाव' पढ़ि चुकल छी।— सम्पादक)

मैंने छोटी सी पुस्तक में सिद्ध किया है कि शङ्कर के अद्वैत-वेदान्त से मण्डन का अद्वैत-वेदान्त, अलग सम्प्रदाय का पृथक् अस्तित्त्व रखता है और शङ्कर के सम्प्रदाय के अद्वैत वेदान्त के अनेक विचारों से मण्डन के सम्प्रदाय का विचार भिन्न है। मण्डन मिश्र के विचारों का मूल उद्गम मैथिली-महर्षि-गौतम के छान्दग्योपनिषद्, मैथिल-महषि-याज्ञवल्क्य के ईशावास्योपनिषद हैं। शङ्कर ने अपने सम्प्रदाय के अनुसार ब्रह्म सद्रूप भी नहीं हैं और आनन्दोब्रह्मेति विजानयात् प्रज्ञान ब्रह्मेति इत्यादि श्रुति वचनों के अनुसार ब्रह्म के धर्म, ज्ञान एवं आनन्द को माना है। शङ्कर एवं मण्डन दोनों के अद्वैत वेदान्त के अनुसार धर्म और धर्मी में पार्यवय नहीं है, जैसे अग्नि एवं उष्णता में कुछ पार्यक्य जैसे प्रतीत होते हुए भी वास्तविक दृष्टि से दोनों में एकता है। उसी तरह सत्-चित्-आनन्द में कुछ पार्यक्य जैसे होते हुए भी

तीनों में वास्पविक-एकता है। पृथक प्रतीत होनेबाले दो वस्तुओं को यदि अलग-अलग नहीं किया जा सके तो उन दोनों में वास्तविक एकता ही रहती है। जैसे अग्नि एवं उष्णता में कुछ भेद जैसा प्रतीत होता है। जैसे आग की उष्णता ऐसा प्रयोग तो होता है, परन्तु 'उष्णता की आग' ऐसे वाक्य का प्रयोग नहीं होता है। अतः आग और उष्णता में कुछ भेद जैसा। प्रतीत होने पर भी, दोनों में वास्तविक एकता ही हैं। क्योंकि आग से उष्णाता को हम अलग नहीं कर सकते हैं। सूत एवं वस्त्रों की अलग नहीं कर सकते हैं। मण्डन के मत में सत् चित् एवं आनन्द ये तीनों अलग-अलग प्रतीत होने पर भी तीनों में वास्तविक एकता ही हे। क्योंकि सूत-ज्ञान एवं आनन्द को हम अलग-अलग नहीं कर सकते हैं। इसलिए मण्डन मिश्र ने सुस्पष्ट रूप से ब्रह्म को 'सच्चिदानन्द स्वरूप' माना है। परन्तु शङ्कर एवं उनके अनुगामी प्रायः सभी विद्वानों ने अनेक स्थानों में ब्रह्म को 'सच्चिदानन्द स्वरूप' मानते हुए भी, और ब्रह्म के धर्म के रूप में ज्ञान एवं आनन्द को मानते हुए भी ब्रह्म को निधर्मक माना है। समझ में नहीं आता है कि इस तरह की परस्पर विरूद्ध बाते शङ्कर सम्प्रदाय में कैसे वर्णित हुई हैं। इसलिए शङ्कर सम्प्रदाय के विरोधी किसी विद्वान ने लिखा है कि 'निर्विशेष मवेद्यञ्च कर्य ब्रह्म निर्विशेष अर्थात् विशेषता से रहित, दूसरे शब्दों में विशेषणों से वर्जित तथा ब्रह्म को अवेद्य अर्थात् अज्ञेय मानते हैं और दूसरी और ब्रह्म को सुखस्वरूप भी मानते हैं। ये दोनों परम्परा विरूद्ध बातें कैसे सम्भव हो सकती हैं।

एक और तो मधुसूदन सरस्वती ने लिखा है कि 'निर्धर्मकतया अवेद्यतया च ब्रह्म आनन्दादि पद लक्ष्य न वाच्यम्' (अद्वैतसिद्धि द्वितीय परिच्छेद, पृष्ठ- 784) अर्थात ब्रह्म तो निधर्मक अर्थात धर्मशून्य एवं अवेद्या अर्थात अज्ञेय है अतः ब्रह्म को उपनिष्द में जहाँ सच्चिदानन्द कहा गया है, उन पदों के वाच्च ब्रह्म नहीं है। अपितु लक्ष्य हैं। अर्थात् ब्रह्म को जहाँ उपनिषदों में आनन्द कहा गया है वहाँ आनन्द पद का मुख्य अर्थ नहीं है, अपितु आनन्द का लक्ष्यार्थ यह है कि ब्रह्म में दुख नहीं है। जहाँ उपनिषद में ब्रह्म को ज्ञानस्वरूप कहा गया है वहाँ उपनिषदों का तात्पर्य यह नहीं है कि ब्रह्म का धर्म ज्ञान अथवा आनन्द है परन्तु उसका तात्पर्य यह है कि ब्रह्म में अज्ञानता एवं दुख आदि नहीं है। दूसरी ओर पदमूपादाचार्य ने

लिखा है कि 'आनन्दोविषयानुभवो नित्यत्वमिति सन्ति धर्माः अपृथक्त्वेऽपि चैतन्यात् पृथगिवावभाषन्ते।' अर्थात ब्रह्म का धर्म आन्द विषयानुभव अर्थात सभी वस्तुओं का ज्ञान और नित्यत्व धर्म हैं चैतन्यस्वरूप ब्रह्म से वे धर्म पृथक नहीं है। परन्तु पृथक जैसे प्रतीत होते हैं।

शङ्कर के दूसरे शिष्य सुरेश्वराचार्य ने वृहदारन्यकोपनिषद् भाष्य के वार्तिक में लिखा हैं– यत्सुखं साधनाधीनं दुःखमेव तदुच्यते।

अनन्य साधन तस्मात् स्वात्मस्थं परम सुखन्।।(1851 श्लोक)

अर्थात मन आदि साधनों से निरपेक्ष अपनी ब्रह्मस्वरूप आत्मा में रहने वाले नैसंगिक सुख ही परम सुख है। विख्यात पञ्चदशी ग्रन्थ के रचयिता विद्यारण्य जो पीछे शङ्कराचार्य की गद्दी पर आसीन हुये, उन्होंने 'अनुभूति प्रकाश' नामके अपने ग्रन्थ में लिखा है–

निरूपाधि परानन्द आत्मेति श्रुति-सम्मतः।

आनन्दः सर्वभूतानाम् तस्मिन्नर्भवन्ति हि।। (श्लोक-52)

अर्थात् निरूपाधि अर्थात निरपेक्ष परमानन्दस्वरूप आत्मा (ब्रह्म) हैं। यह श्रुति सम्मत है। अर्थात उपनिषदों से प्रतिपादित है। सभी प्राणियों के सांसारिक आनन्द उस ब्रह्मानन्द के अन्तर्गत ही है। अर्थात् सांसारिक सुख भी ब्रह्मानन्द का अंश है।

'परमानन्दरूपत्वमात्पनश्चेद् विवुध्यते। कुतः कामयते भोग्यम् ततो बोधादकामता'। (अनु. प्र. 45 श्लोक)

अर्थात् यदि आत्म का अर्थात् ब्रह्म की परमानन्दरूपता का ज्ञान हो जाय, तो सांसारिक भोग्य पदार्थो की कामना, जीवनमुक्त जीवों को कैसे हो सकती है। क्योंकि ब्रह्मबोध तो अनन्त आनन्दस्वरूप है– जिसे प्राप्त कर लेने पर सांसारिक क्षुद्र- आनन्दों की कामना नहीं रहेगी। जीवन्मुक्तों की अकामता स्वतः सिद्ध हो जाएगो।

आश्चर्य है कि ब्रह्म सच्चिदानन्दस्वरूप है ऐसा स्पष्ट वर्णन पद्मपाद सुरेश्वराचार्य ने किया है। फिर दूसरो और ब्रह्म को निधर्मक एवं अवेद्य कैसे मान लिया है। ज्ञान एवं आनन्द तो अवेद्य अर्थात अज्ञेय होते ही नहीं है। जब कभी ज्ञान एवं आनन्द होते हैं तो स्वतः ज्ञेय रहते ही हैं। ऐसा सम्भव ही नहीं हैं कि आपको ज्ञान या आनन्द तो होंगे और आप उसे नहीं समझेंगे। उपनिषद में तो स्पष्ट वर्णन है कि 'अत्रायम् पुरुषः

स्वयंज्योतिः' अर्थात् यह पुरुष अर्थात् ज्योतिस्वरूप हैं। अर्थात् ब्रह्म स्वयं प्रकाश हैं। वे तो अपने ही प्रकाश से अपने एवं अपने एवं अपने धर्म को समझते ही रहते हैं। मण्डन मिश्र ने ब्रह्मासिद्धि में लिखा है कि 'प्रकाशमानानन्दातिशयम् ब्रह्म'। अर्थात् प्रकाशित होते हुए अनतिशय अर्थात् सर्व-श्रेष्ठ आनन्दस्वरूप ब्रह्म हैं। मण्डन मिश्र ने सत्ता, ज्ञान एवं आनन्द प्रतिपादक उपनिषद वाक्यों का मुख्यार्थ में ही तात्पर्य माना है। अर्थात मण्डन की दृष्टि में ब्रह्म अवाच्य नहीं है। अपितु वाच्य ही हैं– तदेवं दुख निवृत्तेरन्यम् सुखम्। सचानन्ददशब्दस्य मुख्योऽर्थः। शब्द प्रमाणके च यथा शब्द प्रतिपत्तिर्युक्तय। (पृष्ठ-3 ब्र.सि)

दुख निवृत्ति से अन्य सुख है। वह वैदिक आनन्द शब्द का मुख्य अर्थ है ब्रह्म शब्द-प्रमाण से सिद्ध होते हैं। शब्द के अनुसार ज्ञान ठीक है। मण्डन मिश्र ने ब्रह्म ने ब्रह्मसिद्धि के मंगलाचरण में सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्म को प्रणाम किया हैं।

नमामस्तद्ब्रह्मापरिमित सुखज्ञनमृतम्।

अर्थात अपरिमित अनन्त सुख, ज्ञान और अमृत अर्थात् सत्स्वरूप ब्रह्म को हम प्रणाम करते हैं। वाचस्पति मिश्र ने भामती में सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्म-श्रुति, स्मृति, इतिहास एवं पुराणों से प्रतिपादित हुए हैं, ऐसा लिखा हैं। 'समस्तोपाध्यनवाच्छिन्नन्तानन्दचै तन्यैकर समुदासीनमेकमद्वितीयमात्मतर्त्वश्रुति स्मृतीतिहासपुराणेषुगीयते।'

अर्थात सांसारिक सभी विशेषणों से रहित अनन्त आनन्द एवं ज्ञान स्वरूप एक रस अर्थात् अपरिवर्तनीय स्वरूप उदासीन अर्थात् प्रयोजनरहित एक एवं द्वितीय रहित आत्मतत्त्व अर्थात् ब्रह्मतत्तव श्रुति, स्मृति, इतिहास एवं पुराणों में प्रतिपादित हुए हैं और उन्होंने लिखा है–

न चैतान्युपकमपरामर्शोसंहारैः क्रियासमभिहारेणे दृगात्मतत्त्वमभिदघति तत्पराणि सन्ति शक्यानि शकेणाप्युप चरितार्थानि कर्तुम, अभ्यासे हि भूयस्व मर्थस्य भवति; यथाहो दर्शनीयाहो दर्शनीयेति न न्यूनत्वं, प्रागेवोपचरितत्त्वमिति।

(ब्र. सूत्र 1.1.1)

यह सर्वमान्य सिद्वांत है कि किसी भी ग्रन्थ में जिस विषय से उपक्रम होता है अर्थात् प्रारंभ किया जाता है ओर परामर्श अर्थात् उस विषय को मध्य में भी कहा जाता है और उपसंहार अंत में भी कहा जाता

है एवं क्रियासमभिहार' अर्थात् बार-बार कहा जाता है। उस विषय में ग्रन्थ का तात्पर्य रहता है वाचस्पति मिश्र ने उपरिलिखित पंक्ति में कहा है कि अनन्त आनन्द एवं अनन्त ज्ञानस्वरूप ब्रह्म का वर्णन उपनिषदों में आदि, मध्य एवं अंत में बार-बार किया गया है। अतः सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्म प्रतिपादक उपनिषद के वाक्यों का उपचरितार्थ अर्थात् लक्ष्यार्थ देवराज इन्द्र भी नहीं कर सकते हैं। यहाँ सच्चिदानन्द प्रतिपादक वेदान्त वाक्यों के लक्ष्यार्थ माननेवाले शङ्कर एवं उनके अनुगामियों को वाचस्पति मिश्र ने कैसे ललकरा और फटकारा है और मण्डन मिश्र के सिद्धान्त का कैसे समर्थन किया हैं, इन और विद्वानों का ध्यान आकृष्ट होना चाहिए।

वाचस्पति मिश्र ने लिखा है 'सत्यम् चिदात्मा अनृतम् बुद्धन्द्रियदेहादि।' अर्थात् चिदात्मा ब्रह्म तो सत्यस्वरूप हैं अर्थात् भावस्वरूप हैं औ बुद्धि, इन्द्रिय, देह आदि अनृत अर्थात्....हैं। यहाँ वाचस्पति मिश्र ने सत्यस्वरूप ब्रह्म तो श्रुति, स्मृति, इतिहास एवं पुराणों से प्रतिपाद्य हैं एवं श्रुत्यादिमूलक एवं श्रुत्यादि से अविरूद्ध तर्क से निर्णीत शुद्ध-बुद्ध मुक्त सवभावस्वरूप, सत्ता से ही निर्वचनीय हैं। यहाँ विद्वानों को ध्यान देना चाहिए कि सत्तासे निर्वचनीय ब्रह्म हैं। अर्थात् जिसकी अनन्त सत्ता हो, वही ब्रह्म है। ऐसा सिद्धांत शङ्कर एवं उनके सम्प्रदायों के विद्वानों का अपनी अनन्त सत्ता से ही ब्रह्म निर्वचनीय हैं। यह मण्डन मिश्र का सिद्धांत है। वहीं वाचस्पति मिश्र ने लिखा हूँ 'तस्मापदराधीन प्रकाशासविदु पेतव्याः।' इसलिए अपराधीन प्रकाश दूसरों के अधीन प्रकाशस्वरूप संवित अर्थात् ब्रह्म नहीं है। वे अपने ही प्रकाश से प्रकाशित हैं। अपने प्रकाश से ब्रह्म प्रकाशित होते है। अर्थात् अपने ज्ञान से ही ब्रह्म समझे जाते हैं। यह शङ्कर का सिद्धान्त नहीं है। वे तो ब्रह्म को अवेद्य अर्थात् अज्ञेय मानते हैं। मण्डन मिश्र ने ब्रह्मसिद्धि में स्पष्ट लिखा है कि ब्रह्म अपने ज्ञान से समझे जाते है– 'न खल्वानन्दनित्यतवविभुस्वादयो अस्यचिद्रूपाद् वस्तुतोभिद्यन्ते।' अर्थात् आनन्द नित्यत्व एवं विभुत्व (सर्वव्यापकस्व) आदि धर्म ज्ञानस्वरूप ब्रह्म से भिन्न नहीं है। (1.1.1 के शांकरभाष्य की भामती)

ब्रह्मासाक्षात्कार के सम्बन्ध में उपनिषद में कहा गया है कि 'श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः।' अर्थात् अनुभावी आचार्य से वेदान्त वाक्य का श्रवण करना चाहिए। तत्पश्चात् सुने हुए तथ्य का तर्क से मनन

करना चाहिए। श्रवण और मनन से जब ब्रह्म का ज्ञान सुनिश्चित हो जाय तब जीवात्मा ब्रह्म ही है, उन दोनों की दृष्टि में का ऐसा स्वभाव है कि उससे परोक्षात्मक ज्ञान ही होता है। स्वभाव से विपरीत कार्य नहीं होता है। वाचस्पति ने भामती में लिखा हैं कि यदि स्वभाव से विपरीत कार्य हो तो कुटज(कोरैया वृक्ष) के बीज से वट के वृक्ष की उत्पति भी हो जाएगी। 'फुटजबी- साक्षात्कार होता है, मन तो इन्द्रिय है। उसका धर्म प्रत्यक्षात्मक ज्ञान करना है। अतः वेदान्त वाक्यार्थ से, सुसंस्कृत मन से ब्रह्म का साक्षात्कार होता है। शङ्कराचार्य की अनेक पंक्तियों से ऐसा प्रतीत होता है कि वे वेदान्त वाक्य से ही ब्रह्म का प्रत्यक्षात्मक ज्ञान वाक्य से ही ब्रह्म का प्रत्यक्षात्मक ज्ञान हो जाता है, अपने-अपने ग्रन्थों में ऐसा प्रतिपादन किया है। परन्तु मण्डन मिश्र के अनुगामी वाचस्पति मिश्र ने भामती में सभी स्थानों में सुसंस्कृत मन से अर्थात् अखण्ड ध्यान से ब्रह्म का प्रत्याक्षात्मक ज्ञान होता है, ऐसा माना है।

शङ्कराचार्य ने 1/3/19 वेदान्तसुत्र के भाष्य में लिखा है कि जैसे उज्जवल स्फटिक मणि की स्वच्छता एवं शुक्लता, रक्त एवं नीलवर्ण की वस्तुओं से कभी नील तो कभी रक्तिम प्रतीत होने लगती है परन्तु यदि नील एवं रक्तिम वस्तु को शुद्ध स्फटिक मणि के नजदीक से हटा दिया जाय, तो स्फटिकमणि की स्वाभाविक शुक्लता प्रतीत होने लगती है। उसी तरह देह इन्द्रिय आदि उपाधि(समीपवर्ती वस्तुओं) से प्रभावित होकर लगती हें। उसी तरह देह इन्द्रिय आदि उपाधि (समीपवर्ती वस्तुओं) से प्रभावित होकर सांसारिक सुख एवं दुखादि से रहित ब्रह्मस्वरूप जीव भी अपने को सुखी एवं दुखी मानने लगता हैं। परन्तु उन उपाधियों से विभक्त अपने स्वरूप को जीव जब समझने लगता है अर्थात् वेदान्त प्रमाणजन्य विवेक ज्ञान से अर्थात् मैं देहादि से भिन्न सांसारिक सुख दुखरहित ब्रह्मस्वरूप हूँ, ऐसा समझने से जीवन असांसारिक ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। 'यथा शुद्धस्य स्फटिकस्य स्वाच्छ्यं च स्वरूपम् प्राब्विवेक ग्रहणाद्रक्तनीलाद्यु पाधिभिरविविक्तमिव भवति। प्रमाणजनितविवेकग्रहणातु पराचीन-स्फटिक स्वाच्छ्येन शैक्ल्येन च स्वेन स्वेणाभिनिष्पद्यत इत्युच्याते प्रागपि तथैव सन्'।

शङ्कराचार्य की पंक्तियों में जो यह बात आई है 'प्रमाणजनितविवेक ग्रहणात्' इससे सूचित होता है कि शङ्कराचार्य वेदान्त प्रमाणजन्य विवेकज्ञान

से ब्रह्मज्ञान हाँ जाता है, ऐसा वे मानते हैं। मनन एवं ध्यानभ्यास से विवेकज्ञान होता है, ऐसा वे नहीं मानते हैं। जो मण्डन के सिद्धान्त से अर्थात् श्रवण, मनन के बाद निदिध्यासन से ब्रह्म का साक्षात्कार होता हैं, इससे विरूद्ध है। अतः वाचस्पति मिश्र ने उपरिलिखित शङ्कर भाष्य की व्याख्या भामती में मण्डन मिश्र के पक्ष का समर्थन करते हुए लिखा हैं– 'तदनेन श्रवणमनन ध्यानाभ्यासाद्विवेकविज्ञान मुक्त्वा तस्य विवेकविज्ञानस्य फल केवलात्मरूपसाक्षात्कारः स्वरूपेणाभि निष्पत्तिः, सच साक्षात्कारो वृत्तिरूपः प्रपंचमात्र प्रविला-यपन् स्वयमपि प्रपञ्चरूपत्वात्कतबत्प्रलीयते। तथाच निर्मृष्टनिलिखप्रपञ्चजा-लमनुपसर्गपराधीनप्रकाशमात्म ज्योतिः सिद्ध भवति।'

वाचस्पति मिश्र का कहना है कि उपरिलिखित पंक्तियों से शङ्कर ने श्रवण, मनन एवं ध्यानाभ्यास से देहादि से जीव का अपना वास्तविक स्वरूप विविक्त है, ऐसा विशिष्ट ज्ञान कह कर उस विवेक विज्ञान का फल केवल आत्मरूप साक्षात्कार वृत्तिरूप हैं। अर्थात् मानसिक व्यापार स्वरूप हैं। वह मानसिक व्यापार प्रपञ्चमात्र को अर्थात् सांसारिक सभी वस्तुओं की विलोपित करता हुआ, चूँकि वह मानसिक व्यापार स्वयं भी प्रपञ्चरूप हीं है। अतः कतकफल के समान स्वयं भी विलीन हो जाता हैं। कतकफल इषदरक्त का होता है। गन्दे पानी में उस फल के चूर्ण को देने से पानी के गन्दगी को मिटाता हुआ वह चूर्ण भी स्वयं नष्ट हो जाता है। उसी तरह वेदान्त वाक्य से सुसंस्कृत मन के अन्तिम व्यापार से जीवों की अज्ञानता नष्ट हो जाती हैं। और वह अन्तिम व्यापार भी स्वयं नष्ट हो जाता है। इस तथ्य को मण्डन मिश्र ने भी कई स्थानों में लिखा हैं– 'यथा विष विषान्तर शमयति, स्वयं च शाम्यति, यथा वा कतकरजो राजोऽन्तराविले पयसि प्रक्षिप्तं रजोऽन्तराणि भिन्वत् स्वयमपि भिद्यमानमनाबिलं पाथः करोति, एवं कर्म, अविद्यात्मकमपि अविद्यान्तराष्यपगमयत् स्वयमम्यपगन्छति ।'

जैसे विष अन्य विष को शान्त करता है और उसके पश्चात स्वयं भी शान्त हो जाता है। जैसे कतकफल की धूल दूसरी धूलों से मलीन जल में प्रक्षेप करने से अन्य धूलों को मिटाता हुआ वह कतकचूर्ण स्वयं भी नष्ट हो जाता है ओर जल को स्वच्छ करता हुआ स्वयं भी नष्ट हो जाता है।

बहुत पूर्व में लकड़ी की पाटी (स्लेट) पर विद्यार्थी लिखते थे। उस पार्टी को चिकना बनाने के लिए कतकफल से रगड़ते थे। उसके चूर्ण में

यह विशेषता हे कि पानी की गन्दगी को मिटा कर वह चूर्ण भी नष्ट हो जाता हैं। अन्यत्र भी मण्डन मिश्र ने लिखा है- 'यथा रच-सम्पर्क-कुलपति मुदकम् द्रव्य-विशेष चूर्णरजः प्रक्षिप्तं रजोन्तराणि सहंरत् स्दयमपि संहिष्मान स्वरूपावस्था मुपनयति एवमेव श्रवणादिभिर्भेद दर्शने प्रविलियमाने स्वच्छे परिशुद्धे स्वरूपे जीवोऽवतिष्ठते।' (ब्र. सि. 12 पृष्ठ)

अर्थात् जैसे धूल के सम्पर्क मे कलुषित अर्थात् मलीन उदक अर्थात् जल में द्रव्य विशेष (कतक फल) के चूर्णरूपी धूल डालने पर अन्य धूलों को नष्ट करता हुआ स्वयं भी नष्ट होता हुआ पानी की स्वच्छ स्वरूपावस्था को प्राप्त करता है उसी तरह श्रवणादि से भेद दर्शन नष्ट होते हुए श्रवणादि भी नष्ट हो जाते हैं और स्वच्छ परिशुद्ध स्वरूप में (ब्रह्मरूप में) जीव अवस्थित हो जाते हैं। उपरिलिखित ब्रह्मासिद्धि की पक्तियों की व्याख्या करते हुए शंखपणि ने लिखा हैं– 'रजस्त्वा विशेषेऽपि यथा कतकरजो रजोऽत्तरप्रतियोगि तल्निवर्त्तक च भवति तथा अविद्यात्वा विशेषेऽपि श्रवणाद्यविद्या प्रपञ्चा विद्यायाःप्रतियोगिनी निवेतिका च भविष्यति।'

अर्थात् अन्य धूल के समान कतक फल के चूर्ण भी धूल ही रहते हैं तो भी कतकफल का चूर्ण अन्य धूलों के विरोधी एवं निवर्त्तका हैं। शंखपाणि ने यह भी लिखा हैं– 'तत्र श्रवणशाभिध्यक्ति त्रमेणविद्यानिवृत्युपायत्वमिति विवेकः। (शंखपाणि की टीका ब्रह्मकाण्ड)

अर्थात् श्रवण एवं मनन, शब्द-ब्रह्मज्ञान (परोक्षब्रह्मज्ञान) कराते हैं। ब्रह्मचर्य आदि पद से वैदक यज्ञ, दान, तप आदि सभी साधन पाप को दूर करते है एवं ध्यान तथा समाधि अद्वयब्रह्म के प्रकाश की अभिव्यक्ति करता है और उपरिलिखित सभी साधन अविद्या की निवृत्ति के उपाय हैं।

मेरे कहने का यह तात्पर्य है कि शङ्कराचार्य केवल शब्द प्रमाण से ब्रह्म का साक्षात्कारात्मक ज्ञान हो जाता है, ऐसा मानते हैं। परन्तु मण्डन मिश्र शब्द प्रमाण से ऐसा मानते हैं। मण्डन मिश्र शब्द प्रमाण से ब्रह्म का परोआत्मक ज्ञान होता है और ध्यान से ब्रह्म का प्रत्यक्षात्मक ज्ञान होता है– ऐसा मानते है। मण्डन मिश्र के भावाद्वैतवाद के अनुगामी, वाचस्पति मिश्र ने वेदान्त सूत्र के भाष्य में जहाँ-जहाँ शङ्कर ने ऐसा लिखा है कि शब्द प्रमाण से ब्रह्म का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है वहाँ-वहाँ पर भामती में वाचस्पति ने श्रवण, मनन के पद ध्यान से ब्रह्म का प्रत्यक्षात्मक ब्रह्मजान होने की बात लिखी

हैं। कोई भी निष्पक्ष विज्ञ पाठक उपर- से समक्ष जाएगे कि वाचस्पति मिश्र शङ्कर के अनुगामी नहीं हैं, अपतु मण्डन मिश्र के अनुगामी हैं।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि शङ्कर सम्प्रदाय में जो यह माना जाता है कि शब्द से ब्रह्म का साक्षात्करात्मक ज्ञान हो जाता है और मण्डन मिश्र के सम्प्रदाय में जो यह माना जाता है कि ध्यान से अर्थात् सुसंस्कृत मन के व्यापार से ब्रह्म का साक्षात्कारात्मक ज्ञान होता है, इस कथन में दोनों सम्प्रदायों का परम तात्पर्य नहीं हैं। क्योंकि ब्रह्म का साक्षात्कारात्मक ज्ञान किसी प्रमाण से नहीं हो सकता है। क्योंकि ब्रह्म तो 'अप्रमेमय' दोनों सम्प्रदायों में माने जाते हैं। जैसा कि वृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया हैं– 'एकधैवा नुद्रष्टव्यं तदप्रमर्यघ्रुवं।' (वृ.उ. पंचमाध्याय, श्लोक-20)

अर्थात् ब्रह्म को एक ही प्रकार से देखना चाहिए। अर्थात् ब्रह्म की सच्चिदानन्द कहाा गया हैं। अर्थात् ब्रह्म सदूप, चित् (ज्ञानस्वरूप) एवं आनन्दस्वरूप हैं। परन्तु ये तीनों अलग जैसे प्रतीत होने पर भी वास्तविक रूप में एक ही हैं। ज्ञान अथवा आनन्द को सद्रूप से अलग नहीं किया जा सकता है। उसी तरह ज्ञान आनन्द से पृथक सत् भी नहीं हो सकता है। अतः ब्रह्म को एकही रूपे में देखना चाहिए। 'ब्रह्म अप्रेमय' अर्थात् अप्रेमय प्रमाण से सिद्ध नहीं होते हैं और वे ध्रव अर्थात् नित्य एवं स्थायी हैं। के व्यापार से जो वस्तु सिद्ध होती है वह वस्तु प्रमाण के व्यापार से पूर्व असिद्ध रहते हैं। परन्तु ब्रह्म तो प्रमाण के व्यापार से पूर्व में भी सिद्ध ही रहते हैं वे स्वतः सिद्ध हैं।

ऐसी स्थिति में जहाँ शब्द से अथवा सुसंस्कृत मन के व्यापार से ब्रह्म साक्षात्कार होने की बात कही गई है उसका तात्पर्य यह है कि उन दोनों के व्यापार से ब्रह्म का साक्षात्कर जैसा हो जाता है। ब्रह्म का ज्ञान तो उनके अपने नैसर्गिक ज्ञान से होता हैं। जैसा कि गौड़पादाचार्य ने लिखा है कि– 'अजेनाज विवुध्यते'। अर्थात् ब्रह्म के अजन्मा से ब्रह्म समझे जाते हैं। प्रमाणजन्य ज्ञान तो अजन्मा नहीं है। ब्रह्म का अपना ज्ञान से ब्रह्म समझे जाते हैं। प्रमाणजन्य ज्ञान तो अजन्मा नहीं हैं। ब्रह्म का अपना ज्ञान ही अजन्मा हैं।

अतः जीव यद्यपि ब्रह्मस्वरूप हैं, परन्तु अनादिकालीन अविद्या के आवरण के कारण जीव, अपने को ब्रह्मरूप हो जाता है और अपने ही ज्ञान

से अपना अनुभव करने लगते हैं। जैसे सूर्य अपने प्रकाश से ही साक्षात्कृत होते हैं। परन्तु मेघस्वरूप आवरण से जब उनका साक्षात्कार तिरोहित जैसा हो जाता है, आवरण हटने से सूर्य का साक्षात्कार होने लगता है। उसी तरह किसी भी प्रमाण से जीवों के आवरण हटते हैं और जीव ब्रह्मस्वरूप होकर अपने ज्ञान से ही ब्रह्मस्वरूपता का अनुभव करने लगते हैं। अतः प्रमाण के व्यापार से घटादि वस्त्र के साक्षात्कार जैसे ब्रह्म का साक्षात्कार नहीं होता हैं परन्तु आवरण हटने से ब्रह्म का साक्षात्कार होता हैं।

उपरिलिखित तथ्य को मण्डन मिश्र ने ब्रह्मसिद्धि में निम्नलिखित पंक्ति से सुस्पष्ट किया है– 'तस्मात् संवेद्यम् आत्मप्रकाशत्वात, असवेद्य च विषयवत् कर्मभावाभावात्।' अर्थात् ब्रह्म संवेद्य ज्ञेय) हैं क्योंकि ब्रह्म स्वप्रकाश हैं। अपने ही प्रकाश से समझे जाते हैं और ब्रह्म असंवेद्य(अज्ञेय) भी है क्योंकि अन्य वस्तुएँ प्रमाण के व्यापार से कर्मकारक के रूप में जैसे प्रतीत होते हैं उस तरह से ब्रह्म प्रतीत नहीं होते हैं। मण्डन का यह आशय है कि जहाँ घटादि वस्तुओं का प्रत्यक्ष होता है वहाँ ज्ञाता (जीवात्मा) नयनसहकृत मानसिक व्यापार रूप ज्ञान से कर्मकारक के रूप में घटादि वस्तुओं को प्रत्यक्ष ज्ञान करते है। इसे दूसरे शब्द में यह कह सकते हैं कि जहाँ घटादि वस्तुओं का प्रत्यक्ष होता है वहाँ प्रमांता(जीवा) प्रमाण से अर्थात् नयनसहकृत मानसिक व्यापार से प्रमेयस्वरूप घटादि वस्तुओं का प्रत्यक्ष ज्ञान करता हैं। घटादि वस्तुओं के प्रत्यक्ष ज्ञान में प्रमाण और प्रमेय तीनों अलग-अलग रहते हैं। परन्तु ब्रह्म का जब प्रत्यक्ष ज्ञान होता है, तब वहाँ प्रमाता(ब्रह्म) प्रमाण में (ब्रह्म के नैसर्गिक ज्ञान से) प्रमेय (ब्रह्मा) का ज्ञान होता हैं। अर्थात् ब्रह्म के प्रत्यक्ष के अवसर में प्रमाता, प्रमाण और प्रमेय तीनों एक ही रहते हैं। यह भी कहा जा सकता है। घटादि वस्तुओं के प्रत्यक्ष ज्ञान में प्रमाता, प्रमाता (ब्रह्म) प्रमाण से (ब्रह्म के नैसर्गिक ज्ञान से) प्रमेय (ब्रह्म) का ज्ञान होता है। अर्थात् ब्रह्म के प्रत्यक्ष के अवसर में प्रमाता, प्रमाण और प्रमेय तीनों एक ही रहते हैं। यह भी कहा जा सकता है कि ब्रह्म के प्रत्यक्ष की स्थिति में ज्ञाता, ज्ञान एवं ज्ञेय तीनों एक ही रहते हैं। जैसे सूर्य अपने प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। वहाँ प्रकाशक, प्रकाश एवं प्रकाश्य तीनों सूर्य ही हैं।

मण्डन मिश्र के उपरलिखित विद्वान्त को वाचस्पति मिश्र ने भामती

में भी सुस्पष्ट किया हैं। वेदान्त सूत्र के भाष्य में शङ्कर के सामने जब यह प्रश्न आया कि अद्वैत वेदान्त में ब्रह्म से अतिरिक्त सभी वस्तुएँ मिथ्या हैं, तब मिथ्यात्मक शास्त्र से प्रतिपादित अद्वैतवाद कैसे सत्य हो सकता है। इसके उत्तर में यहाँ पर यह भी कहा जा सकता है कि आत्मा-साक्षात्कार पर्यन्त, श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन रूप, जो उपाय वर्णित हुये हैं और वेदान्त से उत्पन्न जो ब्रह्म से अतिरिक्त सभी वस्तुएँ मिथ्या हैं, तब मोक्षशास्त्र (वेदान्त) भी मिथ्या हैं। तब मिथ्यात्मक शास्त्र से प्रतिपादित अद्वैतवाद कैसे सत्य हो सकता है।

इसके उत्तर में यहाँ पर यह भी कहा जा सकता है कि आत्मा-साक्षात्कार-पर्यन्त, श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन रूप, जो उपाय वर्णित हुये हैं और वेदान्त से उत्पन्न जो ज्ञानसमूह हैं वे सबके सब अमत्य हैं। श्रवणादि उपाय से सुसंस्कृत मन की अन्तिम वृत्ति जो ब्रह्म साक्षात्कार के कारण माने जाते हैं वह मानसिक वृत्ति भी कार्य अर्थात् अनित्य है। उसका धर्म रूक जाना अर्थात् नष्ट हो जाना है और ब्रह्म का धर्म जी ब्रह्म का साक्षात्कार है(ब्रह्म का अपना नैसर्गिक ज्ञान) वह कार्य अर्थात् अनित्य नहीं हैं। क्योंकि वह ब्रह्मसाक्षात्कार तो ब्रह्म का स्वभाव है। ब्रह्म का धर्म इसलिए यह अप्रष्टव्य है कि कैसे असत्य या सत्य की उत्पत्ति होती है। जो सत्य रहता है, वह उत्पन्न नहीं होता है। इसलिए असत्य वेदान्त वाक्य से सत्य ब्रह्म का साक्षात्कार कैसे हो सकता है? जो उत्पन्न होता है, वह सब असत्य ही है। इसलिए मानसिक वृत्तिस्वरूप ब्रह्म साक्षात्कार को परमार्थ सत्य मानकर व्यभिचार का उत्थापन किया गया हैं। अर्थात् यह प्रश्न किया गया हैं कि असत्य वेदान्त वाक्य से जो ब्रह्मसाक्षात्कार होता। वह भी अनित्य एवं गीण हैं। ब्रह्म का साक्षात्यकार तो ज्ञानस्वरूप ब्रह्म का धर्म ही हैं। उपरलिखित पंक्तियों से वाचस्पति मिश्र ने विरोधियों के खण्डन करने के खण्डन करने के अवसर में एक और शङ्कर सिद्धान्त के लिए एक नई युक्ति दे दी हैं। तो दूसरी और ब्रह्म का साक्षत्कार ब्रह्म का धर्म अर्थात् उनका ज्ञान हैं, वह तो उनका स्वभाव है अर्थात् ब्रह्म का धर्म हैं। नित्य ब्रह्म के धर्म अनित्य नहीं हो सकते हैं। ऐसा कहकर मण्डन मिश्र के 'भावाद्वैत त' का समर्थन भी कर दिया है। कहने का तात्पर्य यह है कि ब्रह्मासिद्धि में मण्डन मिश्र ने जो यह कहा कि मानसिकवृत्ति से कर्मकारक के रूप में

घटादि पदार्थ जैसे वेद्य होते हैं, वैसे, ब्रह्म-वेद्य नहीं है। परन्तु ब्रह्म ज्ञानस्वरूप अपने नित्य धर्म से सदा साक्षात्कृत होते ही रहते हैं। इसलिए ब्रह्म असम्वेद्य नहीं है, सम्वेद्य हैं। उसका समर्थन उपरलिखित भामती की पंक्तिों से वाचस्पति मिश्र ने कर दिया है।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि शङ्कर ने स्पष्ट रूप से ब्रह्म सच्चिदानन्दस्वरूप है, ऐसा नहीं माना है और यह भी नहीं माना है कि ब्रह्म ज्ञानस्वरूप अपने धर्म से ज्ञेय होते हैं। अतः उनकी दृष्टि से ब्रह्म अज्ञेय हो जाते हैं। अतएव शङ्कर के सिद्धान्तों का खण्डन करते हुए ब्रह्मसिद्धि में मण्डन मिश्र ने कहा है कि जब तक ब्रह्म को सच्चिदानन्द का स्वरूप नहीं माना जाएगा और ब्रह्म अपने धर्म, ज्ञान से अपनी सच्चिदानन्दस्वरूपता का अनुभव नहीं करते रहेंगे तब तक ब्रह्मप्राप्ति अर्थात् मोक्ष जीवों के लिए पुरुषार्थ नहीं होगा। अर्थात् प्राप्तव्य नहीं होगा।

मण्डन मिश्र के 'भावाद्वैतवाद' का समर्थन करते हुए वाचस्पति मिश्र ने लिखा हैं– सत्य यदस्ति वस्तुतस्तत्सर्वथा सर्वदा सर्वात्मना निर्वचनीयेन रूपेणास्त्मेव न नास्ति, यथा, प्रत्यगात्मा। यत्तु क्वचित् कथचित् केनचिदात्मनाऽस्तीतयुच्चते यथा प्रपञ्चः तद्वयबहारतो नतु परमार्थतः तस्य विचा सिहत्वात'।

(2/2/33 ब्रह्मसूत्र की भामती)

सत्य जो है वस्तुतः वह सर्वथा, सभी समय में, सभी स्थानों में, सभी रूप से निर्वचनीय रूप में रहते ही हैं। जैसे प्रत्यगात्मा अर्थात् ब्रह्म और जो कहीं किसी समय में किसी रूप से रहते हैं, जैसे प्रपञ्च (विश्व)। व्यवहार के लिए उसका अस्तित्त्व है। परमार्थ रूप से उसका अस्तित्त्व नहीं है। क्योंकि प्रपञ्च सत हैं अथवा असत हैं ऐसे विचार को सहन नहीं कर सकता हैं। अर्थात् प्रपंच को सत अथवा असत् इनमें से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि मण्डन मिश्र ने ब्रह्म दोनों की अनिर्वचनीय मान लिया है। शङ्कर ब्रह्म को निर्विशेष एवं अवाङमनसगोचर मानते हैं– 'निर्विशेष ब्रह्म वाक्यशेषं...वाङमनसयोरगोचरत्वाभिधानात्' (द्रष्टव्य 1-1-19 का ब्रह्मसूत्र शा.शा। ब्रह्म में किसी तरह की विशेषता नहीं हैं, उनमें सत् एवं असत् नहीं हो उसे ही वेदान्त में अनिवर्चनीय कहा गया हैं। (गौड़पाद की 83-84 की कारिका के ऊपर शङ्कर भाष्य।) यहाँ वाचस्पति ने

मण्डन मिश्र के पक्ष का समर्थन किया है।

1/1/19 ब्रह्मसूत्र की भामती में लिखा है– 'रजत हि समारोपितं न शुक्तो भिद्यते। नहि तद्भेदेनाभेदेन वा शर्क्य निर्वाक्तुम्। शुक्तिस्तु परमार्थसती निर्वचनीया अनिर्वचनीयाद्रजताद्विद्यत एव।'

कभी कभी शुक्तिका (सीप) में चाँदी का भ्रम हो जाता हैं। वाचस्पति मिश्र ने लिखा है कि सीप में अर्थात् शुक्तिका में समारोपित अर्थात् भ्रमात्मक प्रतीति रजत (चाँदी शुक्ति से भिन्न नहीं है। भ्रमात्मक प्रतीति रजत, शुक्ति से भिन्न है। अथवा अभिन्न है, कुछ नहीं कहा जा सकता। अतः चाँदी अनिर्वचनीय है। परन्तु शुक्ति अर्थात् सीप परमार्थ रूप से सत् है अतः वह निर्वचनीय है। आरोपित रजत के समान सीप अनिर्वचनीय नहीं है। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि शङ्कर एवं मण्डन दोनों अद्वैत वेदान्ती और मायावादी हैं। सर्प की भ्रमात्मक प्रतीति होती है उसी तरह ब्रह्म में संसार की प्रतीति और रज्जु में सर्प भ्रमात्मक प्रतीति होती है उसी तरह ब्रह्म में संसार की प्रतीति होती हैं। संसार की वास्तविक सत्ता नहीं है। वाचस्पति ने यहाँ मण्डन मिश्र के पक्ष का समर्थन किया है। क्योंकि उन्होंने भ्रमात्मक रजत को अनिर्वचनीय और भ्रमात्मक वस्तु के आधार को निर्वचनीय माना हैं।

2/1/14 वेदान्त सूत्र के भाष्य में वाचस्पति मिश्र ने लिखा हैं– 'ये हि दृष्ट नष्ट स्वरूपा न ते वस्तुसनतोयथामृग तृष्णिकोदकादयः तथा च सर्व विकारजासं तस्मादवस्तुसत्। तथाहि यदस्ति तदत्येव यथा चिदात्मा। नहासौ कदाचित् क्वाचित् कथंचिद्वास्ति, किन्तु सर्वदा सर्वत्र सर्वयाऽस्त्येव, न नास्ति। न चैवं विकार जातम्, तस्य कदाचित् कथांचित् कुत्राचिदवस्थानात्।'

अर्थात् जो दृष्ट नष्टस्वरूप है अर्थात् देखा गया और नष्ट हो गया, वे वास्तविक सत्य नहीं है। जैसे मृगतृष्णा का जल रज्जु सर्प आदि। उसी तरह से प्रपञ्च वास्तविक सत्य नहीं हैं। अर्थात् ओ रहता है वह सदा रहता है. जैसे ब्रह्म। ब्रह्म किसी समय में, कहीं पर, किसी रूप में नहीं रहते हैं। प्रत्युत सभी काल में साभी स्थानों में सभी तरह से रहते ही हैं। वे किसी रूप में वही नहीं रहते हैं। विकारोत्पन्न विश्व हैं। वह किसी समय में किसी रूप से कही पर रहता हैं। इसलिए वह वास्तविक नित्य नहीं हैं। यहाँ पर भी वाचस्पति मिश्र ने मण्डन मिश्र के पक्ष का समर्थन किया है।

2/3/7 बह्मसूत्र की भामती में वाचस्पति मिश्र ने लिखा हैं– 'यत्खलु सत्स्वभावमनुभवसिद्ध' तस्यानिर्वचनीयत्वमन्यतो वाद्यकादवसातव्यम्। बाधकं च घटादीनरां स्वभावाद्विचलन प्रमाणोपनीतम्। यस्स तु न तदस्त्यात्मनो न तस्य सत्कल्पन युक्तम् अवाधितानुभवसिद्धस्य सत्स्वभावास्यानिर्वचीनयत्वकलपनाप्रमाण।'

कभी कभी शुक्तिका (सीप) में चाँदी का भ्रम हो जाता है। वाचस्पति मिश्र ने लिखा है कि सीप में अर्थात् शुक्तिका में समरोपित अर्थात् भ्रमात्मक प्रतीति रजत (चाँदी शुक्ति से मिश्र नहीं हैं भ्रमात्मक प्रतीति रजत, शुक्ति से भिन्न हैं। अथवा अभिन्न हैं, कुछ नहीं कहा जा सकता। अतः चाँदी अनिर्वचनीय है। परन्तु शुक्ति अर्थात् सीप परमार्थ रूप से सत् है अतः वह निर्वेचनीय है। आरोपित रजत के समान सीप अनिर्वचनीय नहीं हैं। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि शङ्कर एवं मण्डन दोनों अद्वैत वेदान्ती और मायावादी हूँ। मायावादी यह मानते हैं कि जैसे शुक्ति में रजत की भ्रमात्मक प्रतीति और रज्जु में सर्प की भ्रमात्मक प्रतीति होती हैं उसी तरह ब्रह्म में संसार की प्रतीति होती हैं। संसार की वास्तविक सत्ता नहीं हैं। वाचस्पति ने यहाँ मण्डन मिश्र के पक्ष का समर्थन किया हैं। क्योंकि उन्होंने भ्रमात्मक रजत को अनिर्वचनीय और भ्रमत्मक वस्तु के आधार को निर्वचनीय माना हैं।

2/1/14 वेदान्त सूत्र के भाष्य में वाचस्पति मिश्र ने लिखा हैं– 'ये हि दृष्ट नष्ट स्वरूपा न ते वसतुसनतोयथामृग तृष्णिकोदकादयः तथा च सर्व विकारजाते कथंचिद्वास्ति, किन्तु सर्वदा सर्वत्र सर्वथाऽस्त्येव, न नास्ति। न चैव विकार जातम्, तस्य कदाचित् कथांचित् कुत्राचिदवस्थानात्।'

अर्थात् जो दृष्ट नष्टस्वरूप हैं अर्थात् देखा गया और नष्ट हो गया, वे वास्तविक सत्य नहीं हैं। जैसे मृगतृष्णा का जल रज्जु सर्प आदि। उसी तरह से प्रपञ्च वास्तविक सत्य नहीं है। अर्थात् जो रहता है वह सदा रहता है. जैसे ब्रह्म। ब्रह्म किसी समय में, कहीं पर, किसी रूप में नही रहते हें। प्रत्युत सभी काल में सभी स्थानों में, सभी तरह से रहते ही हैं। वे किसी रूप में वही नही रहते हैं। विकारोत्पन्न विश्व हैं। वह किसी समय में किसी रूप से कहीं पर रहता हैं। इसलिए वह वास्तविक नित्य नहीं हैं। यहाँ पर भी वाचस्पति मिश्र ने मण्डन मिश्र के पक्ष का समर्थन किया है।

2/3/7 ब्रह्मसूत्र की भामती में वाचस्पति मिश्र ने लिखा है–

'यत्खलु सत्स्वभावमनुभवसिद्ध' तस्यानिर्वचनीयत्मन्यतों वाद्यकादवसातथ्यम्। बाधक च घटादीनां स्वभावाद्विचलन प्रमाणोपनीतम्। यस्य तु न तदस्त्यात्मनो न तस्य तत्कल्पन युक्तम् आवधितनुवसिद्धस्थ सत्स्वभावास्यानिर्वचनीयत्वकल्पनाप्रमाणभावात्।'

अर्थात् अनुभवसिद्ध जिसका सत् स्वभाव रहता है उसके बाधक रहने पर वह वस्तु अनिर्वचनीय माना जाता है। जैसे घट आदि पदार्थ अपने स्वभाव से विचलित हो जाते हैं। अर्थात् प्रतिक्षण क्षय होते हुए नष्ट हो जाते हैं। आत्मा तो प्रतिक्षण जैसे के तैसे रहते हैं। इसलिए उसे अनिर्वचनीय मानना ठीक नहीं हैं। आत्मा का अबाधित स्वरूप अर्थात् उसकी एकरूपता अनुभवसिद्ध है। अतः सद्रूष ब्रह्म की अनिर्वचनीयता की कल्पना प्रामाणिक नहीं है। अर्थात् शरीर बदलते रहते हैं यह अनुभवसिद्ध है। परन्तु आत्मा बदलती रहती है यह अनुभवसिद्ध नहीं है। इसलिए जो बदलती रहती है वह अनिर्वचनीय हैं। जो नहीं बदलती है अर्थात् आत्मा वह निर्वचनीय है। शरीर प्रतिक्षण बदलते रहते हैं और आत्मा नहीं बदलती है। इसे सिद्ध करने के लिए 1/1/1 ब्रह्मसूत्र की भामती में लिखा है कि 'योऽहं वाल्ये पितरामन्वभवं स एव स्थाविरे प्रणप्तूननुभनवामौति प्रतिसंधान त भवेत् नहि वालरथविरयोः शरीरयोरस्ति मनागपि प्रत्यभिज्ञानगन्धो येनैकत्वमध्यवसीयेत।

अर्थात् बाल्यावस्था में जो मैंने माता-पिता का अनुभव किया था वही मैं वृद्धावस्था में प्रपौत्र आदि का अनुभव करता हूँ। यदि शरीर के समान आत्मना भी बदलती रहती, अर्थात् सदा एक रूप नहीं रहती तो उस लिखित अनुभव की प्रतीति नहीं होती। इसलिए जो बदलती रहती हैं उसी की मृत्यु होती है। जो नहीं बदलती हैं उसकी मृत्यु नहीं होती है।

उपरलिखित पंक्तियों से भी वाचस्पति मिश्र ने मण्डन मिश्र के भावाद्वैतवाद अथवा ब्रह्मानिर्वचनीयतावाद का समर्थन किया है।

1/1/4 ब्रह्मसूत्र के भाष्य में ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन करते हुए शङ्कराचार्य ने लिखा है– 'इदं तु परामार्थिक कूटस्थनित्यं व्योमवत्सर्वव्यापि सर्वविकियारहितं नित्यतृप्तं निखयवंस्वयं ज्योतिः स्वभावम्।'

अर्थात् ब्रह्म तो पारमर्थिक है, अर्थात् वास्तविक हैं। कूटस्थ(नेहाय, जिसके ऊपर लुहार खुरपी आदि पीटते हैं। खुरपी आदि जैसे के तैसे नहीं रहते हैं और कूट (नेहाय) अधिकारी हैं। वैसे ही ब्रह्म अविकारी हैं। आकाश

के समान ब्रह्म सर्वव्यापी, सभी तरह के रूपान्तर मे रहित नित्य तृप्त, निवयव और ज्योतिस्वरूप हैं। नित्यतृप्त की व्याख्या करते हुये वाचस्पति मिश्र ने लिखा है– 'तृप्त्या दुख रहित सुखमुपलक्षयति। सुददुखं निवृत्तिसहितम् हि सुखम् तृप्तिः।'

अर्थात् तृप्ति पद से दुख रहित ब्रह्म सुखस्वरूप है ऐसा सूचित होता है। भूख की निवृत्ति के साथ सुख की प्राप्ति होने पर ही तृप्ति मानी जाती हैं। वाचस्पति मिश्र का यहाँ पर यह आशय हैं कि भूखा व्यक्ति जैसा-तैसा भी भोजन कर ले' तो उसकी भूख की (दुःख की) निवृत्ति हो जाती हैं। परन्तु उसे तृप्ति नहीं होती हैं। यदि खाने के लिए उत्तमोत्तम भोजन मिले, तभी भूख (दुख) की निवृत्ति के साथ सुख की प्राप्ति होती हैं। वही तृप्ति मानी जाती हैं। अतः नित्य तृप्ति से ब्रह्म दुखाभाव के साथ सुखस्वरूप हैं। यह शङ्कर का आशय हैं। परन्तु यह तो शङ्कर का आशय नहीं हैं। मण्डन का सिद्धान्त है। यह वर्णित हो चुका है। स्वयं ज्योतिः की व्याख्या करते हुए वाचस्पति मिश्र ने लिखा हैं– 'सुखं चाप्रती यमानं न पुरुषार्थ इत्यतआह स्वयंज्योतिरिति।

अर्थात ब्रह्म प्राप्तव्य नहीं हो सकते हैं और मोक्ष पुरुषार्थ नहीं हो सकता है। विज्ञ व्यक्तियों को यह समझना चाहिए कि दुख रहित भावात्मक सुखस्वरूप ब्रह्म है यह शङ्कर का सिद्धान्त नहीं हैं, अपितु मण्डन का सिद्धान्त है। साथ ही अपने ज्ञान से आनन्द की प्रतिति ब्रह्म को एवं मुक्त जीव को होती रहती हूँ। यह मण्डन का सिद्धान्त है। अपने बुद्धि-वैभव से वाचस्पति मिश्र ने शङ्कर की पंक्तियों से भी मण्डन के सिद्धान्त को समर्थित किया है। मण्डन एवं वाचस्पति मिश्र का सिद्धान्त बहुत ही तर्कयुक्त को समर्थित किया है। मण्डन एवं वाचस्पति मिश्र का सिद्धान्त बहुत ही तर्कयुक्त है। ज्ञान एवं सुख अप्रतीत हो ही नहीं सकते हैं। जब कभी ज्ञान कभी ज्ञान एवं सुखों के अनुभव होते हैं तब उनकी प्रतीत नहीं होगी ऐसी बात होती ही नहीं है। यह बात सभी लोगों के समझने योग्य है। अतः वाचस्पति मिश्र ने शङ्कर भाष्य की व्याख्या भामती में भी मण्डन मिश्र के अद्वैत वेदान्त की अर्थात् भावाद्वैतवाद को प्रायः सर्वत्र समर्थन किया है। विस्तृत रूप से इसका उल्लेख करना एक स्वतंत्र पुस्तक में ही समर्थन किया है। विस्तृत रूप से इसका उल्लेख करना एक स्वतंत्र पुस्तक में ही सम्भव

हो सकता है।

यहाँ मैंने भामती की कतिपय पंक्तियों से यह सिद्ध किया है कि वाचस्पति ने शङ्करभाष्य की व्याख्या में भी मण्डन के सिद्धान्त का ही समर्थन किया है। वाचस्पति मिश्र ने ब्रह्मसिद्धि पर ब्रह्मतत्त्वसमीक्षा नाम की व्याख्या लिखी थी। जिसका उल्लेख वाचस्पति मिश्र ने अपने कई ग्रन्थों में किया है। तथा भामती के व्याख्याकार शङ्कर सम्प्रदाय के संन्यासी अद्वैतवेदान्ती ने ब्रह्मतत्त्वसमीक्षा की कुछ पंक्तियों का भी उल्लेख किया है। परन्तु दुर्भाग्य से, साथ ही मिथिलावासियों के परम दुर्भाग्य से ब्रह्मतत्त्व समीक्षा अनुपलब्ध हो गई। यदि वाचस्पति की वह व्याख्या उपलब्ध होती तो उसके अध्ययन से मण्डन मिश्र के सिद्धान्तों का कितना समर्थन मिलता यह अवर्णनीय है। परन्तु मिथिलावासियों के सौभाग्य से भामती में भी मण्डन के अद्वैत वेदान्तों के सिद्धान्त प्रचूर मात्रा में सशक्त समथित देखने को मिलते हैं। दुर्भाग्यवश विलम्ब से ब्रह्मसिद्धि के प्रकाशन होने तथा परीक्षा में सम्मिलेन नहीं होने के कारण कुछ शताब्दियों से ब्रह्मासिद्धि के अध्ययनर एवं अध्यापन अवरूद्ध हो गये। साथ ही ब्रह्मसिद्धि के अवलोकल नहीं करने से भामती में वाचस्पति ने अपनी उनेक पक्तियों से ब्रह्मसिद्धि के अवलोकन नहीं करने से भामती में वाचस्पति ने अपनी अनेक पक्तियों से ब्रह्मसिद्धि का जो समर्थन किया है यह बात भी ओझल हो गई।

दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि भामती की अनेक पंक्तियों के....तात्पर्य समझने में बड़े-बड़े विद्वान भी असमर्थ हो गये। यह उनका दोष नहीं है। ब्रह्मसिद्धि को नहीं देखने के कारण वाचस्पति भी भामती की अनेक पक्तियों के तात्पर्य उनलोगों की दृष्टि से ओझल हो गई। अब जबकि ब्रह्मसिद्धि उपलब्ध हो गई हैं, तो इसकी बड़ी उपेक्षा है कि जिन विद्वानों को वेदान्त एवं भामती का अध्ययन है, वे ब्रह्मसिद्धि के साथ भामती का अध्ययन करें, जिससे उन्हें ज्ञात हो सके कि ब्रह्मसिद्धि से समर्थित भामती की कितनी पंक्तियों हैं।

मैथिल वेदान्तियों के लिए तो यह परम कर्त्तव्य है कि ब्रह्मसिद्धि के सिद्धान्तों के समर्थक भामती की पंक्तियों का यथार्थभाव पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा अथवा छोटी पुस्तकों के द्वारा समाज के सामने उपस्थिति करें जिससे विदेहभूमि के अद्वैत वेदान्त, अर्थात् मण्डन- वाचस्पति के अद्वैत

वेदान्त, अर्थात् मण्डन-वाचस्पति के अद्वैत वेदान्त सुस्पष्ट रूप से उपस्थिति हो सके।

मण्डन मिश्र की अंतः यात्रा

—आचार्य धीरज

(मण्डन मीमांसकक संग वेदान्ती सेहो छलाह। सकामवादी आ अनीश्वरवादी छलाह। सकाम दार्शनिक आ व्यवहारवादी छलाह। ज्ञान-मार्गी (कर्मकाण्ड-विरोधी) छलाह, कर्मवाद-समर्थक छलाह, शङ्करक अद्वैत भ' भिन्न भइयो क' अपना तरहक विशिष्ट अद्वैत-वेदान्ती छलाह, अविद्या-विरोधी आ विद्या-समर्थक छलाह। गृहस्थ-योगी आ कर्मयोगी छलाह। ईश्वरीय सत्त केँ नासकार करैत, भौतिकवाद (अति नहि) केँ यात्रा केलनि। मुदा भौतिकवादी— 'कर्मकाण्डवादक' खण्डन करैत ओ जगतवाद सँ ब्रह्मवाद धरिक अपन अन्तः यात्रा पूर्ण करैत छथि।

अपन उपर्युक्त दार्शनिक अवधारणाक आधार पर मण्डनक जीवन आ दर्शनक अन्तः यात्राक विशद विश्लेषण आ समाख्यान प्रस्तुत केलनि अछि आचार्य धीरज (मैथिली साहित्य आ शिक्षण-क्षेत्रक प्रो रामचैतन्य धीरज)। मिथिलाक दार्शनिक परम्परा आ ऐतिहासिक विश्लेषण केँ हिनक सँ पैघ अपेक्षा छैक।— सम्पादक)

मण्डन और शङ्करचार्य के शासत्रार्थ की दन्तकथा कौन नहीं जानता? माधवाचार्यकृत 'शङ्कर दिग्विजय' को ऐतिहासिक साम्रगी मानकर इतिहास का निर्माण किया जाता रहा है। न सिर्फ दार्शनिक तथ्य के दृष्टिकोण से बल्कि स्थल इतिहास- दृष्टि से भी अनेक प्रश्न खड़े होते हैं। मीमांसा दर्शन अनीश्वरवादी दर्शन है और वैदिक श्रुति कर्मकाण्ड इसका व्यावहारिक समाजशास्त्र हैं। मण्डन मिश्र को अभी तक एक मीमांसाक के रूप में प्रस्तुत कर उनके जगतवादी स्वतः प्रामाणिकता के दृष्टिकोण को ही प्रस्तुत किया जाता रहा है, जबकि मण्डन मिश्र 'ब्रह्मसिद्धि' के रचनाकार में ईश्वरवादी दृष्टिकोण का जो वेदान्त प्रमाण मिलता है, वह इन्हें शङ्कराचार्य के समीप लाकर रख देता हैं। इससे सहज ही यह प्रश्न उभर कर आता है कि क्या मण्डन भिन्न सिर्फ मीमांसक ही थे या वेदान्ती भी। अगर वे वेदान्ती थे, जैसा कि 'ब्रह्मसिद्धि' से ज्ञात होता है, तो माधवाचार्य ने अपने 'शङ्कर- दिग्विजय' में इसकी सूचना क्यों नहीं दी? प्रो. एलेन राइट थ्रसेर ने

'अद्वैत वेदान्त ऑफ ब्रह्मसिद्धि' लिखकर हमारे समक्ष मण्डन मिश्र का वेदान्ती होने का प्रमाण भी छोड़ दिया हैं, फिर शुद्ध जगतवादी या भौतिकवादी दार्शनिक के रूप में इन्हें क्यों प्रस्तुत किया गया है– यह तथ्य विचारणीय हैं।

मैं इस प्रश्न से विषय की और प्रस्थान करना चाहता हूँ कि क्या मण्डन मिश्र अनीश्रवरवादी थे? यह जगजाहिर है कि वैदिक धर्म दर्शन, ज्ञान मार्ग एवं कर्मकाण्ड मार्ग में विभक्त है। कर्मकाण्ड मार्ग जगत या प्रकृतिकवादी है, वैदिक कर्मकाण्ड का आधार दर्शन सांख्या, न्याय और मीमांसा है। चूँकि ये दर्शन वेदान्त को अप्रमाण मानते हैं, इसलिए इन्हें अनीश्वरवाद कहा गया है। प्रकृति और ब्रह्म में विरोध दिखलाने के लिए ही 'आ या 'अन' उपसर्ग का प्रयोग किया जाता है। सुर में 'अ' उपसर्ग लगाने से असुर, आर्य तथा ईश्वर में 'अन' उपसर्ग लगाने से अनार्य तथा अनीश्वर होता है। प्रकृतिवादी या जगतवादी ईश्वर की सत्ता को नहीं मानते। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में जगतवादी दृष्टिकोण के सन्दर्भ को स्पष्ट करते हुए कहा हैं। कि अनीश्वरवादी असत्य अप्रतिष्ठ जगत को ही श्रेष्ठ मानते। इनके अनुसार जगत की उत्पत्ति प्रकृति और पुरुष के संयोग से हुआ है, इसलिए 'काम' को ही जगत का कारण क्यों नहीं माना जाएगा?

असत्यमप्रतिष्ठ' ते जगदाहुरनीश्वरम्।
अपरस्पर संभूत किमन्यत्काम हैतुकम्।। (अ– 16/8)

चूँकि ये 'काम' की प्राप्ति के लिए ही कर्मकाण्ड या ज्ञानुष्ठान करते, इस लिए इसे सकाम मार्ग भी कहा गया हैं। सकाम मार्गी या अनीश्वरवादी वेदान्त को प्रमाण नहीं मानते। 'शङ्कर-दिग्विजय' ग्रन्थ के सूत्रध ार ने मण्डन मिश्र को द्वैतवादी मीमांसाक के रूप में प्रस्तुत कर मण्डन मिश्र द्वारा कहलवाया है कि– 'वेदान्ताः न प्रमाणम'। यह अलग बात है कि यह वाक्य मण्डन मिश्र के सन्दर्भ में सच नहीं है, क्योंकि 'ब्रह्मसिद्धि' में मण्डन मिश्र वेदान्त को प्रमाण मानकर ही प्रसिद्ध मीमांसाक प्रभाकर मिश्र एवं उनके अनुयायी के मतों का खण्डन करते दृष्टिगत होते हैं। अस्तु वेदान्त को जो प्रमाण माने वह ब्रह्मवाद एवं भौतिकवाद का रहा है। मण्डन मिर ने अपनी दार्शनिक यात्रा भौतिकवाद से लेकर आत्मवाद तक किया हैं। जहाँ 'विधि- विवेक', 'भावना-विवेक' में इनकी अर्न्तदृष्टि मीमांसामूलक हैं,

वहीं 'ब्रह्मसिद्धि' में वेदान्तमूलक।

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में अर्जुन के युद्ध से पलायन करने पर, जो उपदेश दिया हैं, उसमें अनार्य कौरवों के लिए आया है– 'अनार्यजुष्टमसवर्म्यमकीर्तिकरमर्जु'न' एवं इसके प्रभाव में आने से रोकते हुए अपने विचार का अनुगामी होने को कहा हैं– 'क्लैव्यं मास्मगमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।' और वह सर्वविदित है कि भगवान श्रीकृष्ण परमात्मवादी धर्म दार्शनिक अवतार हैं। अर्जुन ने भी– 'कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूदन'– कहकर यह स्पष्ट या प्रकृतिवादी धर्म का निषेध गीता के द्वितीय अध्याय में श्रीकृष्ण करते दृष्टिगत होते हैं तथा विधि-विकल्प में इन्होंने सकामवाद के विरूद्ध निष्काम ज्ञान मार्ग एवं कर्मयोग की स्मृति परम्परा को स्थापित करते दृष्टिगत होते हैं। अस्तुः ईश्वरवाद एवं अनीश्वरवाद का अर्न्तविरोध ही वैदिक दर्शन का अन्तविरोध है। मीमांसा दर्शन अनीश्वरवादी है, इसलिए मीमांसक मण्डन मिश्र अनीश्वरवादी ही समझे जायेगे।

वैसे अनीश्वरवादी कर्मकाण्ड मार्ग का ऐतिहासिक संगति वेद विहित है, लेकिन विकासकाल में इसका सम्बन्ध तंत्र मार्ग से ही होता है। मीमांसा तंत्रवार्तिक के न्यायसुधा टीका में कहा गया है कि–

उमानंदनमाराध्य शारदामीश्वरं गुरूम।
कुत्स्नशास्त्र प्रयोदेन व्याख्यासये तंत्रवातिकम।।

इसमें प्रमाणित होता है कि कुमारिल भट्ट का मीमांसा तंत्रवार्तिक कुत्स्नशास्त्र की ही परम्परा में हूँ। कुत्स्नशास्त्र है क्या? वस्तुतः कर्मकण्ड का आधार दर्शन काशकुत्स्न का षष्ठीतंत्र हैं। ईश्वर कृष्ण ने सांख्यकारिका का निर्माण 'पष्ठितंत्र' के आधार पर ही किया है। ईश्वर कृष्ण ने सांख्यासूत्र के अन्तिम कारिका में 'कुत्स्नसय षष्ठितंत्रस्य आख्यायिका विरहिता...' लिखकर प्रमाण छोड़ दिया है कि 'षष्ठितंत्र' कुत्स्न का है। स्वयं पाणिनी ने कहा है कि जिस अक्षर दर्शन या विज्ञान का ज्ञान महेश्वर द्वारा स्थापित किया गया और जिसे कुत्स्न ने व्याकरण रूप में कहा, उन्हें पाणिनी का नमस्कार है। वोपदेव ने जिन आठ शाब्दिकों का नामोल्लिख किया हूँ, उसमें काशकृत्स्न का नाम महत्त्वपूर्ण है। मण्डन मिश्र स्वयं शाब्दिक थे, जिन्होंने इसी परम्परा में व्याकरण और भाषा विज्ञान में स्फोटवाद का प्रयोग किया था। महर्षि

याज्ञवल्क्य ने भी वृहदारण्यक में कृत्स्नशास्त्र का ही खण्डन किया है। (वृ. उ- 1/4/7) वृहदारण्यक के शांकरभाष्य में ब्रह्म विषयक तथ्यान्तर्गत उपासना और वैदिक विधि से शङ्कर समाधान किया जाता है तो—'यथा च कृत्स्नस्य दर्शपूर्ण मासादि प्रकरणस्य दर्शपूर्णं- मासादि विष्युद्देशत्वेनोपयः'— के द्वारा सिद्ध किया जाता है कि कृत्स्न का तंत्र विधि और प्रयोजन हेतु यजन कर्म को स्थान देता है। स्वर्ग की कामना वाले दर्शपूर्णमासयज्ञों द्वारा यजन करें। यहाँ विधि वाक्य दर्शपूर्णमास याग द्वारा यजन करें एवं प्रयोजन वाक्य-'स्वर्ग की कामना है'। जैमिनी के मीमांसा दर्शन में 'अया तो धर्म जिज्ञासा' की वैधानिक महत्ता इसी परम्परा में है। धर्म के लिए विधि और प्रयोजन यानी फल को ही आधार माना गया है। ब्रह्मसूत्रकार मर्हिष वादरायण ने काशकृत्स्न का उल्लेख प्रकृतिवादी दार्शानिक के रूप में किया हैं— जैमिनी के मीमांसा दर्शन में 'अया तो धर्म जिज्ञासा8 की वैधानिक महत्ता इसी परम्परा में है। धर्म के लिए विधि और प्रयोजन यानी फल को ही आधार माना गया हैं। ब्रह्मसूत्रकार महर्षि वादरायण ने काशकृत्स्न का उल्लेख प्रकृतिवादी दार्शनिक के रूप में किया है— 'अवस्थितेरिति काशकृत्स्नः' इस सूत्र की व्याख्या मूल प्रकृति प्रधान से किया गया है, जो सांख्यकारिका और 'षष्ठितंत्र' का विषय हैं। मीमांसा तंत्रवार्तिक में कुमारिल भट्ट ने लिखा है कि सम्पूर्ण रूप से वैदिक धर्म सिद्ध प्रमाण भाव ही है, जिसे आधुनिक प्रयोग में 'विध्यर्यवाद' कहा जाता आर्थत विधि और प्रयोजनवाद—

सिद्ध प्रमाणाभावस्य धर्मेवेदस्य सर्वशः।
विध्यर्यवाद मन्त्राणामुपयोगोऽधुनोच्यते।।

'विधि विवेक' न्यायकणिका में लिखा गया हैं—

प्रमाणत्वादनियममात्प्रवृतेंः संविदाश्रयात्।
समभिव्याहृतेः शब्दो न विधिः कार्य कल्पनात्।।

इस विचार के आधार पर ही मण्डन मिश्र ने याग कर्म के द्वारा ही स्वर्ग प्राप्ति की बात कही है—

तदेवं भावनार्थत्वादाख्यान प्रत्ययस्यहि।
यागेन भावयेन स्वर्गमित्र्यः शब्दनिर्मित।। (भावना-विवेक)

अस्तु, प्रमाणित होता है कि जैमिनी के मीमांसा दर्शन के धर्म की व्याख्या (चोदनाक्षणार्थे धर्मः) विधि और प्रयोजनसिद्ध कर्मकाण्ड है, जो

काशकृत्स्नशास्त्र 'षष्टितंत्र' की परम्परा में एवं अनीश्वरवादी दर्शन के अनुरूप है। मण्डन मिश्र इस दार्शनिक परम्परा के प्रवक्ता जब तक रहे, तब तक इन्हें कर्मकाण्डी, अनीश्वरवादी कहा ही जाएगा।

महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि भौतिकवादी सकाम मार्ग की कामनाओं का चरमोद्येश्य स्वर्ग-प्राप्ति तक सीमित है। स्वर्ग सुख ध्येय ही उनका यजन कर्म सिद्ध प्रमाण है। ध्यान रहे कि भारतीय महाकाव्य, इतिहास पुराण में स्वर्ग को देवताओं की राजधानी कहा गया है। जैसे कैलाश, अमरावती आदि। जबकि अध्यात्मवादी निष्काम मार्ग कर्त्तव्य कर्म के द्वारा ब्रह्म और ईश्वर की प्राप्ति को ही श्रेष्ठ मानता है। गीता में भी वेदवादी कर्मकाण्ड के उद्देश्य पर दृष्टिपात किया गया है–

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः।
वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीतिवादिनः।।
कामात्मनः स्वर्गापरा जन्मकर्मफलप्रदास।
क्रिया विशेष बहुलां भौगैश्वर्यगति प्रति।।

स्पष्ट है कि सकामी का यजनकर्म स्वर्ग प्राप्ति भोग एवं ऐश्वर्य के लिए ही अनेकों प्रकार की विधि-क्रियोओं से भरा पड़ा है। यही कारण है कि श्रीकृष्ण इसके निम्न कर्म कहते अर्जुन को ज्ञान मार्ग या बुद्धि योग में जाने का उपदेश करते हैं–

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगा धनंजय।
बुद्धौ शरणंन्विच्छ कृपणाः फल हेतवः।।

इस तरह वैदिक कर्मकाण्ड का विरोध होता आ रहा है। मण्डन मिश्र मीमांसा व्यवहारवाद तक ही सीमित रहे? अगर यह सच होता तो जैमिनी दर्शन, जिस वेदान्त को अप्रमाण कहना; उसे इन्होंनं प्रमाण कर विध्यर्थ या कर्मकाण्ड का खण्डन कर ब्रह्मवादी विकल्प नहीं दिया होता। इन्होंने ब्रह्मवादी विकल्प नहीं दिया होता। इन्होंने ब्रह्म अववोघ के लिए जिस विकल्प को प्रस्तुत किया है वह किसी विधि प्रयोजन का अनुगामी नहीं, बल्कि शब्द, ध्यान और आत्मसाक्षात्कार की विशिष्ट अवचेतना है। प्रयमतः इन्होंने शब्द ब्रह्म अववोद्य की बात कही है जो वेदान्त वाक्य सुनने से होता है, द्वितीय ध्यान एवं उपासना काल का ब्रह्म अवबोध एवं तृतीय ब्रह्मसाक्षात्कार की अवस्था, जिसके द्वारा संकल्प–विकल्प का अस्तित्त्व

समाप्त हो जाता– 'तिस्त्रश्च प्रतिपत्तयो ब्रह्मणि, प्रथमा तावच्छव्दात् अन्याशब्दान्प्रतिपद्य तत्सन्तानवती ध्यानमाविनोपासनादि शब्दवाच्या, अन्त्यातु ततोलब्ध निष्पत्तिविगलितनिखिल विकल्पा साक्षात्करणरूपा।'

आत्मसाक्षात्कार की प्रक्रिया परिकल्पना में इन्होंने प्रत्यक्ष और परोक्षानुभूति के तत्त्वज्ञान को रेखांकित करते हुए लिखा है कि ब्रह्मअववोद्य का प्रथम सोपान शब्द ब्रह्म अववोध परोक्षानुभूति है, क्योंकि इनमें प्रत्यक्षानुभूति नहीं होने के कारण अविद्य। जनित सांसारिक प्रत्यक्ष भ्रम दूर नहीं हो सकता है। प्रत्यक्ष भ्रम उसी समय दूर होगा। जब ब्रह्म की प्रत्पक्षानुभूति हो और इसके लिए उपासना की आवश्यकता है– 'शब्ददेव तस्योत्पत्तेः किमर्थमुपासनादि? उच्येते परोक्ष रूप शब्दज्ञानम् प्रत्यक्ष रूपः प्रपञ्चाभासः...। शब्दे तु प्रमाणाधीनं क्षणिकं ज्ञानम तत्र विषर्ययावकाशः.। तस्माज्जातेऽपि प्रमाणात् तत्त्वदर्शने अनादि मिथ्या दर्शनाभ्यासपरिनिष्पन्नय द्रढ़ीयसः संस्कारस्याभि-भवायोच्छेदाय वा तत्त्वदर्शनाभ्यास मन्यनते। तथा च 'मन्तव्यो निदिध्यासितव्य; इत्युच्यते, शमदमब्रह्मचर्ययज्ञादिसाधन विधानञ्च अन्यथा कतस्तदुप देशार्थः।'

मण्डन मिश्र का मत है कि प्रत्यक्ष ब्रह्म अवबोध के साथ अविद्या का भ्रम नहीं रह सकता है। इसका यह तर्क इसलिए वैज्ञानिक लगता हे कि परोक्ष ब्रह्म अवबोध में ब्रह्म का साक्षात्कार नहीं होने से अविद्या की भौति मन को आत्मा से जुड़ने में शिकार उत्पन्न करता रहता है, इसलिए ध्यान की क्रियाओं में उपासना दृष्टि की आवश्यकता होती है।

इन्होंने ब्रह्म के स्वरूप पर भी अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है–

आनन्दमेक ममृतमार्ज विज्ञानमक्षरम्।
असर्व सर्वभभर्य नमस्यामः प्रजापतिम्।।

अर्थात् ब्रह्म आनन्द एक अमृत जन्म रहित, विज्ञान और अक्षर है, जो सभी जगह व्याप्त होकर अभय है एवं अविद्या के योग में है, उस ब्रह्म को मेरा नमस्कार हैं। 'ब्रह्मसिद्धि' में मण्डन मिश्र ने वेदान्त दर्शन का अनुगमन कर ज्ञान मार्ग के अनुकूल सिद्धांत प्रतिपादित किया है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि 'ब्रह्मसिद्धि' में मीमांसकों द्वारा दिया गया विध्यर्थवादी दृष्टिकोण का खण्डन ब्रह्मज्ञान के उपर्युक्त अवबोध द्वारा किया गया है। इन्होंने कहा है कि जिन विद्वानों ने (प्रभाकर मिश्र आदि)

वस्तुस्वरूप के प्रतिपादन में वेद का तात्पर्य नहीं मानकर विधि क्रिया के अर्थ में ही वेद का तात्पर्य माना है और अपने पक्ष में महर्षि जैमिनी की 'चोदनाअयर्थो लक्ष्णो धर्मः' इस सूत्र को उपस्थापित किया है और कहा है कि चोदना अर्थात विधि और अर्थवाद प्रमाणमूलक अर्थ ही वेदार्थ हैं, इसलिए विधि क्रियायुक्त वाक्यार्थ में ही वेद प्रमाण है, यह असंगत हैं। यद्यपि वेदांत से मूल तत्त्व ब्रह्म का प्रतिपादन होता है, परन्तु सिद्ध वस्तु के प्रतिपादक उस वेदांत वाक्य के समान विधि-क्रियायुक्त ब्रह्म प्रतिपादक वेदांत वाक्य है, उस वाक्य के निष्पादन में ब्रह्म स्वरूप प्रतिपादक वेदान्त वाक्य भी कार्यनिष्ठा का अतिक्रमण नहीं करता है। यदि विधि-क्रियायुक्त वाक्य के प्रतिपादन में ही वेद वाक्य का तात्पर्य है तब मंत्र के अर्थवाद वाक्य एवं उपनिषदों की कैसे प्रामाणिकता हो सकती हैं?

इन्होंने स्पष्ट कहा है कि विधि क्रियायुक्त प्रवर्त्तक वाक्य के अंगीभूत होने पर ही सिद्ध के प्रतिपादक उपनिषदिक वाक्य का प्रामाण्य है। इन्होंने ब्रह्मबोध के लिए जिस प्रत्यक्ष एवं परोक्ष ज्ञान का उल्लेख किया है, उसके आधार पर काह है कि केवल शब्द प्रमाण अर्थात् वेदव्यास से ही ब्रह्मबोधगम्य है। वस्तुतः वेदांत वाक्य से शब्द ज्ञान होता है। वह विधेय अर्थात विधि क्रियामूलक नहीं है। जैसे– कर्मबोधक वाक्य 'स्वर्ग कामोयजेत' अर्थात स्वर्गकाम के लिए यजन करें आदि वाक्यार्थ का ज्ञान उस वाक्य के प्रामाण्य से ही होता है। इनमें अन्य विधि की अपेक्षा नहीं होती है। उसी तरह, आत्मस्वरूप के प्रतिपादक वेदान्त वाक्य के प्रामाण्य से विधि क्रिया की उपेक्षा के बिना ही ब्रह्मज्ञान हो जाता है– 'ब्रह्मणो हि प्रमाणान्तरानाधिगमनीय रूपत्वाच्छब्दाधिगम्य स्वभाव विषय ज्ञान विद्येयम्। तत्र यच्छदादेव ज्ञान तद्विधेयम्, विधिमन्तरेण भावात् कर्मावबौधवत्। यथैव– 'स्वर्गकामोयजेत' इति श्रुतावाक्यस्य वाक्याथविबोधस्त द्वाक्य प्रामाण्या देव भवति, न विध्यन्तरमपेक्षते तथात्मस्वरूपाभिधायिवाक्य, प्रामाण्यादात्मावबोधोत विध्यन पेक्षः सजायते।'

मण्डन मिश्र ने ब्रह्मज्ञान के लिए किसी भी प्रकार की विधि क्रिया की आवश्यकता को ही नकार दिया है। इनके विचार से ज्ञान का फल दृष्ट है। ज्ञान ही ज्ञाता को ज्ञेय तत्त्व का प्रकाश कराता है। यज्ञ के समान ज्ञान का कालान्तर भावी फल नहीं हैं, जिसके लिए विधि क्रिया की आवश्यकता

होगी– 'ज्ञानस्य हि दृष्टिमेव फलम्– ज्ञात्राज्ञेयस्यामि व्याप्तिः, ज्ञातारम्प्रति तस्य प्रकाशतानव दृष्टे कालान्तर भावि यदर्थो विधिःस्यात्।'

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी यह वियार न्यायसंगत है क्योंकि शब्द ज्ञान से बुद्धि और तर्क की जागृति होती है, कार्य क्षमता में विकास के साथ ही कर्म संस्कार को भी समृद्धि होती है इसलिए इसका फल दृष्ट है। लाख विधि-क्रिया करने के बावजूद ज्ञान की स्मृद्धि नहीं होने से सर्वदा कार्यसिद्धि की आशंका बनी ही रहती है, इसलिए ज्ञान के द्वारा फल प्रत्यक्ष होता है। स्पष्ट है कि 'ब्रह्मसिद्धि' में इन्होंने मीमांसा धर्म दर्शन पर आधारित असुर कर्मकाण्ड का खण्डन कर वेदान्त को प्रमाण माना है।

मीमांसकों का मानना है कि वेदान्त वाक्य सर्वथा अप्रामाण्य हैं, क्योंकि किसी प्रमाण से सिद्ध वस्तु का प्रतिपादक ही कोई पद होता है। शब्द प्रमाण से अतिरिक्त किसी प्रमाणों से ब्रह्मसिद्धि नहीं है, इसलिए ब्रह्मबोधक जितने शब्द हैं उनसे ब्रह्म का ज्ञान सम्भव नहीं है। 'ब्रह्मसिद्धि' में मण्डन मिश्र ने मीमांसकों के इस मत को उद्धत करते हुए लिखा है कि– 'नचानाधिगतेषु प्रमाणन्तरेषु पदार्थत्वम्।

अन्य मीमांसको की तरह मण्डन मिश्र को भी मीमांसाक के रूप में प्रदाशित कर 'शङ्कर-दिग्विजय' नाटककार ने मण्डन मिश्र का जो परिचय दिया है, उसे प्रामाणिक कैसे माना जा सकता? अगर 'वेदान्ताः न प्रमाणम्' कहकर मण्डन मिश्र मीमांसाधर्म दर्शन के पक्षधर होते तो 'ब्रह्मसिद्धि' में शङ्कराचार्य की तरह वेदान्त को प्रमाण नही माननेवाले मीमांसकों के मतों का कैसे खण्डन कर रहे हैं? इन्होंने वेदान्त के पक्ष में कहा है कि वेदान्त वाक्यों के द्वारा लोक सिद्ध पदार्था के संसर्ग से संसार के अपूर्व कारण ब्रह्म का भी ज्ञान हो जाता है। इनका अभिमत है कि– 'अथवा न लोकोऽत्यन्तमप्रसिद्ध' ब्रह्म सर्वप्रत्ययवेद्यत्वात् ब्रह्मणो व्यतिरेकण प्रत्येतष्यस्याभावात् विशेष प्रत्ययाना च सामन्य रूपानुगमात, भेदोपसंहारावशिष्ट च सत्य ब्रह्म इति प्रतिपादनात्...।' अर्थात लोक में ब्रह्म अत्यन्त अप्रसिद्धि नहीं है, क्योंकि सभी ज्ञानों में वे ज्ञेय रहते हैं। ब्रह्म से अतिरिक्त ज्ञातव्य वस्तुओं मे भी सभी भेदों का निराकरण करके अवशिष्ट सत्य ब्रह्म से अतिरिक्त ज्ञातव्य वस्तुओं का अभाव है। विशेष ज्ञान में सामान्य ज्ञान अन्तर्निहित रहते हैं। उपनिषद में भी सभी भेदों का निराकरण करके

अवशिष्ट सत्य ब्रह्म का प्रतिपादन किया गया है।

इतना ही नहीं मण्डन मिश्र ने पुरुषार्थ के दृष्टिकोण से भी वेदानत पर विचार किया है, इसलिए कि मीमांसकों ने आरोप लगाया कि वेदान्त वाक्य भी पुरुषार्थ नहीं होने के कारण प्रायः उन्मत्त प्रलाप के समान अप्रमाण है– 'अपुरुषार्थत्वाच्योन्यत प्रलापवद प्रमाणम्; तथा च प्रयोग वेदान्ताः।' इस विषय पर मण्डन मिश्र का अभिमत है कि निश्चित रूप से प्रमाण का फल पुरुषार्थ नहीं है। प्रभा के कारण प्रमाण कहलाते हैं, इसलिए जीव को 'मैं शोकाकुल हूँ', 'दुखी हूँ', 'मेरे धनादि नष्ट हो गये'– इस तरह मिथ्या ज्ञान होते हैं। इस अज्ञानता के निवृत्तिस्वरूप विशुद्ध आनन्द एवं प्रकाशरूप ब्रह्मात्म तत्त्व का ज्ञान है। वह ज्ञान रूप से ही पुरुषार्थ है, क्योंकि ब्रह्म तत्त्व के ज्ञान मे अनिष्ट की निवृत्ति और इष्ट के आविर्भाव होते हैं। यद्यपि शब्द ब्रह्म ज्ञान के बाद भी अविद्या के संस्कार की अनुवृत्ति होती है, तो भी शब्द ब्रह्म ज्ञान का विस्तार होने पर ब्रह्म ज्ञानियों को पहले जैसा शोक एवं दुख आदि नहीं होते है। धीरे-धीरे संस्कार समूल नष्ट हो जाता है। ज्ञान की उत्पत्तिमात्र से कहीं-कहीं पुरुषार्थता देखी जाती है। किसी वस्तु के ज्ञान नहीं रहने पर व्याकुल हुए लोगों को उस वस्तु के ज्ञान से ही पुरुषार्थता की सिद्धि होती है, क्योंकि अज्ञात वस्तु के ज्ञान से अतिरिक्त अन्य वस्तुओं की अभिलाषा नहीं रहती हैं–

'न तावन्नियोगतः प्रमाणस्य पुरुषार्थ फलता।
न खलु हितोपादनाहित हाने एवं प्रमाण फले।
उपेक्षामपि हि प्रमाणफलं प्रमाणविद आचक्षते
न च पुरुषार्थभावेना प्राणाम्यम्। अपि च
'शोक्यहम' 'दुःख्यहम्' धनादीनि सम नष्टानि'
इति विशुद्ध ब्रह्मात्मनो जीवस्य मिथ्या ज्ञानम;

एतान्निवृत्तिरूपं च विशुद्धानन्द प्रकाश ब्रह्मात्म तत्त्वज्ञानम्। तते स्वरूपनैव पुरुषार्थः अनिष्ट निवृत्ति रूपत्वादिष्टा विर्मावाचु। यद्यपि च संस्कारात्तस्यानवृत्तिस्तथापि शब्दज्ञान मनु सनतन्वतो विदुषोण पूर्ववद भवति निवर्ततेचात्यन्ताय। दृष्टा च ज्ञानोत्पत्तेखे पुरुषार्थता क्वचित कुतूहलाकुलितानामज्ञाः तेऽर्थे। नहि तज्ज्ञानात् परमन्य दशर्यये।' 'इति विशद्ध ब्रह्मात्मनो जीवस्य मिथ्या ज्ञानम्' में इनकी स्वीकृति है कि जीव,

विशुद्ध ब्रह्मात्मनो जीवस्थ मिथ्या ज्ञानम्' में इनकी स्वीकृति है कि जीव, विशुद्ध ब्रह्मसमान है, को संसार का मिथ्या ज्ञान होता है जिससे भ्रम की उत्पत्ति होती है और जीव कलुपषित होता है परन्तु शुद्ध ज्ञान हो जाने से जीव मुक्त हो जाता है– मण्डन मिश्र का यह दृष्टिकोण शङ्कराचार्य के दृष्टिकोण से अलग नहीं हैं। जैसे रज्जू में सर्प का आभास होने से भ्रम की स्थिति उत्पन्न होती है और सत्यज्ञान के साथ भ्रम का निवारण हो जाता है, उसी तरह ब्रह्म में अध्यस्त संसार के मिथ्यापन का ज्ञान होने के साथ ही ब्रह्म अस्तित्त्व न सिर्फ शुद्ध-बुद्ध रूप में बल्कि प्रामाणिक रूप में भी दृष्टिगोचर होने लगता है। मिथ्या शब्द अविद्या के लिए ही आया है। स्वर्ग, ऐश्वर्य और भोग की इच्छा सम्पूर्ण दुखों का कारण है। विध्यर्थवादर इन्हीं भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति के लिए ही यागानुष्ठान विधि निर्धारित किया है, जिससे पुरुष की आकांक्षाएँ तृप्त हों। मण्डन मिश्र इस सांसारिक है, जबकि मनुष्य की मृत्यु निश्चय होने के कारण ये सांसारिक कर्म ही मिथ्या प्रमाणित होता है। शङ्कराचार्य की तरह ये भी संसार या जगत को मिथ्या ही मानते हैं। शङ्कराचार्य की तरह ही जीव को ब्रह्म सदा पवित्र और नित्य प्रकाशवान रहता है– 'उक्तमेतज्जीवानामविद्याकलुषितत्त्वन्, न ब्रह्मणःतद्धि सदाविशुद्ध नित्य प्रकाशम्।'

सांसारिक मिथ्या ज्ञान ही अविद्या है। भोग, ऐश्वर्य की लोलुपता एवं सांसारिक भेद का कारण अविद्या ही है। जिस तरह घट या पट का अस्तित्त्व मिट्टी और सूत के कारण होता है एवं घट-पट भेद होते हुए भी मिट्टी एवं सूत में अभेद होता है, उसी तरह इस संसार का भेद मिथ्या ज्ञान के कारण ही होता है। वस्तुतः यह जगत एक ही कारण ब्रह्म से निष्पन्न हैं। इसका रूपांतरण भेद अविद्या के कारण है। अविद्या का अस्तित्त्व अनादि अवश्य है, लेकिन ब्रह्म से अलग नहीं है। कलाकार की कला जिस प्रकार उनकी कला-चेतना से पृथक नहीं है, उसी प्रकार ब्रह्म की शक्ति अविद्या ब्रह्म से अभेद है। जगत के स्वरूप का भेद अविद्या की कलात्मकता है, जो बह्म कारण से निर्दिष्ट होता है। इन्होंने ब्रह्मसिद्धि में जगत का अपूर्व कारण ब्रह्म को कहा है।

वाचस्पति मिश्र भामती टीका में ब्रह्मसूत्र शङ्कर मत के इस विषय की व्याख्या करते लिखा है– 'माया या अविद्या का आधार परमेश्वर हैं।

अविद्या परमेश्वर की शक्ति है, जिसके बिना परमेश्वर जगत के सन्टा नहीं हो सकते।' व्याख्या करते समय लिखते हैं कि– 'जीव का आधार अविद्या निमित्ततया, विषयतया यह माना है कि अविद्या परमेंश्वरधृत है और निमित्तव्या यह माना है कि जीवाधार अविद्या है। इससे स्पष्ट होता है कि वाचस्पति मिश्र ने शङ्कर मत की नवीन व्याख्या कर एक नया दिग्दर्शन किया हैं, जो न तो शङ्कराचार्य के विरूद्ध है और न ही मण्डन मिश्र के दृष्टिकोण के।

प्रो. थ्रसेर ने मण्डन के मत को स्पष्ट किया है कि 'ब्रह्मसिद्धि' में मण्डन ने अविद्या को जगत का भौतिक कारण मानने के साथ ही अविद्या को ब्रह्मसिद्धि' में सांख्या या मीमांसा के अनुसार जगत या सृष्टि के संदर्भ में व्याख्या-विश्लेषण नही करके वेदान्त दृष्टिकोण के अनुसार करते है, इसिलए शङ्कर से इनका मतभेद नहीं होता। जगत उत्पति के कारण सम्बन्ध में मण्डन मिश्र, शङ्कराचार्य एवं वाचस्पति मिश्र में मतैक्य है।

वेदान्त को अप्रमाण माननेवाले मीमांसको को वेदान्त प्रमाण के संदर्भ में जिस तथ्य का उल्लेख किया है, इससे भी यही स्पष्ट होता है कि कारण से अतिरिक्त कार्य की सत्ता नहीं हैं, क्योंकि कार्य का अस्तित्त्व कारण में ही विद्यमान होता है। मण्डज्ञन मिश्र का अभिमत है कि लोक में ब्रह्म अत्यन्त अप्रसिद्ध नहीं हैं, क्योंकि सभी ज्ञानों में वे ज्ञेय हैं। ब्रह्म से अतिरिक्त ज्ञातव्य वस्तुओं का अभाव हैं। विशेष ज्ञान मे सामान्य ज्ञान अन्तनिर्हित रहता है, उसी प्रकार उपनिषदों में सभी भेदों को निराकरण करके अवशिष्टि सत्य ब्रह्म का प्रतिपादन किया गया है। ब्रह्म को समझानें के लिए उपनिषदों के दृष्टान्त वाक्य में कहा गया है कि मिट्टी के घटादि विकार केवल वाणी से ही प्रतीत होते है। कारण रूप मृतिका ही सत्य है– 'अथवा न लोकेऽयन्तमप्रसिद्ध ब्रह्म सर्वप्रत्यवेद्यत्वात्, ब्रह्मणी व्यपिरेकरण प्रत्येतव्यस्याभावात् विशेष प्रत्ययानां च सामान्यरूपानुगमात्, भेदोपसंहाराव शिष्ट च सत्य ब्रह्म इति प्रतिपादनात् वाचास्भणं विकरो नामघेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्...।

अभिप्राय यह कि नामरूप जग का अस्तित्त्व एक मात्र ब्रह्म से हैं, जगत ब्रह्म का कार्यरूप हैं, इसलिए जगत का अस्तित्त्व ब्रह्म से स्वतंत्र हो ही नहीं सकता। ठीक उसी प्रकार जैसे घट का अस्तित्त्व भिट्टी स्वतंत्र नहीं

हैं। घट तो मिट्टी का ही कार्यरूप हैं, इसलिए अस्तित्त्व सत्ता घट का नहीं बल्कि मिट्ट का है। अस्तु, ब्रह्म की जगत का कारण प्रामाण्य हैं। इससे यही प्रमाणित होता है कि कार्यरूप जगत की सत्ता नहीं अपितु कारणरूप ब्रह्म की सत्ता है। चूँकि जगतवादी विचारक किसी ईश्वर की सत्ता को नहीं मानते एवं जगत की उत्पत्ति का कारण 'काम' को ही मानते है अर्थात शुद्ध भौतिकवाद या सकामवाद, मण्डन मिश्र इस द्वैतवादी तांत्रिका धारणा से ऊपर उठकर शुद्ध ब्रह्म की अद्वैत धारणा को ही प्रामाणिक मानकर सत्य की यात्रा करते हैं। यही मण्डन मिश्र की अन्तःयात्रा है। अर्थात् द्वैत से अद्वैत की दिशा में। ऐसी स्थिति में 'शङ्कर-दिग्विजय' के नाटककार कैसे इनके लिए 'स्वतः प्रमाण परतः प्रमाण' के साथ 'जगदधुव्रं स्थात् जगदधुव्र स्यात् की कहानियों को कल्पित किया? प्रत्यक्ष प्रमाणवाद ही स्वतः प्रमाणवाद है जिससे परतः ब्रह्म के सत्ता का बोध होता है अर्थात् जगत से ही परोक्षसत्ता ब्रह्म का अनुमान करते हैं, वस्तुतः इनकी सत्ता प्रमाणित नहीं है, इसलिए जगत ही सत्य और जगत ही असत्य दोनों हैं। ब्रह्म कोई प्रामाणिक पदार्थ नहीं है।

जहाँ तक ब्रह्म की सत्ता का प्रश्न है मण्डन मिश्र ने सप्रमाण इसे बतला दिया है। अतिसुन्दर व्यंग्यमूलक प्रमाण के द्वारा ये प्रत्यक्ष प्रमाणाद की आलोचना करते दीखते हैं। शंखपाणि की व्याख्या में इसे देखा जा सकता है– 'असम्भव दोषाशाङ्कस्याम्नायस्य सम्भवद्दोषेभ्यः प्रत्यक्षादिभ्यो वलीयस्त्वंयुक्तमित्यर्थः।'

अर्थात प्रत्यक्षादि प्रमाणों में दोष की सम्भावना हो सकती है, किन्तु वेद में दोष की सम्भावना नहीं है। यहाँ शंखापाणि की उक्ति यथार्थ जँचता है, क्योंकि प्रत्यक्ष दृष्टि को सम्भावना नहीं है। यहाँ शंखपाणि की उक्ति यथार्थ जँचता है, क्योंकि प्रत्यक्ष दृष्टि में चन्द्रमा कटोरे जैसा लगता है तथा प्रत्थर को निर्जीव माना जाता है, जबकि शास्त्र प्रमाण ऐसा नहीं कहता। शास्त्र प्रमाण के अनुसार चाँद पृथ्वी का उपग्रह हैं, जिसका रूप विस्तृत है, इसी तरह पत्थर निर्जीव ही नहीं बल्कि सजीव भी होता है।

मण्डन मिश्र ने इस तथ्य का उद्घाटन करते हुए प्रत्यक्ष प्रमाणवाद पर करार प्रहार किया है कि आवश्यक नहीं कि प्रत्यक्ष पदार्थ स्वतः प्रमाणित हो। यहाँ इन्होंने वेदान्त को ही पूर्णत्य मानकर कहा है कि जिस तरह विशषे

में समान्य का अस्तित्त्व छिपा होता है उसी तरह उपनिषद सभी भेदों का निराकरण करके अवशिष्ट सत्यब्रह्म का प्रतिपादन करता है अर्थात् उपनिष्द विशेष है जिसमें सामान्य का अस्तित्त्व स्वयं....है। अस्तु, एक तरह से प्रत्यक्ष प्रमाणवाद का मण्डन मिश्र खण्डन ही कर रहे होते है तथा इस आधार पर भौतिकवादी कर्मकाण्ड की वैधानिकता को अनावश्यक कह डालते हैं।

मण्डन मिश्र की अन्तःयात्रा जगतवद से लेकर ब्रह्मवाद तक का हैं। माधवाचार्यकृत 'शङ्कर-दिग्विजय' के दार्शनिक' के दार्शनिक मतभेद का 'ब्रह्मासिद्धि' पुस्तक मिल जाने से खण्डन हो जाता है एवं माधवाचार्यकृत नाटक, ऐतिहासिक शास्त्रार्थ का प्रमाण, सिद्ध नहीं हो पाता हैं।

मण्डन-सुरेश्वरयो भिन्नत्वम्

—डॉ. वैद्यनाथ झा

(मण्डन मिश्र आ सुरेश्वराचार्य दुनू दू विद्वान छलाह— से पूर्वहुँ कहल गेल अछि। विद्वत्-मण्डली मे ई विषय पर्याप्त वहस केर उद्रेक केलक अछि। एहू सँ ई तथ्य ऐतिहासिक प्रमाणित होइछ जे शङ्कराचार्य आ सुरेश्वरचार्यक शास्त्रार्थ भेल छल हैत शङ्कराचार्य आ मण्डनक नहि। वस्तुतः मण्डन-शङ्करक शास्त्रार्थक दन्तकथा रचले गेल छल; शङ्करक 'सिन्कदर-विजय' आ मिथिलाक सांस्कृतिक आ दार्शनिक अद्यःपतन देखबैत मण्डन-भारती केँ शिष्य-मुद्रा(वस्तुतः सांस्कृतिक दास मुद्रा) मे चित्रण हेतु। मुदा आइ जखन कि मिथिलाक ओहि समयक दार्शनिक-ऐश्वर्य, मण्डनक माध्यमे, प्रमाणित भऽ गेल अछिः मण्डन आ सुरेश्वरचार्यक व्यक्तित्वक फराक अस्तित्त्व प्रमाणित भेला सँ अदौकालीन दुष्टभावक दन्तकथाक परम्परा आब एत' समाप्त होइए आ तार्किक इतिहास स्थापना पबैत अछि। एक बेर फेर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुरक, पूर्व आचार्य (संस्कृत विभाग) डॉ. वैद्यनाथ झा अपन धन्य-लेखनी सँ ओहि तथ्यक पुनस्थापना क' रहल छथि— संस्कृत भाषा मे।—सम्पादक)

मिथिला-मही-मण्डनभूतस्य मण्डन मिश्रस्य निवासः मिथिलाया 'महिषी' ग्रामे समासीत्। अस्य प्राचीन संस्कृत नाम 'माहिष्मती' इत्यस्ति। अर्य च बिहार-राज्ये 'सहरसा' मण्डले 'धर्ममूला' (धेमुरा) नदी-समीपे विद्यते। मिश्र महादयस्य वासभूमि- समीपे एव भगवत्याः श्री उग्रतारायाः प्रसिद्ध' मन्दिरमस्ति। एको विद्यालयश्च तत्रैव आचार्य मिश्रानाम्ना प्रचलति, यः सर्वकारीकृतोऽस्ति। बिहार-सर्वकारेण मिश्रमहोदयस्य भूमिरियं प्रमाणीकृतास्ति। एको महाविद्यालयोऽपि किचिद् दक्षिणभागे प्रचलति। अति प्रसिद्धः आचार्य बलदेव उपाध्ययोऽपि स्वकीये 'भारतीय दर्शन' ग्रन्थे(पृष्ठ-311)*

.....

* 'मण्डन मिश्र मैथिली ब्राह्मण थे तथा माहिष्मती (वर्त्तमान 'महिषी' ग्राम, जिला-सहरसा, बिहार के निवासी थे।'

मिश्र महोदयस्य 'महिषी' ग्रामे निवास स्पष्टतया समुक्तिस्वति।

तअएव मिश्रपादस्वात्र ग्रामे निवासे न कोऽपि सन्देहो विधेलिमः। अत्रान्यदपि मतमस्ति—

* मण्डन मिश्रस्य निवासो नर्मदातटे मध्यप्रदेश आसीदिति एक मत्। मण्डन मिश्रस्य निवासः मण्डलाया महेश्वरे वाऽसीत् प्राचीन माहिष्मत्या इदमेवाधुनिक नामेति मतमपरम्। काश्मीरे 'विजुलबिन्दु' नामके स्थानेऽस्य निवास- इति तृतीयं मतम्

समेषामेषां मतानां निराकरण' 'मण्डन-मिश्र-श्रद्धा-कुसुमाञ्जलि' नामकस्य रचग्रन्थयस्य 'भारतीय दर्शन' ग्रन्थे, उपरि कथितं स्पष्टप्रतिपादनमेव समवलम्व्य स्वमतं स्थिरीकरणयम्।

मिश्र महोदस्य 'महिषी' ग्रामे, एकसमाद वृद्धविदुषः समुलब्धे तत्परिचया—हमके श्लोकेऽपि माहिष्मत्याः समस्ति समुल्लेखः—

'यस्याःपुरो राजति धर्ममूला, यत्रास्ति तारा भुनवस्य सारा।

प्रक्षालितौ तच्चरणो च यत्र, माहिष्मति मण्डन-मण्डिता सा।।

अति विवादास्पदीभूतत्त्वाद मण्डन-मिश्र-निवास ग्राम-चर्चे-वादाविहोपन्यस्ता। प्राचीनानां प्रायः समेषां विदुषामियमस्ति परिपाटी यदिमे रचग्रंथेष्वात्मपरिचय प्रदाने मौनमेवावलम्बन्ते; यतसते स्वपरिचय प्रदाने आत्मश्लाघां मन्यन्ते स्म। परिणाम तश्चैषां जनमस्वानादिविषये समुपलभ्यते महान् विवादोऽद्यत्वे। अतएव प्रातः स्मरणी-याना मिथिला-मही-मण्डाना मण्डन मिश्राणां सर्वथाऽसत्यस्य कथानकस्य प्रचलनमपि न खल्वाश्चयाजनकम्।

माधवाचार्यस्य 'शङ्कर दिग्विजय' ग्रन्थानुसारम्— 'प्रयागरजे तुषानले स्वदेह दाहयन् सवर्तन्त्र— रचतन्त्रों विद्वान् आचार्य कुमारिल भट्टः शङ्कराचार्येण स्वभाष्ये वार्तिकनिर्माणर्थ प्रार्थित— 'भाष्येऽपि मे रचय वार्तिकमङ्ग! भव्यम्।' इति शब्देन। (शङ्कर दिग्विजय-7/107)

किन्तु भट्ट महोदयः दृग्धप्रायाङ्गत्वेन*सर्वथाऽसमर्थ; सन् दिगन्तविख्यात कीर्ति 'माहिष्मती' ग्रामवासिन सकल शास्त्रनिष्णातमन्तर.. स्वशिषयं मण्डन मिश्र प्रति तत्कार्पसिद्धये तमाचार्य शङ्कर प्रैषयत्। तेनैव रचभाष्ये वार्तिक निर्मायणीव मित्यपि तपन्ववोधयत् * । ततः स्तदनुसार स शङ्करः 'माहिष्मती' (महिषी) ग्राममुपेत्य तत्र।*

.....

* डॉ. रामप्रकाश शर्मा ने भी अपने मिथिला का इतिहासँ ग्रन्थ में मण्डन मिश्र का जन्म स्थान 'महिषी' गाँव में बतलाया है।

* 'मण्डन मिश्र का जन्म स्थान बिहार राज्य के सहरसा जिले का प्राचीन माहिष्मती(वर्त्तमान 'महिषी') ग्राम था।' (पृष्ठ-518)

* 'घूमायमानेन तुषानलेन सनदत्यमानेऽपि वपुष्यशेषे...।' (शङ्कर दिग्विजय-7/78)

* 'तेनैव तावककृतिष्वपि वार्तिकानि कर्मन्दिवर्यतम! कारय, मा विलम्बम्
(शं दि.- 7/118)

परम् शङ्कराचार्यमते 'तत्त्वमसिँ, 'अहँ ब्रह्मास्मि' इत्यादि वेदान्तवाक्यादेव प्रत्यक्षो ब्रह्मबोधः संजायते, अनेनैब च वास्तविक ब्रह्मबोधेन अविद्याजनितो भ्रमोऽपाक्रियते ।

शङ्कर सिद्धान्तममु विशदयन् सुरेश्वरः, वृहदारण्यकभाष्यवार्तिकेनैष्कर्म्यसिद्धी च मण्डनमतं क्रमशः 'पण्डितम्मन्य' 'सम्प्रदायानुसारतः' 'स्वसप्रदायबलावष्टम्भात्'– इति शब्दैः खण्डयति। तथा च वृहदारण्यकभाष्यवार्तिके–

अन्ये तु पण्डितमन्याः सम्प्रदायानृसारतः।
विज्ञायेति वचः श्रौतमिदं व्याचक्षतेऽन्यथा।।

नहिष्कर्म्यसिद्धि–

'एवमुपसंहृते केचित् स्वसम्प्रदाय– बलावष्टभ्भादाहु...।'

इह हि ग्रन्थद्वये प्रतिपक्षिणं प्रत्येव प्रयोक्तुमुचितेन पण्डितमन्यादि शब्देन मण्डन मिश्रस्य खण्डन क्रियते सुरेश्वरेण-इति हेतोः नैतयोरेकत्वकथनं कबंचिद्प्यौचित्यमञ्चति।

('पण्डितम्मन्य' शब्दस्य प्रयोगो विरोधिनं प्रत्येव क्रियते तत्र भवद्विराचार्येरिति निश्चप्रचम्। अतएव सुविख्यात नहियायिकेन जयनतभट्टेनापि ध्वनिनिराकरणे–

'एतेन शब्दसामर्थ्यमहिम्ना सोऽपि वारितः।
यमन्यः पण्डितम्मन्यः प्रपेदे कंचन ध्वनिम्।।' (न्यायमञ्जरी, पृ. -45)

इति विरोधिनं ध्वनिवादिनं प्रति 'पण्डितम्मन्य' शब्दस्य प्रयोगः कृतः।)

अत्र 'अन्येतु पण्डितम्मन्याः' इति प्रतीकमुपादाय ख्याताचार्यः आनन्दगिरिः 'मण्डनस्य मतमुत्थाप्य वार्तिकेऽस्मिन् तन्मतं निरस्यति।' इति व्यक्तमाह। तदेवं मण्डन-सुरेश्वरयोः सिद्धान्तभेदःरिध्यति।

यद्यपि म.म. अनन्तकृष्णशास्त्रिमहोदयः एतस्य अन्यथा समर्थन प्रदर्शयति, तथापि तत्र स्फुटार्थप्रतिपादकस्य वचनस्य अन्यथ व्याख्यान तदाऽऽग्रहमेव सम्यक् सूचयति। एवमेव म.म. कुप्पुस्वामिशास्त्रि-प्राध्यापक हिरियण्णा महोदयादयः।

यदि मण्डन मिश्र एवं सन्यासावस्थायां सुरेश्वराचार्यनाम्ना प्रसिद्ध सन् गुरोराचार्यशङ्करस्याऽेशानुसार (सुरेश्वराचार्य नाम्ना) प्रणीमे ग्रन्थे पूर्वाश्रम(गृहस्थाश्रम) मत साक्षेपं खण्डितवानिति दुराग्रहवशात् स्वीक्रियते, तथापि एकः प्रश्नः सर्वथाऽ समाहित एवावशिष्यते यत्–

.....

* तथा च शङ्कराचार्यः–

'शब्दशक्तेरचिन्त्यत्वात् शब्दादेवापरोक्षधीः।
प्रसुप्तः पुरुषोयद्वद् शब्दे नैवावबुध्यते।।.।। (उपदेशसाहत्री)

* वृहदारण्यकभाष्यवार्तिकम्, पृष्ठ– 1852(आनन्दाश्रम संस्कृत सिरीज)

* नहिष्कर्म्यसिद्धिः, 1 अध्या(66 कारिकाव्याख्यानम्)

सर्वदर्शन-मर्मज्ञ-शिरोमणिः 'वाचस्पति' सदृशो वाचस्पति मिश्रः भामत्या शङ्कराचार्यमभोपपादन प्रसंगे भगवतः शङ्कराचार्यस्य ख्यातशिष्याणां सुरेश्वर-पद्मपादादीनां इति। यथा–

(छ) मण्डन मिश्रः स्व 'ब्रह्मसिद्धि' ग्रन्थे जीवमेव अविद्याया आधारमामनुते, न तु ब्रह्म। अयं हि तदीयो ग्रन्थ– 'यत्तु कस्याविद्येति, जीवानामिति ब्रूमः।... उक्तभेतद् जीवानामविद्याकलुषितत्त्वम्, न ब्रह्मणः, तद्धि सदा विशुद्धनित्यप्रकाशम्।'

अयमस्य सारभूतोऽर्थः– जीवः अविद्याया आश्रयभूततया कलुपितो भवति, ब्रह्म पर न जात्वविद्यया भवति कलुपितं, तद्धि सर्वथा निर्मेलं नित्यप्रकाश चास्तीति।

शङ्कराचार्यमते अविद्याया आश्रयः ब्रह्मैवास्ति, मायासंवलिताद् ब्रह्मण एवं निखिल जगदिदं जायते। अत्रार्ये–

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि

जीवन्ति, यत् प्रयन्त्यभि संविशन्ति।

इति श्रुतिः 'जन्माद्यस्य यतः' इति वेदान्तसूत्र च प्रमाणम्।

इर्य हि अविद्या परमेश्वरस्य (मायोपाधिक ब्रह्मणः। एका विलक्षण शक्तिरस्ति, तयैव स खलु जगदिदं निर्माति–

अविद्यात्मिका हि बीजशक्तिकव्यक्तशब्दनिर्देश्या परमेश्वराश्रया...

न हि तथा विना परमेश्वरस्य त्रष्टृत्वं सिध्यति।

समर्च्चचरणा वाचस्पतिचरणाः किल शङ्करभाष्यस्यास्य नाक्षरानुकूलमर्थ' विदद्यते, अपितु मण्डनतानुसारमेव कुर्वन्ति व्याख्यानम्–'जीवाधिकरणाप्यविद्या निमित्ततया विषयतया चेश्वरमाश्रयत इतीश्वरराश्रयेत्युच्धते, न त्वाधारतया; विद्यास्वभावे ब्रह्मणि तदनुपपत्तेः।' (ब्रह्मसूत्रे 1/4/3 शङ्करभाष्यस्य भामती)

(अर्यहि सरार्थः– अविद्याया आधारो जीव एवास्ति, किन्तु जीवस्याविद्याया विषय ईश्वरोऽतीत्यविद्या विषयतासम्बन्धेन ईश्वरे तिष्ठति, अतएव शङ्कराचार्येण परमेश्वरः(मायोपाधिकं ब्रह्म) अविद्याया आधारः प्रतिपादित इति।)

अत्र तत्र भवन्तो वाचस्पति मिश्राः कीदृर्शन कौशलेन शङ्करमतस्य मण्डनामतानुसारेण व्याख्यां विदधनीति विभावनीर्य विज्ञैः।

यत एव वाचस्पति मिश्रः शङ्करभाष्यस्य मण्डनमतानुसारि व्याख्यान व्यधत्त, अतएव शङ्कराचार्यानुयायिनः वाचस्पतिमिश्रस्य कटुशब्दैरालोचना कृतवन्तः।

.....

* ब्रह्मसिद्धिः(ब्रह्मकाण्डः), पृष्ठ-10 'नाविद्या ब्रह्मणः स्वभावः, पृष्ठ-9।

* 1/4/3 ब्रह्मसूत्रस्य शङ्करभाष्यम्।

तेषामालोचनावाक्यनि वेदान्तकल्पतरू टीकयां सन्त्युद्धृतानि । आलोचनाना प्रत्यालोचनावाक्यान्यपि तत्रैव सन्ति।

.....

अमलानन्द सरस्वती महोदयेन 'वेदान्तकल्पतरू' समाख्यायां भामत्याष्टीकार्य तेषामालोचनावाक्यनि संगृहीतानि–

(क) ईक्षितुः परामेशस्य वाचस्पतिमुखोद्गतेः।
निजुह्वे परेशानमसवित्यति साहसम्।।

(भामती-वेदान्त कल्पतरू-कल्पतरू परिमल-सहित-सहित शांभा-

1/3/30,क, पृष्ठ-334)

(ख) जीवाद्जजे जगत्सर्व सकारणमिति ब्रुवचन।

क्षिपन् समन्वये जीवे, न लेजेवाक्य तिः कथम्?।।(वे. कल्पत 1/4/16, पृ,-482)

(ग) जीवभ्रान्त्या पर ब्रह्म जगद्बीजमतूबुषत्।

वाचस्पतिः परेशस्य लीलासूत्रमलूपुत्।

प्रायः एतानेव दुरालोचकानभिकक्ष्य स्वयमपि वाचस्पति मिश्र महोदयः—

'नाभ्यर्थ्या इह सन्तः स्वयं प्रवृत्ताः, न चेतरे शक्याः।

मत्सर-पित्त-निबन्धन मचिकित्स्यमरोचक येषाम्।।(भामती 4/1/1, पृ.- 928)

इति श्लोके मत्सरतारूपत्तिरोगेन अचिकित्स्यारूचियुक्तानां दुर्जनाना भामती- ग्रन्थे प्रवर्त्तनमशक्य भित्याह।

पश्चात् कल्पतरूटीकाकारः वाचस्पतेरालोचकानमेषां प्रत्यालोचनमपि चकार।

तत्प्रत्यात्योचनं च कल्पतरूटीकायां श्लोकात्मक मेवमुपलभ्यते—

(क) जीवस्थाया अविद्याया विषय ब्रह्म शुक्तिवत्।

ऊचे वाचस्पतिर्भाष्यश्रुत्योर्ह दयवेदिता।(वेदान्त कल्पतः 1/4/10, पृष्ठ-389)

(ख) स्वशक्त्या नटवद् ब्रह्म कारण शङ्करोऽब्रवीत्।

जीवभ्रान्ति निमित्त तद् वभाषे भामती-पतिः।।

अज्ञातं नटवद् ब्रह्म कारणं शङ्करोऽब्रवीत्।

जीवाज्ञातं जगद्बीजं जगो वाचस्पतिस्तथा।।(वे. कल्पत 2/4/19, पृ-471)

(ग) अज्ञत्वभ्रान्तता-दोषाद क्षत् परमेश्वरम्।

एतद्भाष्यार्थतत्त्वज्ञो वाचस्पतिरगाधधीः।। (वे. कल्पत, 12/22, पृ-258)

(घ) जगत्कर्तृत्वमन्यत्र ब्रह्मणो नेति दुष्यति।

वाचस्पतावुपालम्भमनालोच्यो चिरे परे।।(वे कल्पत 1/4/16, पृ-404)

एभिः प्रत्यालोचनावाक्यैः वाचस्पतेरगाधपण्डित्योद्घाटनेन शङ्कर-वाचस्पत्योः सामञ्जस्योपपादनेन च प्रसन्नः कल्परूकारः—

'मत्पपित्त निदानां विदुषामरूचि चिकित्सति प्रवलाम्।

स्वगुणगुणामृतवर्षो, भामती सम्बन्धो मत्सरतारूपपित्तदोषजन्य-प्रबलारूचि युक्ताना विदुषा।

कर्णेषु गता व्याख्येयममृतर्बणन चारू चिकित्सा करोति-इति स्ववाद्गार-प्रकटयति।

एतावता प्रतीयते यद् वाचस्पति मिश्र समये शङ्कराचार्यशिष्याणां सुरेश्वरपद्मपादादीनामाचार्यणां मतं नैवासीद् मिथिलाया प्रचलितम्, अपितु मण्डन मिश्र मतमेव सर्वत्र मिथिलायां समाद्रियते स्म। अतएव वाचस्पतिमिश्रः शङ्करभाष्यस्य उत्तरभारतंऽपि प्रसिद्धयर्थः (शङ्करभाष्यस्यी मण्डनानुसारि व्याख्याने सादर प्रावर्ततेति।

एतेन मण्डन मिश्रः संन्यासग्रहण नैवाकरोदित्यप्पवराम्यते। यदि च मण्डन मिश्र एवं संन्यासग्रहणानन्तरं सुरेश्वराचार्यनाम्ना स्वपूवश्रिम(गृहस्थाश्रम) मतखण्डन-मकरिष्मत्, तदा न जातु वाचस्पति मिश्रः पूर्वदशितं शङ्करभाष्यस्य मण्डनमिश्र-मत खण्डन संगतिमासादयेत्? खण्डितस्य हि खण्डन मृतस्य हननमिव सर्वथा भवति व्यर्थम्!

वस्तुतस्तु शङ्कर-मण्डनयोः शास्त्रार्थः, तत्र मण्डनस्य पराजयः, संन्यासग्रहणं सुरेश्वराचार्यनाम्ना प्रख्यतिश्चेति मुख्यतया माधवविरचित शङ्करदिग्विजय-ग्रन्थ बलेनैव लोकैरवगम्यते, यतोऽयं श्रद्धेयोऽ प्रामाणिकश्च; शिष्टाग्रमप्ययोरशिष्टतमशब्दप्रयोगात्, इतिहासविरोधाञ्च। तथाहि—

(ज)इतिहास विरोधः—

1. अत्र 'शङ्करदिग्विजय' ग्रन्थे शिष्टशिरोमण्योः शङ्करमण्डनयोरतितामामशिष्ट शब्दैः परस्परं प्रयोगे वर्णितोऽस्ति।

2. प्रसिद्ध इतिहासकराः समालेचकाश्च मण्डन-सुरश्वरयोरेकस्यं नैव स्वीकुर्वन्ति। डॉ. पी.बी. काणे, डॉ. गंगानाथ झा, डॉ. एस. दास गुप्त प्रभृतयोः इतिहासममज्ञा विद्वांस मण्डन-सुरेश्वरयोः महान्तलं मन्वते।

किचास्मिन् ग्रन्थे 15 सर्गं परवर्तिनामपि सुप्रसिद्धनां हर्षो-दयनाभिनवगुप्त आकाशे उड्डयनम्, मृतस्य राज्ञः अमरूकस्य शरीरे शङ्करस्य प्रवेशः (9/104), पर्वत, गुहायाम् अनिज्वलिते स्वशरीरे शङ्करस्य

प्रवेशः (10/58); आज्ञामन्तरेणी मण्डनगृहप्राङ् गणे शङ्करस्य तस्करवत् प्रवेशः (8/9), शङ्कर मण्डन-शास्त्रार्थ श्रोतु ब्रह्मादीनामपि देवानां स्व स्वविमानमारूह्य आकाशे समुपस्थितिः 8/69; तत्र भवतः शङ्करस्थ स्वागतार्थ देवै दुन्दुभीवादन कृतम् (16/91)– इत्यादिभिरितिहासविरूद्धैरतिरञ्जि-तैश्च वर्णनैः ग्रन्थोऽयमप्रामाणिको मन्यत डॉ. कीय महोदयेन।

3. ब्यूलर महोदयोऽपि– माधवाचार्यस्य शङ्करदिग्विजयग्रन्थोऽमैतिहासकिकदुष्ट्या न लिखितः। अयमपि शङ्कराचार्यस्य केवल दिगन्तव्याप्तकीर्ति वर्णयति। अत एवास्मिन् वर्णिता सर्वा घटनापि न सत्यभूता।' – इति ग्रन्थस्यास्याप्रामाणिकत्व मुद्घोषयति।

.....

पी.बी.काणे 'धर्मशास्त्र का इतिहासँ पृष्ठ-263; 'मीमांसा दर्शनम्' पृष्ठ-183।
डॉ. ए दस गुप्तस्य 'हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलॉसोफी', भाग-2, पृष्ट-85।
आचार्य बलदेव उपाध्याय कृत– संस्कृत सुकवि समीक्षा', पृष्ठ-200।

4. 'भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें' इतिग्रन्थस्य लेखकः श्री नागशे ओक महोदयोऽपि माधवाचार्यरचितं ग्रन्थममु सर्वथाऽ विश्वसनीय मनुते स्वग्रन्थे (पृष्ठ- 219-220)।

5. संस्कृत साहित्येतिहासस्य सुविख्यात लेखकः आचार्य बलदेव उपाध्याय महोदयोऽपि शङ्करदिग्विजय ग्रन्थस्य भूमिकायामस्य प्रामाणिकत्व नाङ्गीकरोति।

(शङ्करदिग्विजय-हिन्दी भूमिका, पृष्ठ-8, 50-51)

तदेवं शिष्टसम्प्रदायस्य इतिहासस्य च विरूद्धत्वादतिशयोक्तिपूर्णत्वाच्च ग्रन्थ- स्थास्य प्रामाणिकत्वं सर्वथा व्याहन्यते।

सर्वतन्त्र-स्वतन्त्रस्य तत्र भवतोः मण्डन मिश्रस्य शास्त्रविचारे महदस्ति स्वातन्व्यम्। स हि ग्रन्थे स्वतन्त्ररूपेण स्वत्विारमुपस्थापयति, न किल कस्याप्यनुवर्त्तन करोति। शङ्करभाष्यस्यैकापि पंक्तिः प्रमाणरूपेण नैवोरद्धृता तेन। एतेन व्यक्तिमिदमव-गम्यते यदर्सो मण्डन मिश्रः वस्तुतः शङ्करप्रतिद्वन्दी न्यायमन्जर्या च द्रष्टव्या। तदेव मण्डनसुरेश्वरयोरभिन्नत्वे प्रमाण नैवोपलभ्यते– इति विख्याताः स्व. डॉ महाप्रभुलाला गोस्वामि-महाशयाः।

आलेचनयाऽ नया नूनभवगम्यते यद् मण्डन मिश्रः सुरेश्वराचार्यादन्य

एवं। एष च महामीमांसकः सन्नपि शङ्कराचार्यसदृशः अद्वैतवेदान्-ती समासीत्। परमनयोर्नास्ति श्चासीत्। शङ्करशिष्याणां सुरेश्वर-पद्मपादादीनामाचार्यणां सुरेश्वर-पद्मपादादीनामाचार्याणां मतं नैवासीद् मिथिलायां प्रसिद्धम्। अतएव वाचस्पतिमिश्र महाशयः शङ्करभाष्यस्य मण्डन मिश्र मतानुकूलम्करोद् व्याख्यानमिति। एतन्मण्डनानुकूल व्याख्यानानन्तर सुरेश्वरपद्मपाद प्रभृति शङ्करशिष्यानुयायायिनां संन्यासिनामाचार्यणां मतेन समुत्पन्न विरोध शङ्करसिद्धान्तस्य प्रस्थानद्वयं संजातम्— विवरणप्रस्थानं भामतीप्रस्थानं चेति। अत्राधे प्रस्थाने शुद्ध शङ्कर विचारधारा प्रवहति। द्वितीये भामती प्रस्थाने च शङ्कर- मण्डनमिश्रिताऽस्ति विचारधार। तदिदं मण्डनमिश्रमतेन शङ्कराचार्यमतस्य वाचस्पति मिश्रकृतं संमिश्रण 'भामती-प्रस्थान' नाम्नाऽद्यापि लब्धप्रसरम्।

तदिदं शङ्करप्रस्थाना मण्डन प्रस्थानस्य भिन्नंत्र सर्वज्ञात्मनुनि 'संक्षेप-शरीरके' व्यक्तममिहित्—

'...नेतव्यं परिहृत्य मण्डनवचस्तद्वयन्यथा प्रस्थितम्।'

एवमेव विश्ववेदकृत सिद्धान्तदीपे'—

'मण्डन मिश्रस्य तु प्रस्थानान्तरत्वात् तदीयं वचो यथाश्रुमेवास्तु।'

वेदानन्द कृत सम्बन्धोक्तिटीकायामपि—

.....

मण्डन मिश्र कृत 'ब्रह्मसिद्धि'— भूमिका, पृष्ठ- 1(50)

मण्डन मिश्र कृत 'ब्रह्मासिद्धि'— भूमिका पृष्ठ- 4(55)

'अयमेव न्यायी वार्तिकदिषु नेतव्यः, परिहृत्य

मण्डनवच, तस्यान्यथा प्रस्थितन्वात्।'

एवमेव मण्डन-सुरेश्वरयोः पार्थक्यं (सुरेश्वर-विश्वरूषयोश्चैक्यं च) चित्सुखाचार्य कृत तत्त्वप्रदीपिकायाः 'नयनप्रसादिनी'ति व्याख्यायाः, आनन्दानुभांवाचार्य कृत न्यायरत्नदीपांवल्या श्चोल्लेखेन स्पष्टी भवति। तथाचनन्दानुभवाचार्यः—

'किच प्रसिद्धप्रभावैः विश्वरूप-प्रभाकर-मण्डन-वाचस्पति-सुचरित मिश्रैः शिष्टाग्रणीभिः परिगृहीतस्य कवं द्वैषमोहाम्य विनाऽपकापसंभवः?—

अत्र हि न्यायरत्न दीपादल्यां विश्वरूपात् स्पष्ट पृथगेव मण्डनस्योल्लेखेन मण्डन-विश्वरूपयोः पार्थक्यं सिध्यति। एवं च— 'विश्वरूपापरनामा मण्डन मिश्र एवं संन्यासावस्थायों सुरेश्वरनाम्ना प्रसिद्धः— इति शङ्करदिग्विजयादीनां

कथन कपोल कल्पिततया केवल गलगर्जितमबगन्तव्यम्।

किच शङ्कर-मण्डनयोः पश्चाद्, वाचस्पतेश्च पूर्व विद्यमानः नालन्दा विश्वविद्यालये दर्शनाध्यक्षः महान् बौद्ध-दार्शनिकः शन्तिरक्षितः स्वग्रन्थे विरोधिदार्शनिक-मत-खण्डनप्रसंगे शङ्कराचार्यमतस्य न खलु खण्डनम् करोत्। तेन शङ्कर मण्डनयोः शास्त्रार्थः, तत्र च विजयी शङ्करो नाभूदिति सिध्यति। यदि च शङ्करः मिथिलाप्रभृतिप्रदेशेषु मण्डनोदयनादीन् पराजित्य विजयी किलाभविष्यत्, तदा शान्तिरक्षितः प्रधानत्त्वात् शङ्करमतस्य खण्डन नूनमकरिष्यत्।

(झ) स्मृति विरोध-परम्पराविरौधी—

मिथिला-परम्परानुसारमपि मण्डन मिश्रस्य संन्यासग्रहणं न सिध्यति। मिथिलाया हि संन्यासिनः कर्मविहीनो ज्ञानमार्गोन कदप्याद्रियते। अत्र निष्कामभावेन (फलाभिलाषरहितं) स्वाऽऽश्रमोचितकर्त्तव्यपरिपालनमेव परम्परा-परिप्राप्तम्, न तु संन्यासग्रहणम्। यतः संन्यासग्रणम्—

'अश्वालम्भं गवालम्भं संन्यास पलपैतृकम्।
देवराच्च सुतोत्पर्त्ति कलौ पञ्च विवजैयेत्।।

.....

मण्डन मिश्र विरचित 'ब्रह्मासिद्ध'— भूमिका, 4(55)
मण्डन मिश्र रचित 'ब्रह्मासिद्धि'—भूमिका, पृष्ठ (51)
(नयन प्रसादिनी पृष्ठ-33, न्यारत्न दीपावली पृष्ठ-153)

महापण्डित राहुल सांकृत्पायन-प्रणीतं 'बौद्ध धर्म का उत्थान और पतन' इतिनामर्क लघुकाय पुस्तकम्; उद्धृतं महमेतच्च पण्डितप्रवर री सहदेव झा महोदयेन 'वाचस्पति 'विशेषाङ्के (1885 शाके, 1962 ई, पृष्ठ-225) 'न्याय और वेदान्त दर्शन में वाचस्पति का स्थान' इति निबन्धे।

एवमेव लिखितम् इतिहास-विशेषज्ञेन प्रो. राधाकृष्ण चौधरी महाशयेनापि 'प्राचीन भारत का राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहासँ इत्यारण्ये वृहत्पुस्के, पृष्ठ-162।

इति व्यास-देवलस्मृत्या कलियुग निषद्धत्वात् मिथिला-परम्पराविरूद्धम्। 'यतिधर्मसंग्रह' ग्रन्थानुसारमपित कलौ संन्यासी निषिद्धोऽस्ति ।

कि च मिथिलायां सर्वोऽपि व्यवहारः स्मृतिग्रन्थानुकूल एवं प्रचलति। प्रातरा रम्य साय पर्यन्तं, सार्यकालमारम्य प्रातः पर्यन्त च विषीयमाना निखिलाःक्रियाः स्मृतिप्रतिपादितपथेनैव भवन्ति। अतएव स्मृतीनां परस्परं

विरोधे समुत्पन्ने मिथिला-व्यवहार एवं धर्मस्य निर्णायको मन्यते–

धर्मस्य निर्णयों ज्ञेयो मिथिला-व्यवहारतः।'(वृहदारण्यक याज्ञवल्क्य)

एतादृशमेव 'धर्मस्य तत्त्वं विज्ञेयं मिथिलाव्यवहारतः।' इति वचनं 'स्मृतिसंग्रह' ग्रन्थेऽपुपलभ्यते।

एवं च स्मृती निषिद्धं कलियुगे संन्यासग्रहण कथकार मैथिल विद्वन्मण्डनेन तत्र भवता मण्डन मिश्रेण स्वीकृत शक्येत? मिथिलायां संन्यासग्रहणस्य परम्परापि नोपलभ्यते; यतः पूज्यपाद मण्डन मिश्रात् पूर्वतनेषु जनक-यात्रा वल्क्य-गौतम-शतानन्दादिषु; ततः पूज्यपाद मण्डन मिश्रात् पूर्वतनेषु जनक-याज्ञा वल्क्य-गौतम-शतानन्दा- दिषु; ततः पश्चात्तेनेस्वपि वाचस्पत्युदयन-गंगेश-शङ्कर-गोकुलनाथ प्रभृतिषु प्रसिद्धतम दार्शानिकेषु न कस्यापि संन्यासग्रहणं कर्णपथभवतीर्णम्। तरम त् स्मृति विरोधेन परम्परा विरोधेन च 'मण्डन मिश्र एवं संन्याससवास्थायां सुरेश्वराचार्य नाम्ना प्रसिद्ध' इत्यविचारिताभिघानं सर्वथा माधवाचार्यदीनाम्।

(झ) 'डॉ. कुप्पुस्वामी शास्त्री' महोदयोऽपि 'वेदास्तस्येतिहासँ इति वृहति निबन्धे सुरेश्वराचार्यस्य मण्डनमिश्राद् भिन्नत्वं विशदं निरूपयामास(पृष्ठ121-157)

एवं च प्रदर्शित युक्ति- प्रमाणबलेन–

सुरेश्वराचार्य विरचित नहिष्कर्म्यसिद्धि' ग्रन्थस्य भूमिकायां (द्वितीय संस्करणे) सम्पादक जी ए जैकोव महोदयेन मण्डन-सुरेश्वरयोरेकत्वे प्रदत्ता युक्तपोऽपि निरस्ता वेदितव्याः पूर्वोक्तनेक युक्ति-वचन-निचय-पर्यालोचनया दृढ़मिदमाभिधातु' शाक्यते यदयमस्याकं मिथिला मही-मण्डल-मण्डनः श्रीमान् मण्डन मिश्रः न जातु भगवतः शङ्कराचार्यस्य शिष्पत्वं संन्यास वा स्वीचकार, न चात एवं 'सुरेश्वर' नाम्ना प्रथितः।

अयं खल्वपरो गृहस्थो विश्वरूयाचार्यः, यः पश्चात् सन्यासं स्वीकृत्य सुरेश्वरचार्यनाम्ना शङ्कराचार्यस्य प्रधानशिष्यो बभूव। 'विश्वरूप एवं पश्चात सुरेश्वराचार्यनाम्ना प्रख्यात' इति तु शृंगेरीमठ पुस्तकालयात् प्राप्तस्य (शृंगेरी मठानुसारि शङ्कर चरितयुतस्य) गुरुवंश काव्यस्य द्वितीये संगे (2/59) स्पष्टमुल्लिखितमास्ते।

'ब्रह्मानन्द भारती' नामकेना चार्येण विरचिते 'पुरुषार्थ प्रबोध' ग्रन्थे उद्धृतेन

अत्र व्यास स्मृतो 'देवरेण सुतोत्पत्ति' इति पाठभेदो विशेषः, अन्यत् सर्व समानम्।

डॉ.पी.बी. काणे- लिखितः 'धर्मशास्त्र का इतिहासँ इति ग्रन्थः, पृष्ठ-498।

माधवाचार्यरचित 'शङ्करदिग्विजय ग्रन्थस्य (आचार्य बलदेव उपाध्याय कृत हिन्दी टीकायुतरस्य) परिशिष्ट भागः, पृष्ठ-587।

निम्नलिखित श्लोकेनापि 'नहिष्कर्म्यसिद्धि' ग्रन्थस्य प्रणेता सुरेश्वर एवं विश्वरूपाचार्यः' इति स्पष्टीभवति।

इत्येवं नहिष्कमर्यद्धौ ब्रह्मांशै ब्रह्मावित्तमैः।
श्रीमद्भिर्विश्वरूपपाद्यै राचार्यैः करूणार्णवैः।।

इति श्लोकेऽत्र सुरेश्वरविरचितः नहिष्कम्यैसिद्धि ग्रन्थे विश्वरूपप्रणीत इत्येवं वर्ण्यते। तेन 'विश्वरूप एत्र पश्चात् सुरेश्वराचार्यनामना प्रसिद्धः' इति स्पष्ट सिध्यति। एवं च...मण्डनमिश्राद्भिन्न एव सुरेश्वरः' इति स्फुर्ट पर्यवस्यति।

म.म.डा. योगेन्द्रनाथ बागची महोदयोऽपि 'भारतीय शास्त्र आ साहित्ये अद्वैतवाद इति नामके ग्रन्थे एवमेव लिखति–

'शारदामठस्य मठाधीशः विश्वरूपाचार्यः शङ्करस्य शिष्य आसीत्। अयमेव विश्वरूपाचार्यः याज्ञवल्यस्मृतेः 'बालक्रीड़ा' नाम्नीं टीकां व्यरचयत्। मिताश्ररायां विज्ञानेश्वरेण लिखितम्– 'याज्ञवल्क्यमुनिभाषिंत मुहूर्बिश्वरूप-विकटोक्ति।'

अयमेव विश्वरूपः बृहदारण्यकभाष्यवार्तिकमरचयत्। एतस्य वार्तिकस्य सुरेश्वराचार्यरचित्वेन प्रसिद्धिरस्ति। सुरेश्वरचार्यश्च विश्वरूपाचार्यः विद्यारण्याविरचिते 'विवरणप्रमेयसंग्रह' ग्रन्थे सुरेश्वराचार्यप्रणीतस्य(आभ्र फलार्थ इत्यादि) वार्तिक श्लोकस्य विश्वरूपाचार्य प्रणीतत्त्वेन उद्धरणं विद्यते–

आभ्र फलार्थ इत्यादि ह्यापन्तम्बस्मृतेर्वचः।
फलवत्वं समाचष्टे नित्यानामपि कर्मनाम्।।(बु भा बा 1/1/97)
इर्द वाक्यं नित्यचवाक्यविषयत्वेन वार्तिके विध्वरूपाचार्य उदाजहार।'

एताबता विश्वरूप-सुरेश्वरयोरेकत्वं मण्डनभिश्राश्च भिन्नत्वं व्यचतं सिध्यति।

कि च पी.बी काणे महाशयोऽपि स्वस्य 'धर्मशास्त्र का इतिहासँ इति ग्रन्थे विश्वरूपाचार्य-रचित 'बालक्रीड़ा' याः वाक्यान्दुदृघृत्य भगवतः

शङ्कराचार्यस्यानुयायित्वमसाधयत्।

अपर च सुरेश्वर नहिष्कर्म्यसिद्धी (स्वग्रंथे) शङ्करसिद्धान्तं सर्वथाऽनुसरति; किन्तु मण्डन मिश्रः स्वग्रन्थे ब्रह्मासिद्धौ न शङ्करसिद्धांतमनुसरति, न वा नहिष्कर्म्यसिद्धौ प्रतिपादितमनुवदति। अतः मण्डन सुरेश्वरयोरभिन्नत्वं नैव सिध्याति।

सोऽयं सिद्धांतः म.म. कुप्पुस्वामि-शास्त्रि महोदयेनापि ब्रह्मसिद्धि-भूमिकायां वितत्य निरूपितः। पण्डितप्रवरः समादरणीयः श्री सहदेव झा महोदयोऽपि 'मित्रवाणी', 'मिथिला मिहिर'— इत्यादि पत्रिकासु एवमेव प्रत्यपादयत्।

तदेव— शङ्कर-मण्डनयोः शास्त्रार्थोनाभूत्, न च मण्डनः तत्र पराजितोभूत्वा संन्यासं च गृहीत्वा शङ्कराचार्यस्य शिष्योऽभूत्, (विश्वरूपाचार्य एव संन्यासं स्वीकृत्य शङ्करशिष्यः सुरेश्वरोऽभवत्) एष खलु मीमांसाः सन्नपि स्वतन्त्रविचारक। शङ्कर सदृशः अद्वैत वेदान्ती समासीत् जत एवास्य नास्ति शङ्करेण सह सर्वत्र मतैवयम्; सुप्रसिद्ध दादार्शनिको वाचस्पति मिश्र महोदयोऽपि करोत्यस्यैव समर्थनम्।

एवं च मण्डन-सुरेश्वरयौभिन्नत्वं स्पष्टमवगर्त भवति-इति सिद्धान्त सिद्धी राजमार्गोऽ वगन्तव्यः।

मण्डन-सुरेश्वर प्रस्थानयोः सिद्धान्तभेदः संक्षिप्यैवं निर्देष्टु शावयते—

मण्डन मिश्र प्रस्थानम्	सुरेश्वर प्रस्थानम्
	1. शङ्कर-सुरेश्वराचार्य शब्द ब्रह्मवादस्य
1. मण्डन मिश्रः स्फोटवादं स्वीकृत्य शब्द स्फोटवादस्य च खण्डन कुरूतः। ब्रह्मवादस्य समर्थन करोति।	2. शङ्कर-सुरेश्वरयो ते अविद्यानिवृत्तिः
2. विज्ञानात्मनो ब्रह्मणोऽ स्थूलत्वादिरिव ब्रह्मस्वरूपा, ब्रह्मव्यतिरिक्तो नभाव-दुखाभावोऽयुपाधिविशेष इति ब्रह्मणोऽ पदार्थः, नाभावपदार्थश्च तिष्ठति; तिरेकेण भावरूपद्वैताभाव एवाद्वैत- वाद इति भावार्द्वतमतम्।	ब्रह्माद्वैतवाद एवं विद्यते।
	3. शङ्कर-सुरेश्वरयोमैते अविद्याया
3. मण्डनमते अविद्याया आश्रयोजीवः, विषयो हि ब्रह्म विद्यते। वाचस्पतिरपि मण्डन मिश्रमतस्यैव समर्थन करोति।	आश्रयः, विषयोऽपि च ब्रह्म एव-स्ति। शङ्कर-शिष्याः पद्मतादः तिश्चापि इदमेव मतमङ्गीकुरूतः।
4. मण्डन मिश्रमते अग्रहणान्यथा ग्रहणभेदेन	4. सुरेश्वराचार्यः स्ववार्तिके

मतस्यास्व प्रचुरं खण्डन करोति।

5.सुरेश्वरो विपरीतिख्यातिमिमां खण्डयति।

6. शङ्कर-सुरेश्वरादिमते शब्द-शक्तेरसी मितत्त्वात् शब्दजन्यं ज्ञानमपरोक्षात्मक भवति। अतः 'तत्त्वमसिँ इत्यादि गुरूपदेशश्रवणेनैव अपरोक्षात्मक (प्रत्यक्षात्मकं) ब्रह्मानंभवतीति हेतोः मनन निदिध्यासनादेर्नास्ति प्रयोजनम्।

7. सुरेश्वराचार्यः आभासवादी अस्ति।

8. सुरेश्वराचार्यः जगतो व्यावहारिक सत्यत्वम्।

9. सुरेश्वरमवे जीवन्मुक्तिविद्यते।

अन्ते च– 'ब्रह्मसिद्धिरितिख्यात-सुधया सुधियां व्यधात्।
योऽमृतत्त्वं, नमामस्त मण्डन बुध-मण्डम्।।

इति स्वश्लोकेन श्रीमन्तमाचार्य मण्डन मिश्रमुपश्लोकयन् विरमामि।

Transition from Purva-Mimansa to Uttara-Mimansa in Mandan's Brahmasiddhi

–Prof. Ashok Kumar Jha

(मण्डनक पर्याप्त ख्यातिक आधार एकटा ईहो तथ्य थिक जे हुनका समय मे, हुनक पोथी 'ब्रह्मासिद्ध' मे पूर्व-मीमांसा, उत्तर मीमांसाक स्वरूप ग्रहण केलक। ताहि हिसाबे, मण्डनक दर्शन-काल, संक्रान्तिकाल वा सूक्षम परिवर्त्तनक समय छल आ तकर सम्पूर्ण श्रेय हुनके जाइ छनि। एहि विषयक विशद् उपस्थापन आ दार्शनिक रीतिए रेखा-रेशा छोड़ा क' विश्लेषण एत' क' रहल छथि– प्रो. ओशक कुमार झा।–सम्पादक)

Mandan [615-695 A.D] and Shankar [632-664 A.D] are perhaps two most important writers in Vedanta in a crucial phase of Indian history, i:e the 7th Century A.D., each representing a different strain Either of them helps structure thought in an interpretation of the religio-philosophical experince emanating from a study of the Upanishadic traditions of knowlege Madhavacharya's [14th C.A.D] designation of Mandan Mishra in his Shankardigvijai is a lase in point, Removed from the secen of a possible interaction between these two great minds by a period of about 700 Years, he goes on to write a panegylic in verse about Shankars exploits in the manner of Asvaghoshas Buddhacharit. The sort of apotheosis bestowed upon Shankar in the process may credit a minor poet * but it is far from reliable in any Serutiny of the facts as to any significiant interaction between them. Its dubious Value as a historical source based upon a use of facts in an emotive sense is perhaps accountable for the curious neglect Mandan has suffered in the process of Lanonization of Vedantic Values. But for Vachaspatis reference to his views and the discovery and publication of Brahmasiddhi by Prof. S. Kuppuswami Shastri*, his was a lost case to anyone inter-

ested in the survival of an important and vital branc to the Vendanta.

When Prof. S. Radhakrishnan referred to him casually as a mimansak in the second Volume of his History of Indian philosophy published in 1936*, little did he know about the existence of such a Vedantic text by Mandan, Its publication in the following years, sa Madras government oriental manuscript series no-4, makes the contribution of a fact of outmost importance to anyone interested in understanding the actual processes at work in the developmet of Indian thought and religious experince.

Basing himself perhaps on a perception of the nature of facts accruing from a text such a Shankar digvijai Vivekanand, however, is yet sensitive to Shankerite Compulsions in a shift from purvi-mimansa to uttar-mimansa- But this is my attempt my mission in life, to Show that the Vedantic schools are not contradictory that they all neccessiate each other, all fulfil each other, and one, as it were, is the stepping stone to the other, until the goal, the Advait the Tat Tvam Asi, is reached. This was a time in India when tha Karma Kand had its way...But with all that, the Karmakanda of the vedas has almost disappeared from India.

To his sympathetic view of Shankar eschewal of a truly vedic view in purva-mimansa to the promise of freedow in Uttar-mimansa, as per Shankar, passes through of existence ascribed in the Latter's View and that of Gaudapas, his teachers teacher, to Brahman i.e. the real itself in its absoluteness.

The citation from Vivekanand, however, also suggests a loss, an erosion of the basic Values by the parent Community. In spite of extreme liberatism the logical rigeon of monistic idealism that comes to characters his interpretation of the Vedic texts; after the deconstructive exercises in Buddhistic idea, is much too intellectualistic of belives [His own faith in Gods and Goddness Contradicts the seventy of his view of what is Real] What he gains in terms widening the scope of human freedow, in metaphysical or societal aims he loses with respect to coherent correspondence to action and faith in day-to-day life of the Community-

It is here that Mandan, his elder and Contemporary seems

to after a more cohurent corresponds to the inhuent and manifest property of words in a language so structured as to lead through excerise and Contemguiation of the desired object to a vision of reality. The sort of a Contiunity in presentation of pre-Shankar Vedanta that Mandan offers is further taken up by Vachaspati in the post Shankar phase as he sticks to Mandans View about the relation of Prasmakhyana and Brahmsaksatkar. The haughlisase ascribed by Sureshwar to courageous and great mimanansakar like Mandan*, in respect of the casual relation between realising Brahman and the Shabda in Mahavakyas as one due to the strength of a tradition helps it in fact to servive against Undermining its actual status in terms of the cannons of concept and legend there of in Shankars Vedanta. Madans View of Karman on way to liberation in Brahmans and his approach of Shankar and Sureshwar.*

Indeed out of the seven Vedantic theories listed out of the matrix of obtaining Vedanta Views in how Karman relates to Jnana on way to liberation, Mandan accepts only two: Karmakanda activities, as prescribed are bi-functional havings to distinct functions. They lead to the fruit of action as well as realisation of Brahman. Secondly, all Karman is intended to purifymen and bid for atmarana.*

Much too alive to the vital pull of an integrating scheme of Value of how the househoder too, in the spirit of some of the Contemplation [Abhyasa] and verbal Cognition [Shabda Jnans] arising from the mahavakyas in a final manifestation of the self-luminousatman.* So he goes in for 'Jnanakarmasamuchhaya' while both Shankar and Sureshwar are against it, And yet he does not ascribe to the sufficiencr of Karman as per the Prabhakar school of mimansa. Acknoweldging the cognitive Value of rituals desire, he raises Conceptualization inherent in it to 'Ist Sadhana', a primary step in actuating atman to Brahman. from Karona to 1st sadhana refers to how the oneness of the real one itself may be gathered involving Shravan [hearing], sattavait involving Shravan[hearining], manan [contemplation] and dhyanabhyasa [excerises Contempation]. This is avidya removed, avidya being as good as mritya [death], as it indestructible keeps the free and Luminous

Character of the Absolute in atman, Mandan admits of both the paths to it: through Contemplation of the Content of verbal Congnition of the Mahavakyas in the Upanishads in realising the eternal and self-Luminous atman as per brahmavidya without the performance of Scriptual rites,* and a meditative discipline in accordance with the yajnas in order to get to such a state in the case of a grihastha [house holder]. A Cohurence theory of truth of a wider import as per the life of the Community is obriously involved in the latter in having such a view of reality on Mandans part as he goes on to state his Janana Karmasammuchhya as aginst the ascetical extremity of the Position of Shankar and Shankerities position intends of course, greater freedom from rites and Customs and even in the use of language arising from a given matrixe in a deconstructive exercise that suits more the ascetic who has cut himself off life almost in the manner of a Buddist monk with the difference that instead of the 'no' of the Buddists he still holds to the persistance of the etural Ila the existence of a self luminous atman. That it Cannote be defined makes Shankar root his concept of the absoute in as apriori metaphysical refrence just beyond the void of the Madhyamikas rather than in the stuided accommodation of the shabdavait of Bhartrihari and the bhavadvait of Mandan!

Wheare as the Shankarite concept is based on the ever-present and luminous atman in relation to Brahman, what saves it from solitism is the wayh it may lie covered in nescience accuring from phenomenality in existence. To Shankar in accompanies Brahman, being His a tribute, affecting existence around him without affecting Him. As such it is only getting through the veil of nescience, the world of appearnce in Maya. withe the help of Vidya which may help the individual human soul[Jeevatmann] to realise itself is Buddhism, but for Mandan, interacting with pre-shankarite ideas; it comes of a response to Bhartrihari [591-651 D.A]. He equates the nonmeral sidetratuk of the phenomenal world of speech in its abosluteness with the Absolute as it is, Shabdabrahman with Suddharbrahman. Either lead to realisatiion passing through the world of sounds[Shabda-prapanch] and that of objects

[arthaprapanch]* He upholds Bhartriharis Sphotavada and] believing in Shabdadvait of Bhartrihari- goes on to amplify ' aksharam' into advait-siddhanta. He goes on to expound his concept of the nature of erronadous expression in his Brahmasiddhi respect Justifies the Bhatta theory of Viparitakhayati or anyathakhayati, which is the same as the Nyaya theory of anyathakhayati.

Mandan saya that there are two kinds of avidya nescience, agrahana[non-apprehension and anyathagrahan [misapprehnsion] with meditation one may discard the other kind of avidya in realising Brahman as knowlege of Brahman leads to realising the same [aproksha-brahmansakshatkars].*

He holds that Jeevatman [the individual soul] is the seat af avidva [nescience]. This opsures the nature of the object which is Brahman. Sureshwar, following Shankar, is of the opinion that Brahman itself is a hray [the locus] as well as Visaya [the object]* Mandan followed by vachaspati in this respect is the source of what was later on known as Vachaspati prasthan. Mandan as stated above, is of the view that Upanishadic Mahavakyas passing through Upajana helps into direct realisation of the same.*

Coming after Shankar's Commentary on the Brahmasutra, Mandans treatment of avidya, Viparitakhyati, abhyarthaprapanch in different works Contain views at Variance with those of Sureshwar or his mentor, Shankar They arise in reciprocation to a wide range of ideas and practices in the bold of Vedanta as a Certain enertia and unwillingness to yield to abstraction in formulation give way to Commitment of a more oxtreme kind to a monistic view of what is Real. Far from being a disciple of Shankar, Mandan emerges-on the evidence of his ideas and treatment in these texts of his as his elder Contemporary, who is intensely preoclupied with the praxis of a far-ranging Value system awaiting minds such as his own or that of Shankar to organise it into the coherence of a system.

As such he comes out as Shankars most dignified rival, who can not, on the more enduring basic of a comparative study of the internal evidence of fact and ideas of his texts together with

those of Shankar and his disciples, be taken to be playing a second fiddle to some of the assumptions in Shankerite Vedanta. In holding that the house-holders actuation of now the Real itself may be apprehended in no less authentic a manner than that of the ascetics claim to it, Mandan sticks close to the Concretes of a tradition in practice before him, which had not yet in spite of the deconstructions to the Contray, fallen into disuse.

As in the case of Vidyapati, the mediaeval poet [1360-1448 A.D] in Maithili,* it has taken along time for scholar like the late professors M. Wiriyana s. Kuppurswami and Baldev Upadhyaya to prore that Mandan's genuine status as a thinker is not limited to mimansa, but that he has substancial contributiom to make to the natural development of the Vedanta as it goes on to interact with the more limited one of the area to which he belonged. For all said and done it has to be admitted that Mandanite process of thought constitute an essential part of the religio-philosophical and cultural life in Mithi a, where he found a justification of his view in Vachaspati inspite of the claims of same of Shankar followers.

---

*: Madhavacharya, Sri Shankar digvijai by pt. Baldev Upadhyaya[Haridvar Mahanth Shantanand Nat, 1943].

6. 13, Page 184.

lalkjcU/kkHk; nq[k'kkUR;S l ,oa ujRo Hkxokuqikj;%A

fHk"käea Rok fHk"ktka Ük`a.kksehR;qäL; ;ks·Hkwnqfnrkorkj%AA3AA

Madhavacharya Confuses Vishwaroop, another famous disciple of Kumaril with Mandan Mishra. Vishwaroop came to accept Shanker's Views accepting him as his spiritual order as Sureshwaracharya. But as the Guruvansh-Kavya. tradition holds he came to meet Mandan, another student of Kumaril in course of his journey. A distortion of facts to suit the apotheosis of Shanker in an uncritical tradition of adoration in the monastic tradition could be

the cause of a final eclipse of Mandan as a meseritualist in perpetuating an uncritical legend about Shankar's great rival. Madhavacharya's inculsion of Abhinavded to Shankar's views in a debate is another glasing example of his misuse of facts. The enquires of ä. B.N. Jha Retd. Prof of Sanskrit, B.R.A.B.U. May be taken into a comment in this context.

* Acharya Mandan Mishra Brahmasiddhi withe commentary by Sankhapani ed. With introduction by prof. S. Kuppuswami Sastri[Madras Goverment press, 1937], P.P 159 and 300.

* S. Radhakrishnan, Indian Philosophy vol. Il[London : 1937] page 449.

Ibid. P.P. 325-26

Edited by Kuppuswami in his introduction p. XXX

Ibid P. 33

Ibid

Ibid P. 34

Ibid p. 35

Ibid p. 26

Ibid p. 211, Gauri nath Shastri, Philosophy of Bhartrihari, Delhi, Bhartiya Vidya Prakashan. 1971, P. 126

Brahmasiddhi, P. 154, Part 1

Ibid p. part 1

Kuppuswami; Introduction to Brahmasiddhi, P. XXVIII

Subhakar Kapoor, Vidyapati Aur Unka Kavya [Lucknow, Ganga Pustakalaya Karyalaya, 1966], P.P, 1-2, Acharya Baldev Upadhyaya, Bhartiya Darshan, Varanasi, Chowkhambha oriental 1976: P.311

मण्डन मिश्र का मूल पक्ष

—डॉ. तारानन्द वियोगी

(डॉ. तारानन्द वियोगी कोनो टा शास्त्रार्थ मे उत्तर-पक्षक विद्वान भेल करैत छथि। अर्थात् एन्टी-थीसिस। पूर्व पक्षक मठाधीश लोकनिकेँ साहित्य आ दर्शन दुनू क्षेत्र मे हिनकर माटि आइ-काल्हि भेटि रहल छै। मुदा ताहू सँ पैघ हिनकर विशेषज्ञता ई थिक जे, पूर्व पक्षक विरोध करैत आ उत्तर पक्षक संस्थापना करैत-करैत ई पूर्व-पक्ष केँ अपन तर्क- सामर्थ्य सँ परास्त करैत छथि आ अपना तरहक मूल-पक्ष विकसित करैत छथि जाहि मे जे वस्तुतः जीवन आ दर्शन मे मूल-तत्त्व आ मूल-पक्षक रूप मे माटि पर स्थापित अछि।

सद्यः प्रकाशित महत्वपूर्ण पोथी 'मण्डन मिश्र और उनका अद्वैत वेदान्त' (ले- पं. सहदेव झा) केँ वैज्ञानिक ढँगे सम्पादित क' सही दिशा मे उपस्थापनक महत्व ई एक बेर फेर प्रतिपादित केलनि अछि। एहि क्षेत्रक एहि पहिल महत्वपूर्ण पोथी सँ डॉ. वियोगीक सुस्पष्ट दार्शनिक आ जीवनगत दृष्टिकोण समाजक समक्ष आयल अछि।

मुदा मण्डन मिश्रक जीवन आ दर्शनक मूल-पक्ष की छल, से डॉ. तारानन्द वियोगीक सिवा आर के कहत?

हम त' अपारम्परिक ढँगे ई कहब जे अद्वैत आ भावाद्वैत बारह आना त मीमांसा सेहो चारि आना। ई मीमांसा 'गाड़िबना मीमांसा' नहि, अपितु नव सृजन लेल कएल जायवला कष्ट आ आनन्दमे सराबोर मंथन थिक, जे मण्डनक व्यक्तित्व अविभाज्य अंग थिक। तेँ एहन अद्वैत-व्यक्तित्व मे दुर्लभ आ अभिज्ञ अछि। ई ऐतिहासिक समागम अपन व्यावहारिक, कर्मवादी आ कर्मयोगी दर्शन सँ वर्त्तमानो आ भविष्यों केँ दिशा देवा मे प्रासंगिक अछि। केना से बहस प्रारम्भ हेबाक बेर गुदस्त भ' रहल अछि।-सम्पादक)

पिछले दिनों जब मैं राजस्थान-यात्रा पर था, जयपुर में भारतीय दर्शन के कुछ युवा विद्वानों तथा छात्रों के साथ मेरी बातचीत हो रही थी।

बातचीत पूर्वनियोजित थी, जो मण्डन मिश्र कर केन्द्रित थी। घंटो बातचीत चली। तरह-तरह के प्रश्न आए। मेरी यह मित्र-चेष्टा थी कि युवा-विद्वान पूर्वर्तियों के द्वारा फैलाए गए विषम अन्धजाल से बाहर निकलकर अद्वैत वेदान्त के मामले को और इसी कम में मण्डन मिश्र के भी मामले को समझने की उदारता बरतें। इसमें सन्देह नहीं कि बातचीत बहुत फलप्रद रही।

यहाँ इस प्रसंग की चर्चा मैं सप्रयोजन कर रहा हूँ।

उस दिन, यह प्रसंग जब पूरा हुआ कि मण्डन मिश्र निरे मीमांसक नहीं थे(बल्कि मूलतः तो वे मीमांसाक थे ही नहीं) जैसा कि शङ्कराचार्य के परवर्ती अनुयायियों ने अन्धविश्वास फेला रखा है, तो इसके बाद, मैंने संक्षेप में इस विषय पर प्रकाश डाल कि मण्डन मिश्र ने 'कर्म-योग का कितना अनूठा और युक्तियुक्त चिन्तन किया है! वह क्षण मुझे याद आता है। अविस्मरणीय दृश्य या वह! जो भी बोधपूर्ण विद्वान उस गोष्ठ में बैठे हुए थे, सभी की आँखे आश्चर्य से फैल गई थी और मुझपर जो प्रश्नों की बौछार होनी शुरू हुई, उसकी तो पूछिए ही मत। सभी की बस यही जिज्ञासा थी कि क्या पूर्व मध्यकाल में भी कर्मयोग पर व्यवस्थित चिन्तन हुआ? ग्रन्थ लिखे गए? मण्डन मिश्र क्या 'गीता' की कर्मयोग-धारा के अन्तर्गत आ सकते है? क्या यह चिन्तन प्रचलन में बना रहा? कैसे? किस तरह?

स्वय मैं भी चकित था क्योंकि मैंने तो सिर्फ बिहार के विश्वविद्यालयक देखे हैं, यहीं के छात्रों और शोधप्रजों से मेरा पाला पड़ा है। युवकों के साथ इतनी जीवन्त चर्चा हो सकती है वेदान्त पर, यह मैंने वहीं जाना। अस्तु।

मैं तो बड़ा अल्पज्ञ हूँ। भारतीय दर्शन का व्यवस्थित अध्ययन मैं न कर पाया। थोड़े-बहुत स्वाध्याय में जितना जाना जा सकता है(थोड़े-बहुत सवाध्याय से जाना ही कितना जा सकता है?) उतना जानने की चेष्टा में हूँ। बोध कम है, जिज्ञासाएँ अधिक हैं। मैंने सामर्थ्य भर कोशिश की कि उनके प्रश्नों के हल नहीं, प्रश्नों के प्रति जागरूकता उनमें पैदा कर सकू जो कि अन्ततः वैचारिक उत्तेजन का कारण जनता है।

लेकिन सबसे ज्यादा, इन कथित वेदान्तियों की कपट-नीति के प्रति, वारजाल और आखेट-जाल के प्रति मैं गहरे आकोश और दुख से भरता रहा, भरता रहा।

मैं सोचना चाहता हूँ कि आखिर क्यों शङ्कर के अनुयायियों ने यह

अन्धविश्वास फैलाया होगा? इसके पीछे उनकी क्या नीयत हो सकती है? दरअसल, प्राचीन तत्त्व-चिन्तन के क्षेत्र में किसी निष्ठावान वेदान्ती की 'मीमांसाक' कह देना अपने आप में एक वीभत्स गाली है। यह गाली उन्होंने क्यों दी होगी? और क्या उन्हें इस बात की तनिक भी आशंका नही होगी कि भविष्य में उनका चलाया गया यह झूठ कभी पकड़ भी लिया जा सकता है! हाँ, जरूर हो यक आशंका उन्हों रही होगी। लेकिन, आज के राजनीतिज्ञ 'देश-सेवा' के नाम पर जो भी कुछ कर रहे हैं, इन्हें भी तो आशंका है कि भविष्य में इन्हें पकड़ लिया जाएगा, बल्कि सी.वी.आई. वगैरह तो आज भी इन्हें पकड़ ले पा रही है, लेकिन क्या इस प्रजाति ने देश-सेवा करना छोड़ दिया है?

शङ्करमठों ने पिछले सात-आठ सौ वर्षा तक जो गतिविधि चलाई है, उसे चाहे मानवतावादी दृष्टिकोण से देखा जाए या शुद्ध आध्यात्मिक दृष्टिकोण से, हमेश यही साबित होगा कि इन सबने धर्म और चिन्तन के साथ वही सलूक किया है, जैसा कि आज के राजनेता देश के साथ कर रहे हैं। लेकिन इस तरफ विचारकों का ध्यान नहीं गया है। जिनका ध्यान गया, उन्होंने (कबीर आदि ने) क्रान्ति की। मगर वे सब अपधर्म, शूद्र-धर्म आदि की कोटि में रख दिये गए। देश की धर्मभीरू जनता कुकर्म-सुकर्म के अपने मायाजाल में उलझी रही और....में मालपूए का भोग लगता है। अद्वैत वेदान्त का उतना सम्बन्ध ब्रह्म से नहीं रहा, जितना मालपूए से और मोहनभोग से और स्वर्णसिंहासन और चत्रवर्तित्व से।

मण्डन मिश्र का प्रश्न इन तमाम प्रसंगो से जुड़ा हुआ है।

यह सवाल हमेशा से उठता रह है कि 'धर्म' नामक किला आम जनता के लिए खोल दिया जाय, या इसपर सिर्फ सम्राट का, उनक ठेकेदार आवैर महन्तों का कब्जा बना रहै। पुण्य, मोझ या ब्रह्म यदि प्राप्त हो जाने लायक वस्तु है तो जनता स्वयं अपने उद्योग से उसे प्राप्त हो जाने लायक वस्तु है तो अनता स्वयं अपने उद्योग से उसे प्राप्त कर ले या कि पंडे और ठेकेदार अपने माध्यम से उसे प्राप्त कराए। यह बिल्कुल वैसा ही प्रश्न है, जैसा यह कि इन्दिरा आबास योजना के लाभाविन्त गीब सरको से राशि अपना मकान बना ले या कि उसके लिए ठेकेदार मकान बनवा दे। जहाँ तक व्यवस्था की पसन्दगी का प्रश्न है, तो किसी भी विचारधारा की

व्यवस्था हो, उसकी पहली पसन्द तो यही होती है कि जो भी कुछ राज्य में घटित हो सब उसके नियंत्रणाधीन हो और इसके लिए बीच में मध्यस्थ का होना जरूरी है, अब उसे चाहे आप धर्मगुरु या महन्त कह लें चाहे ठेकेदार, दलाल या था। वे धर्मनिरपेक्ष नहीं होते थे, क्योंकि सत्ता बनाए रखने के लिए भी और उसका ठीक-ठीक रसोपभाग करने के लिए भी धर्म की आड़ ली जानी इसक देश में हमेशा से जरूरी रही है। शासक सदा ही ऐसे मध्यस्थों को छत्रच्छाया प्रदान करते थे, जिनका और कि तरह इस प्रभाव-क्षेत्र में लगातार बढ़ोतरी होती जाय, यह मठों का प्रधान कार्य था। इसके लिए राजनीति होती थीं, हत्याएँ होती थी। जीबित प्राणियों की उन यशः शरीर पूर्व वर्तियों की हत्या करने में लगती थी, जो विरोधी विचारधारा के थे, अब गुजर चुके थे मगर समाज पर उनका भी प्रभाव बना हुआ था। मण्डन मिश्र की हत्या इसी प्रकार की हत्या थी। 'शङ्करदिग्विजय' के प्रथम पाठ का लिखा जाना वस्तुतः उस सहशताब्दी के जघन्यतम हत्याकाण्डों में से एक है।

सनातन धर्म के इतिहास मे जो भी कुछ गिने-चुने विचारक आए, जिन्होंने धर्म का किला जनता के लिए खोल देने की वकालत की, उनके विरूद्ध सदियों-सदियों तक 'कुचल डालो अभियान' चलाये जाते रहे।

यह तथ्य स्पष्ट है कि इस धर्मप्राण देश में 'संन्यासँ और 'ब्रह्मचिन्तन' को लेकर दो भिन्न-भिन्न विचारधाराएँ चलती रही। जैसे-जैसे सनातन सभ्यता समृद्ध होती गई', इन विचारधाराओं का भी उत्तरोत्तर पल्लवन-पुष्पण होता गया। आश्रम व्यवस्था, जो कि उत्तर वैदिक काल तक सुव्यवस्थित हो गई थी, को उसी काल में झटके भी लगने शुरू हो गए थे। यह प्रश्न विचारकों के लिए महाप्रश्न बनकर उपस्थित हो चुका था कि गृहस्थ और वानप्रस्थ आश्रम को भोगे बगैर क्या सीधे ब्रह्मचग्र आश्रम से संन्यास आश्रम में प्रवेश किया जा सकता है? कहना न होगा कि इस विषय पर विचारकों के भिन्न-भिन्न मत यद्यपि कि थे, लेकिन कुल मिलाकर सीधे सन्यास को स्वीकृति मिल चुकी थी। स्वयं मण्डन मिश्र ने भी अपने ग्रन्थ में इस विषय पर विमर्श किया है और स्थापना दी हैं। कि जब भी कभी, जिस भी किसी आश्रम में, व्यक्ति को तीव्र वैराग्य की अनुभूति हो तो वह संन्यास आश्रम में प्रवेश किया जा सकता है? कहना न होगा कि इस विषय पर विचारकों के भिन्न-भिन्न मत यद्यपि कि थे, लेकिन कुल मिलाकर सीधे

सन्यास को स्वीकृति मिल चुकी थी। स्वयं मण्डन मिश्र ने भी अपने ग्रन्थ में इस विषय पर विमर्श किया है और स्थापना दी है कि जब भी कभी, जिस भी किसी आश्रम में, व्यक्ति को तीव्र वैराग्य की अनुभूति हो तो वह संन्यास धारण कर सकता है।

यहाँ यह भी ध्यान रखने की जरूरत है कि यह स्थापना मण्डन मिश्र का मूल पक्ष नहीं है यह तो सिर्फ एक जटिल विव दास्पद मामले में अपने विचार की अभिव्यक्ति भर है। फिर मण्डन मिश्र का मूल पक्ष क्या है?

उत्तर वैदिक काल ही भारत-भूमि पर एक यह भी विचारधारा विद्यमान रहीं है कि विषयों के प्रति वैराग्य की अनुभूति हो जाने की स्थिति में व्यक्ति अपना के प्रति उसकी उम्मुखता ठीक वैसी ही हो, जैसी कि एक संन्यासी की होनी चाहिए। कर्मो में कुशलता को भी इस देश में जो 'योग' कहा गया है- योगः कर्मसु कौशलम्- यह इसी विचारधारा की अभिव्यक्तिक है, जिसकी व्याख्या उपनिष्दों ने 'न कर्म लिप्यते नरे कहकर की हैं – मनुष्य कर्म तो सभी करे, लेकिन कर्म से वह लिप्त न हो, न कर्म ही उनमें लिप्त हो जाए।

परवर्त्ती काल में गीता मे इस विचारधार की अच्छी प्रस्तुति की । गीता कई अर्थो में एक महान कृति है, लेकिन इसकी सबसे बड़ी 'महानता' इसी बात में निहित है संभाव्यतम समन्वय की भी कोशिश की। जिस भी किसी दृष्टि का झंडाबरदार हो कोई, गीता में उसे अपने मनोनुकूल बात मिल सकती है। लेकिन, जब हम इस मामले पर गौर करते है कि स्वयं गीताकार का अपना पक्ष क्या है। लेकिन, जब हम इस मामले पर गौर करते हैं कि स्वयं गीताकार का अपना पक्ष क्या है– तो स्पष्ट हो जाता है कि वे 'कर्म करते हुए उसमें लिप्त न होने' की धारा के प्रवक्त हैं।

भारतीय दर्शन और धर्म चिन्तन में गीता एक अनिवार्य 'प्रस्थान' है, अतः इसे दरकिनार करके तो कोई आगे नहीं बढ़ सकता था, यह किया जाने लगा कि अपने-अपने मनोनुकूल इसकी टीका, इसकी व्याख्या कर ली गई। भारत की वह कृति गीता ही है, जिसकी सबसे अधिक टीकाएँ दुनिया कि विभिन्न भाषाओं में, भारत के विभिन्न सम्प्रदायों में लिखी गई। गीता मंदिर के प्रवेशद्वार पर टंगी घंटी हो गई, जिसे हर प्रवेशार्थी एक बार जरूर बजा दिया करता है। गीता का निहितार्थ समझने में भारी भूलचूकें भी इसी

कारण से हुई और इस देश को इसका खामियाजा भुगतना पड़ा।

गीताकार ने जो पक्ष धारण किया था, वह उस जमाने का सर्वस्वीकृत पक्ष नहीं था, यह मुख्यधारा भी नहीं थी। कृष्ण का यह संदेश उस काल के धर्मात्माओं को इस सृष्टि में न कोई सुकर्म होता है न कुकर्म, बस हर कर्म एक कर्म भर है, जिसे अगर करना तो बस कर डालना है। शर्त्त केवल इतनी कि उसमें हम लिप्त न हों या वह हम में लिप्त न हो जाए। अपच पैदा करनेवाली बात थी यह, यद्यपि कि सच बात थी और पूर्व से चली आ रही एक विचारधारा, एक चिन्तन परम्परा से समर्थित भी थी। यह बात बाद में भी अपच पैदा करती रही, इसीलिए तो इसकी व्याख्या कर ली गई। भारत की वह कृति गीता ही है, जिसकी सबसे अधिक टीकाएँ दुनिया कि विभिन्न भाषाओं में, भारत के विभिन्न सम्प्रदायों में लिखी गइ। गीता मंदिर के प्रवेशद्वार पर टंगी घंटी हो गई, जिसे हर प्रवेशार्थी एक बार जरूर बजा दिया करता है। गीता का निहितार्थ समझने में भारी भूलचूकें भी इसी कारण से हुई और इस देश को इसका खामियाजा भुगतना पड़ा।

गीताकार ने जो पक्ष धारण किया था, वह उस जमाने का सर्वस्वीकृत पक्ष नहीं था, यह मुख्यधारा भी नहीं थी। कृष्ण का यह संदेश उस काल के धर्मात्माओं को नहीं पच सकता था कि ज्ञानी अगर है अर्जुन तो वह वेखटके हथियार चलाए, क्योंकि इस सृष्टि में न कोई सुकर्म होता है न कुकर्म, बस हर...एक कर्म भर है, जिसे अगर करना तो बस कर डालना है। शर्त्त केवल इतनी कि उसमें हम लिप्त न हो या वह हम में लिप्त न हो जाए। अपच पैदा करनेवाली बात थी यह, यद्यपि कि सच बात थी और पूर्व से चली आ रही एक विचारधार, एक चिन्तन परम्परा से समर्थित भी थी। यह बात बाद में भी अपच पैदा करती रही, इसीलिए तो इसकी ठीकान्दर-टीकाएँ भी हुई।

मण्डन मिश्र इसी विचार परम्परा के एक अग्रणी तत्त्वद्रष्टा थे। 'कर्मणैव ही संसिद्धि' का संस्कार उन्होंने विरासत में पाया था। उनके चतुर्दिक का जो समाज था, उसने कर्म की कुशलता को ही योग की कसौटी मान रखी थी। 'ब्रह्म' के लिए 'कर्म' या 'धर्म' का त्याग उस समाज में आवश्यक नही माना जाता था। जिसने 'धर्म' को त्यागकर 'ब्रह्म' को पाया उसके लिए भी भरपूर आदर और श्रद्धा समाज के मन में थी, लेकिन वह समाज का आदर्श

नहीं था। समाज के आदर्श की कसौटी अगर कोई थे, तो वे जनक और याज्ञवल्यव थे, जिन्होंने कर्म' और 'ब्रह्म' को साथ-साथ साधा था। वहाँ 'त्याग' ऊपर से लादने की चीज नहीं था। वहाँ तांत्रिक चक्रपूजन और वेदान्तीय अद्वैत चिन्तन साथ-साथ चल सकता था। वह मिथिला का समाज था, जो उत्तर वैदिक काल से ही भारत भूमि के वैचारिक आयाम को क्रान्तिकारिता और लोकपक्षधरता का प्रस्फुटन देता आया था।

शङ्कराचार्य के इस सिद्धान्त का कि ब्रह्म चिन्तन के लिए 'धर्म' एक प्रमु बाधा है, खण्डन करते हुए मण्डन मिश्र ने एक अनूठा दृष्टान्त दिया है। वे कहते है कि यदि किसी को पास के गाँव का सफर करना हो तो वह पैदल भी जाकर पहुँच ही सकता है, लेकिन यदि वह घोड़े पर चढ़कर जाए तो कम समय में पहुँच सकता है और आराम से पहुँच सकता है। अब 'धर्म' कह लीजिए या 'कर्म', वह यही घोड़ा है। मण्डन की स्थपना में पूर्ण सकार(Total Negative) नहीं है, वह हो भी नहीं से विद्वानों का सिर फौड़ डालनेवाले 'पण्डितपछाड़' हैं। बड़ी गम्भीरता से वे स्वीकार करते हैं कि धर्म को त्यागकर ब्रह्म तक पहुँचा जा सकता है, हजारों उदाहरण रहे होंने उनके पास बुद्धपुरुषों के, उनके प्रति आस्था रही होगी उनके भीतर, जो कि उनके जैसे बुद्धपुरुष से उचित ही आशा की जाएगी। लेकिन इस स्वीकारोक्ति के बावजूद इतनी स्पष्टतापूर्वक और इतने उद्दाम आत्मविश्वासपूर्वक वे कैसे सके कि ब्रह्मपथ के गनतुकों के लिए 'कर्म' घोड़ा है। संन्यासी भी पहुँचेगा, लेकिन गृहस्थ उससे पहले पहुँचेगा। केवल इतना ही नहीं कि संन्यासी पहुँचेगा तो गृहस्था भी पहुँचेगा, बल्कि यह भी कि संन्यास धारण कर लेना कोई निर्णयक स्थिति नहीं है। असल बात है कर्म की अलिप्तता। सन्यासी का ही अलिप्त या निर्लिप्त होना क्या सवयंद्धि है?

जितना प्रबल आत्मविश्वास मुझे मण्डन मिश्र में दिखाई देता है, यह जमीने पकड़ के अतिरिक्त और कही से नहीं आ सकती। वे जनता के साथ थे, हवा में नहीं थे। समाज ने उन्हें यह अनुभूति और अनुभव दिए थे। ध र्म का लोकपक्ष उनके चिन्तन का केन्द्रबिन्दु था। धर्म की सत्ता वह मठाध ीशों को सौंपना श्रेयस्कर नहीं मानते थे। उन्हें तो हमेशा ही लगता होगा कि जोगियों का ज्यादा होना स्वयं मठ को ही उजाड़ बना डालेगा। वह जीवन के बीच रहकर चेतना की अनुभूति के उद्गाता थे। अपनी ही चेतना

का आत्मबोध हमें हो, इसके लिए उन्हें बिचौलिए की भूमिका स्वीकार नहीं थी।

अब इस झगड़े में मौका पाकर बिचौलिए यदि उनकी हत्या कर दे तो क्या करें?

मण्डन मिश्रः जनश्रुतिक परिप्रेक्ष्यमे

—भवनाथ झा

(जँ जनश्रुतिएक परिप्रेक्ष्य मे मण्डनक चेहरा देखल जाय त' तैआ माधवाचार्यकृत 'शङ्कर दिग्विजय'क निष्कर्ष खण्डित भ' जाइछ। जँ अयाथार्थ जनश्रुति अछि तँ यथार्थो जनश्रुतिक अस्तित्त्व मण्डन जीवन आ दर्शनक वैज्ञानिकता प्रतिपादित करैत अछि। जनश्रुतिक यथार्थ— अंश सँ अयथार्थ-जनश्रुति केँ खण्डित करबाक सु-प्रयास केलनि अछि युवा-विश्लेषक भवनाथ झा— सम्पादक)

ज्ञान आ कर्म मानव जीवनक दू टा पक्ष थिक जाहि दुनूक आधार पर दर्शनशास्त्र मे पूर्व मीमांसा आ उत्तर मीमांसाक आविर्भाव भेल। केवल ज्ञानहि सँ मुक्ति प्राप्तिक सिद्धान्त पूर्व मीमांसाक लोकनिक मिश्र' उपाधि एही ज्ञान आ कर्मक मिश्रणक संकेत दैत अछि।

मिथिलामे मण्डन मिश्र एहने समन्वयवादी दार्शनिक छलाह। ओ एक दिस विधि विवेक अंलिखलनि तँ दोसर दिस ब्रह्मसिद्धिमे शङ्कराचार्यक मतक खण्डन कएने छथि। ई शास्त्रीय खण्डन मण्डन प्रत्यक्ष शास्त्रार्थक रूपमे जनश्रुतिक रूपमे प्रचलित भऽ जेबाक सम्भावना निर्मूल नहि अछि। एहीमे सँ एकटा जनश्रुति मिथिलाक वनगाँव महिसी सँ सम्बन्ध रखैत अछि तँ दोसर मध्यप्रदेश सँ। तेसर जनश्रुति कश्मीर मे सेहो प्रचलित अछि।

संस्कृतक मुक्त काथ्यक परम्परामे प्रसिद्ध अनरूकशतक काव्यक एक टीकाकार रविचन्द्र एकटा जनश्रुतिक चर्चा करैत छथि जे शङ्कराचार्य एक बेर दिग्विजय करवा लेल कश्मीर गेलाह। ओतए शारदा सदन मे सभ्यलोकनि शृअंर रसक वर्णन करबाक लेल कहलथिन। तखन ओ परकाया प्रवेशक द्वारा अमरूक नामक राजाक शरीरमे प्रवेश कए कामशास्त्रक ज्ञान प्राप्त कएल। पुनः ओतए जा क' शृअंगरक वर्णन कएलनि तँ सभ हँसए लागल जे ई ढोंगी ब्रह्मचारी थिकाह। तखन ओ अमरूकशतक मे शान्त रसक प्रतिपादन करैत ओकर व्यख्या प्रस्तुत कएल। शङ्कराचार्यक द्वारा परकाया प्रवेश क' एहने जनश्रुति शङ्कर दिग्विजय मे वर्णित अछि जतए

मण्डन मिरक पत्नी शङ्कराचार्य सँ पुछलथिन जे—

कलाः कियत्यो वद पुष्पधन्वनः
किमामित्मकाः किंच पदं समाश्रिताः
पूर्वे च पक्षे कथमन्यथा स्थितिः
क्थं युवत्यां कथमेव परूषे।

एहिपर शङ्कराचार्य चुप भए एक मासक समय मौगि गगन मार्ग सँ घुमि गेलाह। मार्गमे एकटा जंगल मे अमरूक नामक राजा केँ मृत देखि हुनक शरीर मे प्रवेश कए राजधानी गेलाह आ ओतए शृंगारक सभटा ज्ञान प्राप्त कएल तथा वात्स्यायन कामसूत्रक अनुसार कोनो काव्यक निर्माण कएल। जनश्रुतिक आधार पर एहि काव्य निर्माण केँ अमरूकशतक सँ जोड़ि देल गेल।

एतावता शङ्कराचार्यक दिग्विजय केँ अनेक ठाम रूपमे जनश्रुति तोड़ि मरोड़ि केँ स्थाति देलक, एहि जनश्रुति सभ केँ ऐतिहासिक प्रमाण मानि कोनो निर्णय नहि लेल जा सकैत अछि।

एतवे नहि, श्ङ्कर दिग्विजयक सोलहम सर्ग मे शङ्कराचार्यक कश्मीर यात्राक वर्णन सेहो अछि जतऽ 'शारदा सदन' मे भेल शास्त्रार्थक चर्चा अछि। शारदा आ भारती दुनू सरस्वतीक पर्याय थिक। एहू सँ स्पष्ट होइछ जे मिथिलाक मण्डन मिश्रक संग शङ्कराचार्यक शास्त्रार्थक गप्प सभटा....थिक आ ओकरहि आधार पर माधवाचार्य शङ्कर दिग्विजय लिखलनि। शर दिग्विजय मे वर्णित ऐतिहासिक वस्तुक तुलना बल्लाल सेनक भोज प्रबन्ध काव्य सँ कएल जा सकैत अछि जाहि मे कालिदास, वाणभट्ट, भवभूति आदि संस्कृतक कवि लोकनि केँ सभकालिक मानि हुनका लोकनिक बीच काव्य प्रतियोगिताक वर्णन कएल गेल अछि। शङ्कर दिग्विजयमे आएल व्यक्ति सभ अपन-अपन दार्शनिक सिद्धान्तक प्रतीक बुझि पड़ैत छथि जकर दार्शनिक महत्व भलेँ हो, ऐतिहासिक महत्व नहि अछि।

शङ्कराचार्यक सम्बन्ध मे एक प्रकारक जनश्रुतिक चर्चा तँ ऊपर कए चुकल छी, दोसर जनश्रुतिक अनुसार मण्डन मिश्र पराजित भए शङ्करक शिष्य बनि संन्यास ग्रहण कएलनि आ शृङेरी मठक पहिल मठाधीश भए सुरेश्वराचार्यक नामे विख्यात भेलाह जनिक समाधि आइयो ओतए अछि। नहिष्कर्म्य सिद्धिक भूमिका मे पं. सुब्रह्मण्यम शास्त्री एकरा प्रामाणिक मानैत

छथि।

एहि तरहेँ जनश्रुतियो मे परस्पर विरोधे अछि। दुनू जनश्रुतिक तुलना कएला पर स्पष्ट तुलना कएला पर स्पष्ट होइत अछि जे शारदा अथवा भारती द्वारा कामशास्त्र विषयक प्रश्नक उपस्थापन पर शङ्कराचार्यक दुर्गतिक जनश्रुति गार्हस्थ जीवनक पृष्ठसेवी व्यक्ति द्वारा गढ़ल गेल आ मण्डनक पराजयक जनश्रुति संन्यास केँ महिमामण्डित कएनिहार लोकक द्वारा गढ़ल गेल। एहि दुनूक नायक शङ्कराचार्य थिकाह जनिक दुर्गति आ उद्गतिक कथा जनुश्रुति सभ मे आएल। मण्डन मिश्र तँ आपततः एहि मे घेरा गेल अछि।

जँ एहि दोसर जनुश्रुति केँ एक मानल जाए तँ मण्डन मिश्र आ सुरेश्वराचार्यक बीच अभेद मानए पड़त। तखन कतेक ठाम सिद्धान्त असगति आबि जाएत। एक तँ सुरेश्वरक गार्हस्थावक नाम विश्वरूप भेटैत अछि, आनन्दानुभव नाम एक आचार्य लिखैत छथि—

ई स्पष्ट प्रमाण अछि जे सुरेश्वराचार्यक पूर्व नाम विश्वरूप भट्ट छल नहि कि मण्डन मिश्र।

एहि तरहेँ मण्डन मिश्र-भारती-शारदा-शङ्कराचार्य-सुरेश्वर-विश्वरूप सभ सँ सम्बद्ध जनश्रुति आ ओकरे आधारपर लिखल गेल प्रतीकात्मक दार्शनिक ग्रन्थ शङ्कर-दिग्विजयकेँ प्रामाणिक मानि किछु इदमित्थम् कहल नहि जा सकैछ।

शङ्कर दिग्विजय काव्य चौदहम शताब्दीक रचना थिक। एकर प्रणेता विद्यारण्य माधवाचार्य शृंअंगेरी मठक छाब्बीसम मठाधीश भेलाह। करीब छः सय वर्ष प्राचीन घटनाक सम्बन्ध मे हुनक दृष्टि कतेक ऐतिहासिक रहल होएतनि से विचारणीय अछि। मुदा माधवाचार्यक दार्शनिक दृष्टि कतहु संदेहास्पद नहि। शङ्कर दिग्विजय मे जाहि मण्डन मिश्रक सिद्धान्तकेँ उपस्थापित कएलनि अछि जे ओ द्वैतवादी दार्शनिक थिकाह ब्रह्मसिद्धिकार अद्वैतवादी दार्शनिक नहि। अतः ईहो भए सकैछ जे ई शास्त्रार्थ कोनो दोसर मण्डन मिश्र संग भेल हो।

मिथिलाक मण्डन मिश्र जाहि कर्मकाण्ड आ ज्ञानकाण्डक समर्थन कएलनि, सन्यास आश्रम मे जाहि त्रिदण्ड संन्यासक समर्थन कएलनि जाहिमे कर्मकाण्ड (यज्ञ, पूजन आदि) क सर्वथा लोप नहि होइछ ओकर अनुसरण वाचस्पति मिश्र आदि मैथिल विद्वान कएलनि तेँ दर्शनशास्त्रक परम्परामे प्रसिद्ध अछि वाचस्पतिमण्डन पृष्ठसेवी।

डॉ. सुरेश्वर झा
2-वी, रम्भा सदन, राजकुमारगंज, दरभंगा-846004

डा. जयकान्त मिश्र
1/1बी. सर पी.सी. बनर्जी रोड, इलाहाबाद-211002

डा. किशोर नाथ झा
प्रवाचक, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ
आजाद पार्क, इलाहाबाद-211002

सतीशचन्द्र झा
अरूणोदय अपार्टमेन्ट्स, 1-1-526/206, गाँधीनगर, हैदराबाद-5000080

नवीन चौधरी
बोटेनिकल सर्वे ऑफ इंडिया पी.-8 ब्रेबोर्न रोड, कलकत्ता-700001

डा. विनय विश्वबंधु
रेडक्रॉस रोड मधुबनी-847211

डॉ. वैद्यनाथ झा
नीलरत्न कुटीर, दामूचक आई.टी. ओ. क्वार्टर सँ पूर्व, मुजफ्फरपुर
ठाढ़ी, अन्धराठाढ़ी, मधुबनी-847311

आचार्य धीरज
धीरज अवबोध संस्थान, हटियागाछी, सहरसा-852201

डा. तारानन्द वियोगी
महिषी-852216, सहरसा

प्रो. अशोक कुमार झा
बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार।
भवनाथ झा
हटाढ़ रुपोली वाया-झंझारपुर, मधुबनी-847211